विज्ञान परिचर्चा

| त्रैमासिक पत्रिका | वर्ष 1, अंक 2 अक्टूबर-दिसंबर 2010 |

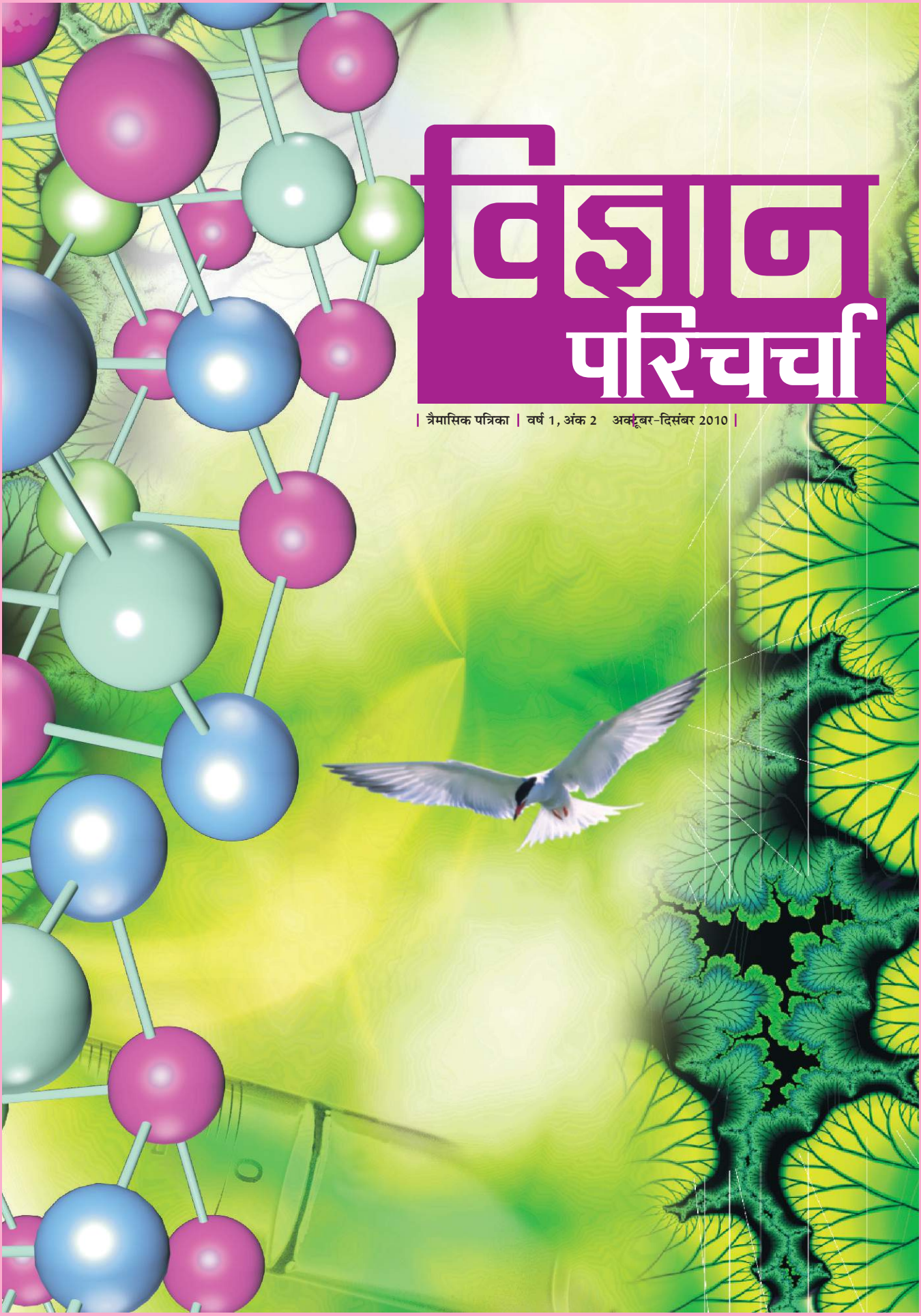

अधिशासी सम्पादक

देवी प्रसाद उनियाल,
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद्, (यूकॉस्ट)

प्रबन्ध सम्पादक

कमला पन्त,
अध्यक्ष, पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल)

प्रधान सम्पादक

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

सम्पादन सहयोग

शशिकान्त गुप्त
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

अजय कुमार बियानी
एसोशिएट प्रोफेसर,
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

नीलाम्बर पुनेठा
जिला समन्वयक, यू–कास्ट, पिथौरागढ़

अशोक कुमार पंत
राज्य समन्वयक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड

दिनेश चन्द्र शर्मा
ग्रा० व पोस्ट मस्वासी,
तहसील स्वार, रामपुर, (उ.प्र.)

सलाहकार मण्डल

प्रो. ए.एन. पुरोहित,
पूर्व कुलपति,
हेनब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, आलमी आँचल,
डोभालवाला, देहरादून

डॉ. राजेन्द्र डोभाल,
निदेशक,
उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद,
देहरादून

डॉ. एस.एस. नेगी,
निदेशक,
वन अनुसंधान संस्थान,
देहरादून

प्रो. एस.सी. सक्सेना,
निदेशक,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
रूड़की

डॉ. ए.के. गुप्ता,
निदेशक, वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान,
देहरादून

डॉ. मनोज पटेरिया,
निदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संचार परिषद्,
नई दिल्ली

श्री लीलाधर जगूड़ी,
सीताकुटीर, बदरीपुर,
देहरादून

डॉ. एम.ओ.गर्ग,
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान,
देहरादून

प्रो. धीरेन्द्र शर्मा,
निदेशक,
सेंटर फॉर साइंस पॉलिसी रिसर्च, निर्मल निलय,
भगवंतपुर, देहरादून

डॉ. रवि चोपड़ा,
पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट,
252, वसंत विहार, फेज–1,
देहरादून

डॉ. बी.एस. बिष्ट,
कुलपति,
जी.बी.पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
पन्तनगर

डॉ. जी.एस. रौतेला,
डी.जी.,
राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद्,
कोलिकाता

डॉ. डी.के. पाण्डे,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद,
नई दिल्ली

अनुज सिन्हा,
सलाहकार, विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
भारत सरकार

एल.एम.एस. पालनी,
निदेशक,
गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालय पर्यावरण
विकास संस्थान, कटारमल कोसी,
अल्मोड़ा

प्रो० रामसागर,
निदेशक,
आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान संस्थान,
नैनीताल

डा० जगदीश चन्द्र भट्ट,
निदेशक,
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
अल्मोड़ा

© vigyan pricharcha, 2010

प्रकाशकीय कार्यालय

मृत्युंजय धाम, 18, शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून–248001

फोन : 0135-2669236

मोबाइल : 09759348564, 09412047994, 09897020782, 09837862096

ईमेल : pahal_uttarakhand@yahoo.co.in

वेबसाइट : www.pahal_understanding.org

मुद्रक

एक्सप्रेशन प्रिन्ट एंड ग्राफिक्स
174 सुभाष नगर, देहरादून, 9219552563

विज्ञान परिचर्चा के लेखों में प्रकाशित सभी विचार लेखकों के अपने हैं तथा लेखकीय स्वतन्त्रता के अन्तर्गत व्यक्त किये गये हैं। उनके साथ सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना या उन विचारों का पत्रिका की नीति से कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।

विज्ञान परिचर्चा

त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 1, अंक 2
अक्टूबर-दिसंबर 2010

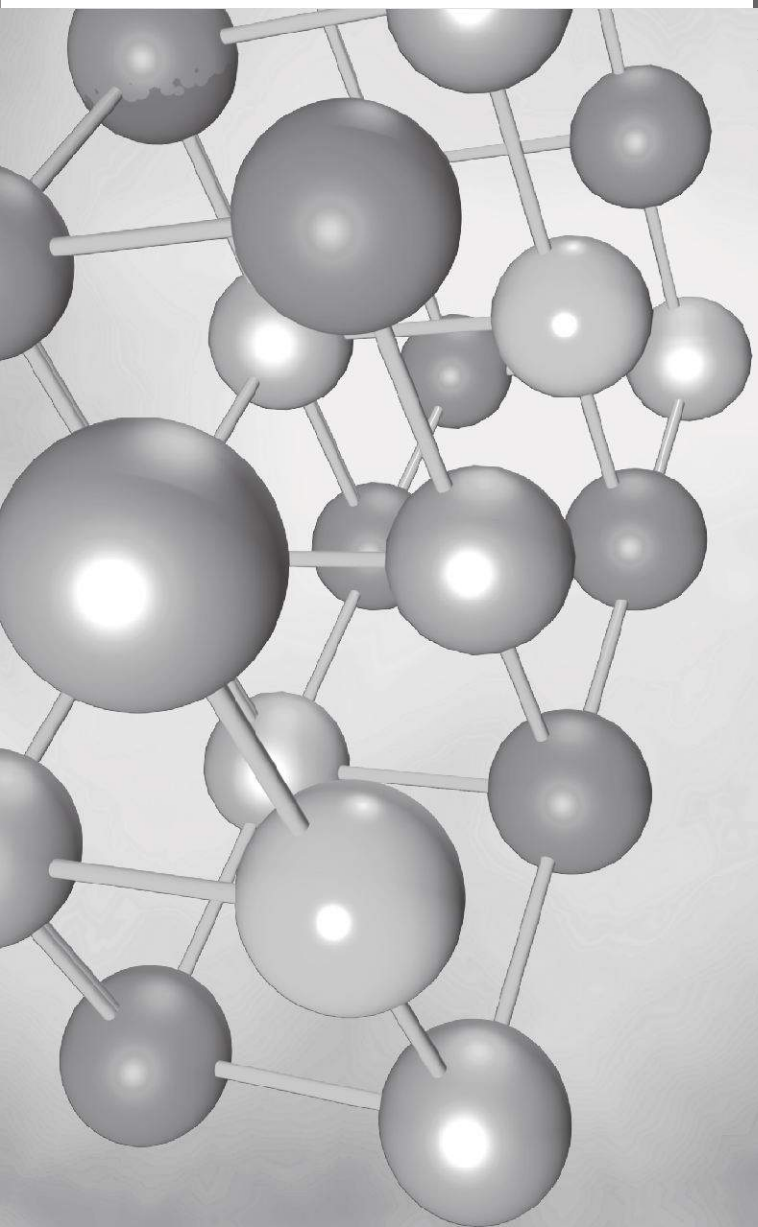

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल), भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) उत्तराखंड प्रभाग तथा उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका, अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् समाचार पत्रक– अक्तूबर से दिसंबर 2010

अनुक्रम

संपादकीय 05

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि – 2 – डॉ. विक्रम चन्द्र ठाकुर 06

विंध्य महासंघ की आयु एवं एक वैज्ञानिक का संघर्ष – मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी 10

विज्ञान के क्षेत्र में भी कुछ नया बताने वाले हर वैज्ञानिक को सतत संघर्ष करना पड़ता है। ऐसी ही एक वैज्ञानिक खोज का विवरण

पनडुब्बी को सन्देश – वी.एल.एफ. संचार प्रणाली – राजेन्द्र पाल 16

समुद्र के गहरे जल में सारे संसार से अलग–थलग पड़े नौसैनिक से संपर्क करने की तकनीक का संक्षिप्त परिचय

खतरनाक आकाशीय पिण्ड – इरफान ह्यूमन 19

आओ जाने खगोलीय भाषा – श्री राम वर्मा 20

आसमान को समझने के लिये कुछ मूलभूत बातें जाननी होती हैं

भारत की धरती की कहानी : मकराना संगमरमर की जबानी – अजय कुमार बियानी 22

कैसे बनी प्रायद्वीपीय भारत की धरती? एक रोचक इतिहास का वर्णन

हरित रसायन – रघुनन्दन प्रसाद चमोली 26

रासायनिक प्रक्रियाओं को हानिरहित बनाने के लिये किए जा रहे प्रयास

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग समाचार पत्रक 29

बिना पासपोर्ट के मेहमान – एस.के. गुप्ता 37

पहल गतिविधियाँ 46

विज्ञान के नये आयाम : रोजगार के नये अवसर – दीपाली राणा 50

परितन्त्र की कहानी : 2 – दिनेश चन्द्र शर्मा 55

सफल कुलपति की खोज – अशोक कुमार 56
एक व्यंग आलेख

मशरूम खेती के लाभ – बीना मौर्य 57

अपना विज्ञान ज्ञान बढ़ाइये : पक्षी परीक्षण – राहुल राणा 58

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान – 2 : वन अनुसंधान संस्थान 60

विज्ञान कविता – शिला – सागर संवाद – मुकुन्द जोशी 62

विज्ञान व्यंग चित्र 63

विज्ञान कविता – पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती – दिनेश चन्द्र शर्मा 63

विज्ञान वर्ग पहली – 2 64

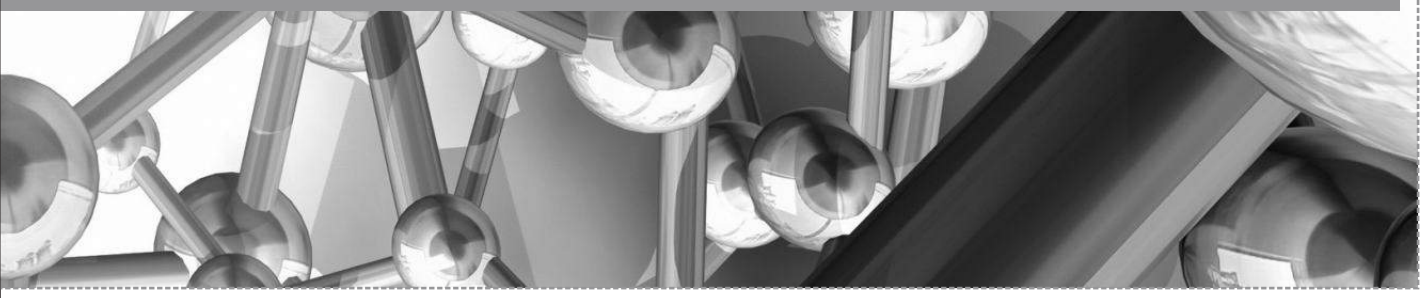

पाठकों की प्रतिक्रिया

आपका भेजा 'विज्ञान परिचर्चा' का अंक मिला। विज्ञान पर आधुनिक खोजों के बारे में काफी जानकारी उसमें है। जैसे समय मिलेगा मैं इस अंक के लिये लेख भेजने की कोशिश करुंगा।

जयंत नार्लीकर
अंतर विश्वविद्यालय केंद्र : खगोलविज्ञान और खगोल भौतिकी

मैंने आपकी पत्रिका 'विज्ञान परिचर्चा' देखी, यह बहुत सुन्दर पत्रिका है। जिसमें विज्ञान के विभिन्न विषयों को बड़े अच्छे ढंग से कवर किया गया है। अपना विज्ञान ज्ञान बढाइये, विज्ञान वर्ग पहेली जैसे स्तम्भों से विद्यार्थियों की विज्ञान के प्रति दिलचस्पी बढ़ती है। पत्रिका विज्ञान के अनेक विषयों – संचार, चिकित्सा, जैव विविधता, वृक्ष विज्ञान, षिक्षण, पर्यावरण इत्यादि को रोचक तरीके से प्रस्तुत करती है। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार की वैज्ञानिक पत्रिकायें विज्ञान को फेलाने में काफी मददगार साबित हो सकती हैं। मैं पत्रिका की सफलता की कामना करता हूँ।

कालीषंकर, वरिष्ठ वैज्ञानिक
इण्डियन स्पेस रिसर्च आर्गनाइजेषन, भारत सरकार

''विज्ञान परिचर्चा'' का प्रवेशांक प्राप्त हुआ। हिंदी में इतना उत्कृष्ट प्रकाशन देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। सम्पादक मण्डल को उनके अथक परिश्रम तथा सराहनीय प्रयास के लिए हार्दिक बधाई। विभिन्न विषयों पर वैज्ञानिकों और विश्वविद्यालय के प्रोफसरों के लेख ज्ञानवर्धक थे। आशा है भविष्य में युवा वैज्ञानिकों और महाविद्यालयों के विद्यार्थियों के लेख भी ''विज्ञान परिचर्चा'' में देखने को मिलेंगे। पुनः शुभकामनायें और बधाई।

गोपाल कृष्ण शर्मा, पूर्व सह निदेशक (वैज्ञानिक 'जी'),
आई.आर.डी.ई. (डी.आर.डी.ओ), देहरादून

विज्ञान परिचर्चा का प्रवेशांक देखकर, एक उम्मीद बन रही है कि यह विज्ञान पत्रकारिता मे मानक बन सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय भापदण्डों के अनुसार, निकली पत्रिका भविष्य मे काफी अधिक उन्नति करेंगी, ऐसा विश्वास है। पत्रिका के प्रकाशन के लिए बधाई।

डा0 रूपेश कुमार, भौतिकी विभाग,
डी0बी0एस0 कॉलेज, देहरादून

यह पत्रिका सभी अर्थों मे समृद्ध है – रुप सज्जा में, भाषा में, विषय वैविध्य में, विषय–प्रवर्तन में और अभिव्यक्ति में। संपादक मंडल को बधाइयाँ। भारत में अनूठी।

एअर वाइस मार्शल (से.नि.), विश्व मोहन तिवारी, बाल विकास भारती

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड–2010 के आयोजन के अवसर पर 'पहल' संस्था के सौजन्य से अप्रत्याशित रूप से प्राप्त त्रैमासिक विज्ञान परिचर्चा प्रवेशांक पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उत्तराखण्ड जैसे नवोदित राज्य में विशेषतः हमारे विद्यालयों में इस प्रकार की विभिन्न वैज्ञानिक जानकारियों के लिए स्तरीय पत्रिकाओं की आवश्यकता महसूस की जाती रही है। संसाधनों की कमी के होते हुए भी इस पत्रिका में उद्घृत **''कार्य सफल होता है निश्चय से, साधन अनिवार्य नहीं''** को सम्पादक मण्डल ने चरितार्थ कर दिखाया है। पत्रिका में दी गई आधुनिकतम जानकारियां, लब्ध प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों द्वारा लिखे गये लेख, उनकी जीवनी आदि पाठ्यवस्तु शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी। विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिरुचि पैदा करने तथा अपनी वैज्ञानिक क्षमताओं को उजागर करने के लिए मील का पत्थर साबित होगी। मैं समझता हूँ पत्रिका हमारे विद्यालयों के पुस्तकालय/वाचनालयों हेतु एक नियमित पत्रिका के रूप में लगाई जानी अत्यन्त हितकारी सिद्ध होगी। इस अद्भुत अनुकरणीय श्रम साध्य कार्य हेतु सम्पादक मण्डल को साधुवाद इस कामना के साथ कि उनकी लेखनी इसी प्रकार सुप्रवाहित होती रहे।

प्रमोद कुमार पाण्डेय, प्रधानाचार्य
रा0 इ0 का0 पीपलकोट, पिथौरागढ़

दिल्ली से चेन्नई के सफर में आपसे लेकर विज्ञान परिचर्चा लगभग हम सभी 16 बाल वैज्ञानिकों ने पढ़ी। इतनी अच्छी लगी कि आपको वापस करने का मन नहीं था। क्या हम सभी बाल वैज्ञानिकों को इसका मेम्बर नहीं बनाया जा सकता? बनाया जा सकता हो तो जरुर बनायें। हम आभारी रहेंगे।

सार्थक सक्सेना, कक्षा–12
उदय राणा इण्टर कालेज, काशीपुर

"विज्ञान परिचर्चा" के प्रवेशांक देखने का मुझे अवसर मिला। लगा कि जन सामान्य तक विज्ञान की अनुगूंज पहुंचाने, सार्थक वैज्ञानिक सोच विकसित करने तथा तकनीकी विलष्टताओं के संस्पर्श से परे रहे विज्ञान की विविध विधाओं में अधुनातन उपलब्धियों की सरल तथा बोधगम्य प्रस्तुति का नवोन्मेष लिये साहित्य–क्षितिज पर एक स्तरीय पत्रिका का उदय हुआ है। पत्रिका के सम्पादकीय में सन्निहित संदेश, सरोकार और इसके सौन्दर्य–बोध से परिचित होते ही प्रथम दृष्टि में ही पत्रिका से प्रेम की अनुभूति हो गई। मुझे विश्वास ही कि यह पत्रिका, निःसंदेह विद्वानों के चित्त के लिए वैचारिक विश्रांति की सदानीरा भागीरथी तथा विद्यार्थियों एवम् जन सामान्य के मन हेतु आनंद की नवल रस–गागरी सिद्ध होने के साथ ही लोकप्रिय विज्ञान–लेख्न की प्रेरणा और प्रोत्साहन की प्रखर दीपशिक्षा भी बनेगी।

मेरा सुझाव है कि यदि विज्ञान के विविध विषयों से संबंधित सामान्य ज्ञान के प्रश्नों तथा सरल प्रयोगों के माध्यम से आधारभूत वैज्ञानिक सिद्धान्तों को समझाने का भी एक स्तम्भ इसमें जुड़ सके तो इसकी उपयोगिता में अभिवृद्धि होगी। स्थापित वैज्ञानिकों एवम् अनुसंधान रत विद्वानों के अतिरिक्त भी जो लोग विज्ञान लोकप्रियण से सकिय रूप से जुड़े हैं, उनके योगदान को भी पत्रिका में यथा आवश्यक स्मरण किया जायेगा, ऐसी मेरी आशा है।

आर0 सी0 पाण्डे
विभागाध्यक्ष, भौतिक विज्ञान (अवकाश प्राप्त)
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पिथौरागढ़,
पंचकुटी, चंद कॉटेज, जी0 आई0 सी0 मार्ग, पिथौरागढ़, (उत्तराखण्ड)

विज्ञान परिचर्चा के अवलोकन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। देश हित में जन जागरण एवं भविष्य निर्माण को दृष्टिगत करते हुए यह एक सराहनीय प्रयास है। इसके द्वारा वैज्ञानिकों के साथ–साथ छात्रों तक जानकारियों एवं प्रचार–प्रसार का अवसर प्राप्त होगा।

डा० सी० एस० चौबे (ऐसो० प्रोफेसर)
कुलभास्कर आश्रम पी० जी० कॉलेज, इलाहबाद

संपादकीय

विज्ञान परिचर्चा का द्वितीय पुष्प आपके सम्मुख प्रस्तुत है। इसके प्रवेशांक की जिस तरह सर्वत्र सराहना हुई उससे हमारा उत्साह द्विगुणित हो गया। हम यह जानते हैं कि इस सफलता का श्रेय हमारा जरा भी नहीं है। यदि अंक अच्छा बना तो उसका प्रमुख कारण उन विद्वान् लेखकों का सहयोग है जिन्होंने परिश्रमपूर्वक विविध विषयों से संबंधित रोचक, तथ्यपूर्ण तथा अपने उत्तम अध्ययन के फल से युक्त लेखों द्वारा उसे समृद्ध और सशक्त बनाया। केवल गंभीर विवेचनात्मक लेख ही नहीं, वरन् हास्य व्यंग पूर्ण लेखन, कविता, विद्यार्थियों के लिये उपयोगी सामग्री, सामान्य विज्ञान–ज्ञान, वर्ग पहेली जैसे साहित्य द्वारा अंक का श्रृंगार भी विभिन्न लेखन सहयोगियों के सद्प्रयत्नों से ही सम्भव हो सका। प्रत्येक अंक में उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि स्तम्भ में इस क्षेत्र में कार्यरत एक महान् वैज्ञानिक के परिचय के साथ–साथ उनसे प्रत्यक्ष साक्षात्कार कर विभिन्न विषयों पर उनके विचार भी पाठकों तक पहुंचाने का हमने निर्णय लिया तथा उसके अनुसार प्रथम अंक में प्रसिद्ध वनस्पति विज्ञानी प्रो. आदित्यनारायण पुरोहित से चर्चा प्रस्तुत की। इसी क्रम में इस अंक में भी एक विज्ञान ऋषि से भेंट वार्ता प्रकाशित की जा रही है। इसी प्रकार प्रत्येक अंक में हम उत्तराखण्ड के एक विज्ञान संस्थान का परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं। स्थापित लेखकों के साथ ही साथ युवा विज्ञान लेखकों की रचनाओं के लिये भी विज्ञान परिचर्चा एक मंच बने यह हमारी मनीषा है। राज्य की वैज्ञानिक गतिविधियों की जानकारी तो प्रत्येक अंक में होगी ही। उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी परिषद के क्रिया कलापों का विवरण तो परिचर्चा का एक अंग है ही।

इस प्रकार विज्ञान परिचर्चा को एक सर्वांग सुन्दर पत्रिका के रूप में विकसित करने का हमारा ध्येय है। परन्तु हम इसे केवल वैज्ञानिक जानकारी का संग्रह नहीं बनाना चाहते। हमारा उद्देश्य है समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो। किसी भी विषय पर सोचते समय हम बुद्धिनिष्ठ, तर्कपूर्ण दृष्टि से उस पर विचार कर सकें और उस विचार को निर्भयता के साथ व्यक्त कर सकें, भले ही वह विचार लोकप्रिय धारा के विपरीत ही क्यों न हो। प्राचीन काल से आज इकीसवीं शताब्दी तक हम मानव समाज को अंधविश्वासों से भरा हुआ पा रहे हैं। आज के युग को विज्ञान का युग कहने की परिपाटी है परन्तु वास्तव में आज का युग भले ही तकनीकी उन्नति का युग कह लिया जाय वैज्ञानिक दृष्टिकोण का युग अभी बनना शेष है। हम अंधविश्वासों के साथ ही जी रहे हैं। बिना तर्क के, बिना विचार के और बिना परीक्षा किये किसी के भी द्वारा कही गई किसी भी बात को स्वीकार कर लेना और उसी के अनुसार व्यवहार करने लगना अंधविश्वास है।

दुर्भाग्य से आज हमारे प्रसार माध्यम अंधविश्वासों का ही पोषण करते दिख रहे हैं। समाचार पत्र पत्रिकाओं के अंक और विशेषांक फलित ज्योतिष की भविष्यवाणियों, वास्तुशास्त्र, फेंग शुई जैसे विषयों से भरे मिलते हैं। दूरदर्शन के चैनलों पर भूत–प्रेत, जादू टोने के धारावाहिकों की भरमार है। बढ़ते अंधविश्वासों के कारण ही झूठे तांत्रिकों, मांत्रिकों, ज्योतिषियों, ढोंगी साधुओं, नकली संतों आदि का व्यापार फल फूल रहा है। कबीर जैसे आध्यात्मिक उपदेशकों ने इन सभी ढकोसलों पर जैसा कठोर प्रहार किया वैसा ही करने की आवश्यकता आज विज्ञान लेखकों के लिये है। देश के कई भागों मे अंधविश्वास निर्मूलन समितियाँ काम कर रही हैं। उनको परिपुष्ट कर समाज मे बुद्धिवादी विचारधारा का प्रचार प्रसार करना हम सभी विज्ञानवेत्ताओं का कर्तव्य है।

हमारा प्रयास होगा कि विज्ञान परिचर्चा के अंकों मे हम इस वैज्ञानिक चेतना का दीप प्रज्वलित करने वाले साहित्य का अधिकाधिक प्रकाशन करेंगे। विज्ञान लेखकों से भी हमारा साग्रह अनुरोध है कि इस दिशा में अपने विचारपूर्ण लेखन द्वारा समाज का प्रबोधन करने के लिये वे सदैव तत्पर रहें। अनेक पाठकों ने परिचर्चा के प्रवेशांक पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए इस बात पर आश्यर्च व्यक्त किया कि पत्रिका का मुद्रण इतने उच्च स्तर का क्यों हुआ है? ऐसी प्रतिक्रिया के पीछे सम्भवतः पाठकों की यह मान्यता हो सकती है कि यदि शासकीय अनुदान से कोई कार्य किया जाता है तो वह निम्न स्तर का ही होना चाहिये। पर यह सच नहीं है। यदि कार्य करने वाले व्यक्ति सही हों तो परिणाम भी अच्छे होंगे ही। हम यही कर रहे हैं।

हमारे सभी पाठकों, लेखकों तथा शुभ चिन्तकों को विज्ञान परिचर्चा की ओर से नवीन वर्ष के लिये हार्दिक मंगलकामना।

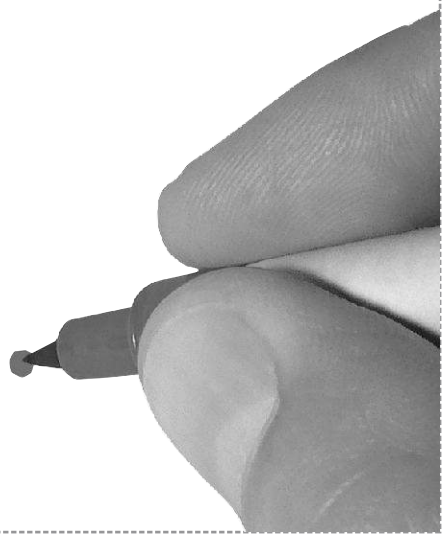

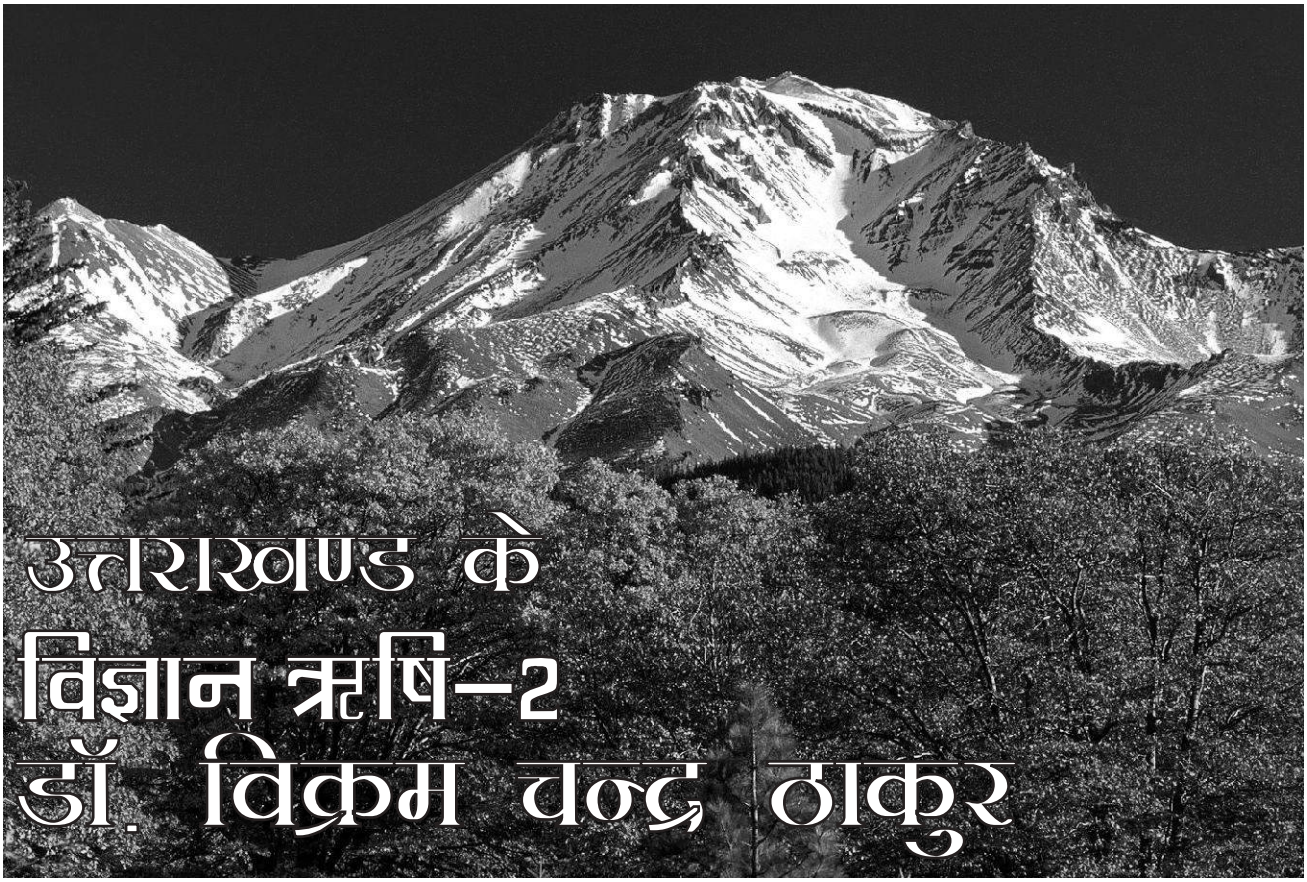

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि–2 डॉ. विक्रम चन्द्र ठाकुर

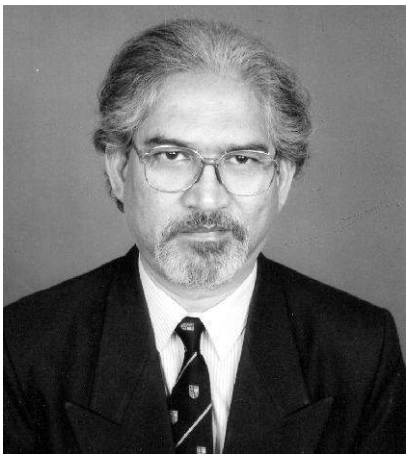

- **हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती,**
- **स्वयंप्रभा समुज्वला स्वतन्त्रता पुकारती,**
- **अमर्त्य वीर पुत्र हो दृढप्रतिज्ञ सोच लो,**
- **प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढे चलो**

हिन्दी साहित्य के महान् कवि जयशंकर प्रसाद की ये पंक्तियाँ हमें याद दिलाती हैं कि हिमालय पर्वत के उत्तुंग शिखर से माँ सरस्वती भारत भूमि के अपने पुत्रों को सतत उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा दे रही है। उस आव्हान से प्रेरित होकर इस देश का प्रत्येक सपूत काया, वाचा, मनसा ज्ञान विज्ञान के एक के बाद एक सोपानों को पार करता हुआ सृष्टि के रहस्यों को अधिक से अधिक गहराई तक भेदता हुआ, जानकारी की नई नई पर्तों को खोलता हुआ आगे, और आगे बढ़ता जा रहा है। स्वयं हिमालय पर्वत अपने में अनेक रहस्य संजोये हुए हैं। इसकी उत्पत्ति और विकास का अध्ययन एक अत्यन्त रोचक विषय है। हिमालय का इतिहास समझे बिना भारतभूमि का इतिहास समझना भी असम्भव है। हिमालय भूविज्ञान का यह क्षेत्र नितान्त जटिल परन्तु असीमित संभावनाओं से युक्त है। इसीलिये विज्ञान के क्षेत्र में हिमालय भूविज्ञानी को हमेशा आदर के साथ मान दिया जाता है। आज विश्व भर में हिमालय के भूविज्ञान के क्षेत्र में जो कुछ थोड़े शीर्ष वैज्ञानिक कार्यरत हैं उनमें इसी हिमालय की धरती के एक पुत्र डॉ0 विक्रम चन्द्र ठाकुर का नाम अत्यन्त सम्मान के साथ प्रथम पंक्ति में लिया जाता है।

डॉ0 ठाकुर का जन्म हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से कस्बे धर्मशाला में सन् 1940 में हुआ। प्रारम्भिक विद्यालयीय शिक्षा वहीं से प्राप्त कर आपने राजकीय महाविद्यालय, धर्मशाला से स्नातक उपाधि प्राप्त की। तदनन्तर पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ के भूविज्ञान के उच्च अध्ययन केन्द्र से आपने एमएस.सी. की उपाधि प्राप्त की। उसके बाद हिमाचल के शिक्षा विभाग में नियुक्त होकर तीन वर्ष तक चम्बा के महाविद्यालय में अध्यापन किया। परन्तु अनुसन्धान कार्य में अत्यन्त रुचि होने के कारण वे उस प्रकार के अवसर की खोज में रहे। अवसर मिला भी और वे उच्च अध्ययन के लिये इंग्लैण्ड चले गये। वहाँ उन्होंने एबर्डीन विश्वविद्यालय से मास्टर तथा बाद में इंपीरियल कॉलेज ऑफ सांइस एण्ड टेक्नोलॉजी, लंदन विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। पीएच.डी. के लिये आपके निर्देशक थे प्रख्यात संरचनात्मक भूविज्ञानी प्रो0 जॉर्ज रैम्से। संरचनात्मक भूविज्ञान (स्ट्रक्चरल जियॉलॉजी) भूविज्ञान की आत्मा है। पृथ्वी का इतिहास समझने की कुंजी है। पृथ्वी पर मानव को कुछ भी करना हो, पृथ्वी की संरचना को ठीक ठीक समझे बिना वह एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा सकता। इस संरचनात्मक भूविज्ञान विषय का भी विकास हुआ है। परंपरागत विषय के स्थान पर इसे आज

एक अत्यन्त विकसित आधुनिक रूप मिला है। विषय के इस आधुनिक रूप के एक मान्य शिल्पकार हैं प्रो0 रैम्से। उनके एक अत्यन्त सुयोग्य शिष्य के रूप में डॉ0 ठाकुर ने उस आधुनिकतम संरचनात्मक भूविज्ञान के अध्ययन से हिमालय की उत्पत्ति और विकास को समझा है। पीएच.डी. का उनका विषय तो था स्विट्जरलैण्ड के आल्प्स पर्वत के पेनाइन क्षेत्र का अध्ययन। आल्प्स के उस अध्ययन की आधारशिला पर ही हिमालय के रहस्यों को वे सुलझा सके हैं।

भारत में लौटने के बाद सन् 1971 में वे वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान (वाड़िया इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियॉलॉजी) में वैज्ञानिक के पद पर नियुक्त हुए। तब से सन् 2000 में सेवा निवृत्त होने तक वे इसी संस्थान के साथ जुड़े रहे और इस प्रकार संस्थान की उन्नति के वे एक प्रमुख स्तम्भ एवं साक्षी हैं। सेवानिवृत्त होने के बाद भी उनका अनुसन्धान कार्य जारी है और वे वाड़िया संस्थान में ही सम्मानित वैज्ञानिक (एमेरिटस साइंटिस्ट) के रूप में अभी भी कार्यरत हैं।

हिमालय में ठाकुर ने हर क्षेत्र में कार्य किया है। अतिशयोक्ति किये बिना हम यह कह सकते हैं कि हिमालय का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जहाँ उनके कदम न पड़े हों, कोई ऐसा पत्थर नहीं जो उनकी खोजी नजर से बचा हो और कोई ऐसी संरचना नहीं जिसकी नाप जोख उन्होंने न की हो। लद्दाख, कराकोरम, जांस्कर, लाहौल–स्पिति, गढ़वाल, कुमाऊँ, नेपाल, सिक्किम, दार्जीलिंग, अरुणाचल प्रदेश ही नहीं पाकिस्तान और तिब्बती क्षेत्रों का भी उन्होंने अध्ययन तथा मानचित्रण किया है। वे हिमालय के दुर्गम क्षेत्रों की अनेक यात्राओं पर गये हैं। हिमालय से परे मध्य एशिया के रेशम मार्ग की भी उन्होंने यात्रा की है। अपने तीन दशक से भी अधिक के इस सारे अध्ययन का निचोड़ उन्होंने अपनी पुस्तक 'जियॉलॉजी ऑफ वेस्टर्न हिमालय' तथा देश और विदेश की अनेक सम्मानित वैज्ञानिक पत्रकिाओं में प्रकाशित 100 से अधिक शोध पत्रों में समाहित कर दिया है।

अपने अध्ययन के फलस्वरुप उन्हें अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान स्वाभाविक रूप से ही प्राप्त हुए हैं। 'जर्नल ऑफ जियॉलॉजिकल सोसाइटी ऑफ अमेरिका' तथा 'ट्रांजेक्शन्स ऑफ रॉयल सोसाइटी ऑफ एडिनबरा' जैसी सम्मानित शोध पत्रिकाओं के सम्पादक मण्डल के वे सदस्य रहे। भारत में भी जियॉलॉजिकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया की कार्यकारिणी में रहे। वाड़िया संस्थान की पत्रिका हिमालयन जियॉलॉजी के तो वे सम्पादक रहे ही। वे अनेक अन्तर्राष्ट्रीय समितियों के सदस्य रहे। उदाहरणार्थ वे अमेरिकन जियोफिजिकल यूनियन के सदस्य हैं, आई.सी.एस.यू. के अन्तर्राष्ट्रीय लिथोस्फीयर कार्यक्रम की हिमालय क्षेत्रीय समन्वय समिति के वे अध्यक्ष रहे। वाशिंगटन में आयोजित 26वें तथा रियो डे जेनेरो में आयोजित 31वें इंटरनेशनल जियॉलॉजिकल कांग्रेस के वे संयोजक/सहसंयोजक थे। संयुक्त राज्य अमेरिका की एन.एस.एफ. प्रायोजित शोध परियोजनाओं से वे जुड़े। विश्व के अनेक मान्य वैज्ञानिकों के आग्रह पर वे आमन्त्रित वैज्ञानिक के रूप में अनेक शोध संस्थानों से सम्बद्ध हुए जिनमें जियोलॉजिकल इन्स्टीट्यूट, ई.टी.एच., जूरिच, स्विट्जरलैंड, जियोलॉजिकल इंस्टीट्यूट, एर्लांगेन, जर्मनी; जियोलॉजिकल इंस्टीट्यूट, मास्को तथा लेनिनग्राड, रूस; शिझोका तथा होक्काइडो विश्वविद्यालय, जापान; सेंटर फॉर पेट्रोलॉजी एण्ड मिनरालॉजी (सी.एन.आर. एस), नैन्सी, फ्रांस तथा ओरेगॉन स्टेट यूनिवर्सिटी, यू.एस.ए. मुख्य हैं। भारत में भी उन्हें अनेक महत्त्वपूर्ण सम्मान प्राप्त हुए हैं। भारत सरकार द्वारा उन्हें नेशनल मिनरल अवार्ड दिया गया। वे इंडियन अकेडेमी ऑफ साइंसेज के फेलो हैं। वर्ष 1994 में वे इंडियन साइंस कांग्रेस के अर्थ सिस्टम साइंस खण्ड के अध्यक्ष चुने गये। नगर की दून नागरिक परिषद ने उन्हें दून रत्न सम्मान से सम्मानित किया।

डॉ0 ठाकुर वर्ष 1990 से 2000 तक लगातार दस वर्ष वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान के निदेशक रहे। अपने कार्यकाल में उन्होंने इस संस्थान को विश्व के उच्च अनुसन्धान संस्थानों की श्रेणी में ला खड़ा कर दिया। संस्थान में आधुनिकतम शोध प्रयोगशालाएँ, सर्वोत्तम यन्त्र तथा उपकरण तथा सभी अधुनातन शोध सुविधाएँ जुटाने के लिये वे अथक प्रयासरत रहे। उन्होंने संस्थान को क्षेत्रीय विवर्तन, भूकम्प अध्ययन, हिमनद अध्ययन, जियोडेसी, भूस्खलन अध्ययन तथा प्राकृतिक संसाधन नियोजन के क्षेत्र में अग्रणी केन्द्र बना दिया। संस्थान की ओर से हिमालय के भूकम्पीय अध्ययन के लिये हिमाचल के कांगड़ा–चम्बा क्षेत्र में सीस्मोलॉजी तथा जी.पी.एस. केन्द्रों का एक ताना–बाना बुन दिया जहाँ से संस्थान अनवरत भूकंपीय आंकड़ें प्राप्त कर रहा है। गढ़वाल के ढोकरानी–बामक हिमनद क्षेत्र में एक लगभग स्थायी हिमनद अनुवेक्षण केन्द्र की स्थापना उन्हीं के प्रयत्नों से हुई। आज हिमालय के अध्ययन के क्षेत्र में वाड़िया संस्थान का जो स्थान तथा मान है उसमें डॉ0 ठाकुर का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

उत्तराखण्ड में कार्यरत रहते हुए अपना पूरा जीवन हिमालय के लिये समर्पित करने वाले डॉ0 ठाकुर निश्चय ही उत्तराखण्ड के एक महान् विज्ञान ऋषि हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। जीवन के बचपन के कुछ वर्ष छोड़ कर उनका पूरा समय देहरादून में बीता। इसलिये वे अपने को तन मन से उत्तराखण्ड का मानते हैं। विज्ञान परिचर्चा की ओर से सम्पादक डॉ0 मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी ने डॉ0 ठाकुर से भेंट कर उनसे अनेक विषयों पर चर्चा की। उस भेंटवार्ता के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

विज्ञान परिचर्चा : डॉ0 ठाकुर! हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से कस्बे में आपका प्रारम्भिक जीवन बीता। फिर आप भूविज्ञान विषय के अध्ययन के लिये कहाँ से प्रेरित हुए? विशेषकर इसलिये कि यह विषय 12वीं तक विद्यालयों में होता ही नहीं। बड़े बड़े शहरों के विद्यार्थी भी इस विषय से परिचित नहीं होते। फिर आप इस विषय में कैसे आये?

ठाकुर : मैं अपने को बहुत भाग्यशाली मानता हूँ कि मैं भूविज्ञान का विद्यार्थी बना। जब मैं पढ़ता था तब हिमाचल प्रदेश नहीं बना था। धर्मशाला क्षेत्र तब पंजाब का हिस्सा था। वहाँ पर एक गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज था। तत्कालीन पंजाब सरकार ने उस महाविद्यालय में भूविज्ञान विभाग प्रारम्भ किया। संयोग ऐसा कि जर्मनी में पढ़े हुए एक

भूवैज्ञानिक पद्मानभन् उस विभाग के अध्यक्ष बनाये गये। विभाग की इमारत भी बहुत शानदार थी। इन सब कारणों से उस विषय की ओर एक सहज स्वाभाविक आकर्षण उत्पन्न हो गया। दूसरे पहाड़ का ही रहिवासी होने के कारण सतत पहाड़ में पैदल घूमते हुए पहाड़ को जानने और समझने की एक ललक पैदा हुई थी। किसीने बताया कि इस विषय में पत्थरों के बारे में पढ़ाया जाता है। तो पत्थरों का प्रेम भी मुझे इस विषय की तरफ खींच लाया।

वि.प. : आपने धर्मशाला के राजकीय महाविद्यालय से बी.एससी. उपाधि प्राप्त की। फिर पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से एम.एससी. किया। फिर उच्च अध्ययन आपने इंग्लैण्ड में किया। भारत की शिक्षण पद्धति और इंग्लैण्ड की शिक्षण पद्धति में आपने क्या अन्तर पाया?

ठाकुर : जमीन–आसमान का अन्तर है। भारत में रटने–रटाने की पढ़ाई होती है। इंग्लैण्ड में विषय पर अधिक जोर दिया जाता है। यहाँ की परीक्षाओं में भी ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं जिनमें याद करने का बड़ा महत्त्व हो। उदाहरण के लिये शिवालिक शैलों में मिलने वाले जीवाश्मों के नाम लिखिये। अब जीवाश्मों के नामों की लंबी सूचियाँ तो पुस्तकों में लिखी ही है। उन्हें रट कर फिर परीक्षा में उगल आने का क्या लाभ? शिवालिक संघ वास्तव में है क्या, कैसे बना, यह तो जाना ही नहीं। ग्रेनिटाइजेशन मैंने यहाँ भी पढ़ा। उसके पक्ष और विपक्ष के मुद्दे लिखवा दिये गये थे, याद कर लिये। पर ग्रेनिटाइजेशन वास्तव में होता क्या है, ग्रेनाइट कन्ट्रोवर्सी वास्तव में क्या थी यह तो मैंने इंग्लैण्ड में जाने के बाद ही जाना। वहाँ पर मैंने कई कोर्सेज किये। कई क्लासेज में पढ़ा। वहाँ के अध्यापक विषय की बारीकियों को, समस्याओं को बहुत गहराई से समझने पर अधिक जोर देते हैं, आंकड़े याद करने पर नहीं।

वि.प. : तो भारत में आज वैज्ञानिकों के स्तर को विश्व के मापदण्ड पर तौलना हो तो उसे कहाँ रखेंगे?

ठाकुर : भारत में कम से कम भूविज्ञान के क्षेत्र में तो मैं यह कह सकता हूँ कि मध्यम स्तर के सागर में यदा कदा थोड़े से प्रतिभा के द्वीप मिल जाते हैं। मेरी अन्य विज्ञान विषयों के विद्वानों से चर्चा होती है और सभी का यह मत है कि यही स्थिति हर जगह है। आज प्रतिभाशाली युवक या युवती वैज्ञानिक बनने आते ही कहाँ है? सब इंजीनियर या डॉक्टर बनने के लिये दौड़ रहे हैं। विज्ञान की तरफ रुझान कम है। उसमें भी पीएच.डी. तक केवल वे ही आते हैं जिनको कहीं और कोई ठौर ठिकाना नहीं मिलता। इसलिये सामान्य स्तर की बहुलता है।

वि.प. : परन्तु ऐसा तो विदेशों में भी होता ही होगा। वहाँ पर भी सारे प्रतिभाशाली ही होते हों ऐसा तो नहीं होगा। सामान्य व्यक्ति वहाँ भी वैज्ञानिक बनते ही होंगे।

ठाकुर : नहीं, वहाँ ऐसा बहुत कम होता है। वहाँ शोध के क्षेत्र में केवल वे ही आते हैं जिनमें उसकी लगन होती है। हर तरफ हाथ पैर मारते रहने की प्रवृत्ति जैसी यहाँ है वैसी यूरोप–अमेरिका में नहीं देखने को मिलती।

वि.प. : हमारी शिक्षा पद्धति में हम और किन सुधारों की अपेक्षा कर सकते हैं?

ठाकुर : भाषा का बड़ा महत्त्व है। विज्ञान की पढ़ाई या तो मातृभाषा में हो या फिर यदि अंग्रेजी में ही पढ़ाना है तो अंग्रेजी का स्तर उत्तम हो। आज अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों को तो भाषा का लाभ मिलता है परन्तु अपनी अपनी भाषाओं में विज्ञान पढ़े विद्यार्थी को अंग्रेजी में उच्च अध्ययन करने में बहुत कठिनाई होती है। मैं यहाँ चीन का उदाहारण देना चाहूँगा। 1980 में मैंने देखा था कि विज्ञान के क्षेत्र में चीन हमसे बहुत पीछे था। पर आज वह बात नहीं रही। उन्होंने आधुनिकतम सारा ज्ञान चीनी भाषा में ला दिया है। आज चीनी भाषा में पढ़े हुए वहाँ के वैज्ञानिक हमसे बहुत आगे निकल गये हैं। हम यहाँ भी हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में वैसा कर सकते हैं।

वि.प. : डॉ0 ठाकुर आप प्रारम्भ से ही वाड़िया हिमालय संस्थान से जुड़े हैं। आप और यह संस्थान साथ साथ बढ़े हैं। इस काल को आप कैसे देखते हैं?

ठाकुर : हिमालय के उच्च भूवैज्ञानिक अध्ययन के लिये इस संस्थान की स्थापना हुई। दिल्ली विश्वविद्यालय के भूविज्ञान विभागाध्यक्ष प्रो0 अनंत गोपाल झिंगरन इसके प्रथम अवैतनिक निदेशक थे। विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभाग के दो कमरों में संस्थान का प्रारम्भ हुआ। उस समय खड्ग सिंह वल्दिया वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी थे। मैं, डॉ0 ए.के. जैन (बाद में आइ.आइ.टी रुड़की में प्राध्यापक), डॉ0 एस.के. टण्डन (बाद में दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापक), डॉ0 एस.के. शाह (बाद में जम्मू विश्वविद्यालय में प्राध्यापक) आदि कुछ लोग वैज्ञानिक पद पर नियुक्त हुए। कुछ समय पश्चात् डॉ0 ए. के. नन्दा भी आ गये। उस समय संस्थान का स्वरुप वैसा नहीं था जैसा आज है। झिंगरन साहब की कल्पना थी कि शोध और अनुसन्धान अलग अलग विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों के निर्देशन में वहाँ के विद्यार्थियों से कराया जाये। वाड़िया संस्थान उन्हें अनुदान दे और उनके कार्यों का समन्वयन करे। प्रारम्भ में ऐसे काम हुआ भी। विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक तथा संस्थान के वैज्ञानिक मिल कर हिमालय के दुर्गम भागों की शैक्षणिक यात्राओं पर भी जाते थे। मैं स्वयं अरुणाचल हिमालय में ऐसी शोध यात्रा पर गया था। तब संस्थान शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत था। बाद में सरकार ने इसे विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग को दे दिया। अब कार्य का स्वरूप बदला। यह निर्णय हुआ कि संस्थान दिल्ली में न रह कर हिमालय के पास कहीं ले जाया जाये। देहरादून का स्थान पसन्द किया गया तथा सन् 1976 में संस्थान देहरादून में आ गया। फिर अनेक नियुक्तियाँ हुई। डॉ0 सतीश चन्द्र दास साह बीरबल साहनी इंस्टीट्यूट ऑफ पैलियोबॉटनी में थे, वे वाड़िया संस्थान के निदेशक बन कर आये। प्रो0 एस.पी. नौटियाल इसके प्रेसिडेंट बने और संस्थान एक अनुदान देने वाली संस्था के स्थान पर एक पूर्ण रूपेण अनुसन्धान केन्द्र के रूप में विकसित होने लगा। वैज्ञानिकों की संख्या बढ़ी। हिमालय के दुर्गम से दुर्गम सारे स्थानों के सभी अलग अलग पहलुओं से अध्ययन के लिये शोध यात्राएँ की जाने लगीं। प्रयोगशालाओं का विकास हुआ। आज यह संस्थान विश्व के किसी भी अन्य अनुसन्धान संस्थान की

टक्कर का केन्द्र बन गया है।

वि.प. : आप इस संस्थान के दस वर्ष तक निदेशक भी रहे। आपके अनुभव से बताइये कि एक वैज्ञानिक अनुसन्धान संस्था के प्रमुख में सफलता के लिये क्या गुण होने चाहिये?

ठाकुर : पहली बात तो यह कि वह अपने विषय का इतना ज्ञाता हो कि अन्य वैज्ञानिकों के आदर का पात्र बन सके। बहुत बड़ा अत्युच्च स्तर का वैज्ञानिक न भी हो तो भी यदि ज्ञान के क्षेत्र में कमजोर हुआ तो वह टिक नहीं सकता। दूसरे उसमें अधिकांश वैज्ञानिकों का सहयोग प्राप्त करने की क्षमता होनी चाहिये। सब प्रसन्न रहें यह तो कभी सम्भव नहीं होता परन्तु अधिकांश सन्तुष्ट होने चाहिये। तीसरे उसे सभी वैज्ञानिकों का प्रेरणास्रोत होना चाहिये। जो अच्छा काम करे उनकी प्रशंसा और जो कम पड़ते हों उनका उत्साहवर्धन करना आवश्यक है। चौथे उसे यह देखना चाहिये कि प्रशासन वैज्ञानिकों पर हावी न होने पाये। प्रशासनिक नियम और कार्यप्रणाली वैज्ञानिकों की सुविधा के लिये हैं उनके काम में अडंगे लगाने के लिये नहीं। पाँचवें उसमें दृष्टि होनी चाहिये। अपने संस्थान की उन्नति के लिये जो भी करना आवश्यक है उसे करने की सदैव तत्परता होनी चाहिये। छठे उसे निष्पक्ष तथा निडर होना चाहिये।

वि.प. : भारत के वैज्ञानिक संस्थानों में वैज्ञानिकों के स्तर तथा कार्यप्रवृत्ति के बारे में आप क्या कहेंगे?

ठाकुर : हमारे यहाँ व्यक्तिगत स्तर पर अनेक वैज्ञानिक अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के हैं। परन्तु आज का विज्ञान अनुसन्धान व्यक्तिगत नहीं रह गया है। वह सामूहिक प्रयत्न की चीज हो गया है। एक ही समस्या के अलग अलग अनेक पहलुओं पर अनेक विशेषज्ञ मिल कर काम करते हैं। यह मिल कर काम करने की प्रवृत्ति हमारे यहाँ के वैज्ञानिकों में बहुत कम है। एक ही परियोजना पर कई वैज्ञानिक एक टीम के रूप में भले ही काम कर रहे हों वे अपने आँकड़े अपने साथी को देने में भी आनाकानी करते हैं।

वि.प. : ऐसा क्यों होता है?

ठाकुर : मुझे लगता है कि यह हम भारतीयों की संस्कृति का ही प्रभाव है। हम अपने दैनन्दिन जीवन में भी देखते हैं कि हम व्यक्तिवादी अधिक हैं, सामाजिक कम। अपना घर साफ करेंगे पर कूड़ा पड़ोसी के प्लॉट में या घर के सामने डाल देंगे। सड़क पर कचरा फेंकने या नाले में बहाने में हम संकोच नहीं करते। हम दूसरों को अपने जितना महत्त्व नहीं देते। हमारे स्वभाव के ये दोष हमारी वैज्ञानिक प्रवृत्ति में भी दिखाई पड़ते हैं। हर वैज्ञानिक अपना अपना काम और नाम चाहता है। सहयोग तथा सहकारिता की प्रवृत्ति कम ही होती है। आज का विज्ञान अनुसन्धान बहुत व्यापक हो गया है। हर व्यक्ति हर क्षेत्र का विद्वान नहीं हो सकता। इसलिये हमें अपनी प्रवृत्ति में बदलाव लाना आवश्यक है।

वि.प. : विज्ञान के क्षेत्र में आप अपने स्वयं के कार्यों का मूल्यांकन किस तरह करते हैं?

ठाकुर : मैं एक रीजनल स्ट्रक्चरल जियॉलॉजिस्ट हूँ। हिमालय की उत्पत्ति और विकास को समझने के लिये प्रमाण ढूंढते हुए मैंने लगभग सारा हिमालय देखा है। इसके बहुत बड़े भाग का स्वयं मानचित्रण किया है। इसलिये हिमालय के इतिहास के सम्बन्ध में मेरा अपना एक स्पष्ट दृष्टिकोण विकसित हुआ जिसे मैंने अपने शोधपत्रों और पुस्तक के माध्यम से प्रकट भी किया है।

वि.प. : वर्तमान में आप का अनुसन्धान कार्य मुख्यतः किस दिशा में हो रहा है?

ठाकुर : गत दस वर्षों में मैं एक्टिव टेक्टोनिक्स पर कार्य कर रहा हूँ। सरल शब्दों में मैं हिमालय क्षेत्र के भूकम्पीय स्वरूप का अध्ययन कर रहा हूँ।

वि.प. : भूकम्प एक अत्यन्त संवेदनशील मुद्दा है। जनसाधारण से सीधे सम्बन्धित भी है। इस विषय में कुछ और बताइये।

ठाकुर : हिमालय क्षेत्र भूकम्पीय दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह तो हम सभी जानते हैं कि भारतीय प्लेट उत्तर की ओर खिसक रही है जिसके कारण नीचे गहराई में बल (स्ट्रेस) जमा हो रहा है। इसका सबसे अधिक जमाव हिमालय फ्रंटल फॉल्ट क्षेत्र (अनुमानतः हिमालय और मैदानी भाग का मिलन क्षेत्र–सं) में होता है। उसी के कारण चमोली और उत्तरकाशी के भूकम्प आये। लेकिन एक बात बताता हूँ। सन् 1803 में श्रीनगर–बद्रीनाथ क्षेत्र में एक बहुत बड़ा भूकम्प आया था। ऐतिहासिक प्रमाण बताते हैं कि उस भूकम्प के कारण बद्रीनाथ के मन्दिर को क्षति पहुँची थी। दिल्ली में कुतुब मीनार के ऊपर की मंजिल को धक्का लगा था। मथुरा में उसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा था। इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि वह भूकम्प कम से कम 8 मैग्नीट्यूड का अवश्य रहा होगा। इतना बड़ा भूकम्प आ जाये तो भूमि के अन्दर जमा स्ट्रेस काफी निकल जाता है। फिर उतना ही स्ट्रेस इकट्ठा होने के लिये कम से कम पाँच सौ वर्षों का समय चाहिये। इसलिये मेरा मत है कि अब सन् 2200 या 2300 तक इस क्षेत्र में कोई बड़ा भूकम्प आने की सम्भावना बहुत कम है।

वि.प : आपके पारिवारिक स्वरूप के बारे में भी जानने के लिये हम उत्सुक हैं।

ठाकुर : मेरी पत्नी एम.के.पी. महाविद्यालय, देहरादून में होम साइंस विषय के एसोशिएट प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त हुई हैं। उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। मेरी दो बेटियाँ हैं जो अलग अलग क्षेत्रों में कार्यरत हैं।

वि.प. : डॉ0 ठाकुर! आपने अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम में से हमारे लिये कुछ समय निकाला तथा हमसे अनेक विषयों पर चर्चा की, इसके लिये विज्ञान परिचर्चा की ओर से हम आपके आभारी हैं। हमें विश्वास है कि आपके साथ का यह संवाद हमारे पाठकों के लिये निश्चित रूप से लाभदायक होगा। धन्यवाद।

उन लोगों से कोई सम्बन्ध मत रखो जो अमानवीय अथवा अप्राकृतिक बातों को मानते हैं। यदि तुमने अपने देश में दैवीय, पराप्राकृतिक या अतिमानवीय कल्पनाओं को स्थान दिया तो परिणाम विनाश ही होगा।

कन्फ्यूशियस (महान् चीनी दार्शनिक)
(जवाहर लाल नेहरू लिखित 'विश्व इतिहास की झलक' से)

विन्ध्य महासंघ की आयु एवं एक वैज्ञानिक का संघर्ष

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

विज्ञान ओर धर्म के बीच अन्तर करते हुए यह बताया जाता है कि धर्म के सिद्धान्त अपरिवर्तनीय होते हैं जब कि विज्ञान के अनुभव के साथ–साथ बदलते रहते हैं। धर्म की बात तो जो धर्म की मूल पुस्तक में लिख दी गई या धर्मगुरु द्वारा बता दी गई वह पत्थर की लकीर हो जाती है। उसका विरोध करना या उससे हट कर चलना धर्मद्रोह माना जाता है। इसके विपरीत विज्ञान का आधार ही संशय है अर्थात् कोई वैज्ञानिक सिद्धान्त भले ही आज मान्य है तो भी प्रत्येक नया वैज्ञानिक उसकी सत्यता में सन्देह करते हुए उसे निरीक्षणों और परीक्षणों की कसौटी पर कसता रहता है और आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन करता रहता है। इस प्रकार धर्म जहाँ जड़ होता है वहीं विज्ञान चेतन।

सैद्धान्तिक रूप से ये बात ठीक होते हुए भी धर्म के प्रचारक, प्रसारक और विज्ञान के व्यवसायी दोनों ही सामान्य मनुष्य होते हैं। उनके अन्दर के अहंकार, ईर्ष्या, पक्षपात, मीठा–मीठा गप कड़वा–कड़वा थू की भावना, अपने दही को कभी खट्टा न कहने की प्रवृत्ति समान ही होती है। इसीलिये धर्म के क्षेत्र में परम्परा से हटकर यदि कोई कुछ करता है तो तथाकथित धार्मिक नेता गण उसके खिलाफ एक जबर्दस्त वितण्डवाद खड़ा कर देते हैं इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं परन्तु विज्ञान के क्षेत्र में भी जब कोई नया विचार या नया सिद्धान्त किसी के द्वारा सामने रखा जाता है तो उस क्षेत्र के भी स्थापित महन्तों को अपनी गद्दी हिलती नजर आने लगती है। पुराणों में कथा आती है कि पृथ्वी पर कोई भी किसी भी कारण से तपस्या या यज्ञ करे तो भी देवराज इन्द्र को उसमें खतरा ही दिखाई देने लगता था। वही स्थिति इन वैज्ञानिक आचार्यों की भी हो जाती है। फलस्वरूप उस नये विचार या सिद्धान्त को प्रस्तुत करने वाले वैज्ञानिक को केवल वैज्ञानिक क्षेत्र में ही अपने प्रमाणों और तर्कों के साथ मुकाबला नहीं करना पड़ता वरन् मानसिक और व्यावहारिक स्तर पर भी एक संघर्ष का सामना करना पड़ता है। और जैसे खरा सोना आग में तपकर ही कुन्दन बन पाता है वैसे ही सच्चा वैज्ञानिक इन विरोधों की भट्टी से निकलकर ही चमक सकता है। भूविज्ञान के क्षेत्र में विन्ध्य महासंघ की आयु को लेकर उत्तराखण्ड के ऐसे ही एक वैज्ञानिक को गत कुछ वर्षों में इसी प्रकार से अपने को सही सिद्ध करने के संघर्ष से गुजरना पड़ रहा है।

भारत के मध्य भाग में बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के क्षेत्र में शिलाओं का एक समूह है। विन्ध्याचल पर्वत का बहुत बड़ा भाग इन शिलाओं का बना होने के कारण भूवैज्ञानिक भाषा में इन्हें विन्ध्य महासंघ (विन्ध्यन सुपरग्रूप) कहा जाता है मुख्यतः बालुकाश्म (सैंडस्टोन), शेल और चूनाश्म (लाइमस्टोन) से बना यह महासंघ किसी सुदूर प्राचीन काल में समुद्र में जमा मिट्टी, बालू और चूने से, जिन्हे भूवैज्ञानिक सम्मिलित रूप से अवसाद (सेडिमेंट) कहते हैं, निर्मित हुआ है। कभी आप इनके क्षेत्रों में घूमने जाइये तो एक बात आपका ध्यान तुरन्त आकर्षित कर

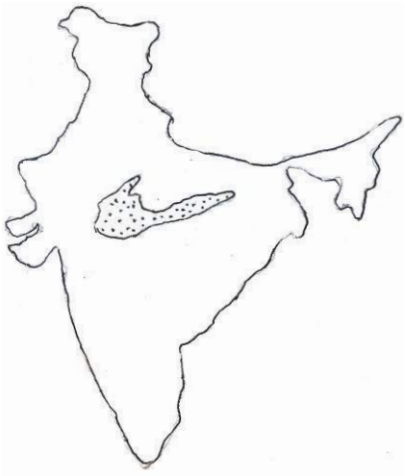

भारत में विन्ध्य महासंघ के शैलों की स्थिति (पैमाने के अनुसार नहीं)

लेगी कि इन शैलों की पर्त्तें अधिकांशतः एकदम समतल और क्षैतिज हैं, माने मिट्टी पानी में जैसे जमा हुई ठीक वैसे ही पत्थर बन कर ऊपर उठी और पहाड़ हो गई। न झुकी, न मुड़ी, न तुड़ी, न हिली। बस समुद्र सूख गया और पहाड़ बन गया।

इस विन्ध्य महासंघ का निर्माण कब हुआ यह वैज्ञानिकों के बीच चर्चा का विषय रहा है। शैलों की आयु जानने के वैज्ञानिकों के पास दो तरीके हैं। विज्ञान परिचर्चा के प्रथम अंक में डॉ. अजय कुमार बियानी ने पत्थर का जन्म प्रमाण–पत्र शीर्षक निबन्ध में इनका विवेचन किया है। शैलों की आयु बताने की ये दो विधियाँ हैं जीवाश्मों द्वारा और रेडियो समस्थानिक तत्वों (रेडियो आइसोटोप) द्वारा। जीवाश्म (फॉसिल) पत्थर बनने के काल में जिन्दा प्राणियों या पेड़ पौधों के शरीर के पत्थर रूप में परिवर्तित हो चुके भाग होते हैं। इनके अध्ययन से कोई पत्थर पुराना, नया, उससे नया या उसके बाद का है इस प्रकार उसकी तुलनात्मक आयु बताई जा सकती है। इसके लिये भूवैज्ञानिकों ने एक मानक समय सारिणी बनाई है जिसके आधार पर भूविज्ञान की एक शाखा स्तरक्रम विज्ञान (स्ट्रेटीग्राफी) का बड़ा विस्तृत और जटिल शास्त्र विकसित हुआ है। जीवाश्मों द्वारा जहाँ केवल तुलनात्मक आयु ज्ञात की जा सकती है वहीं समस्थानिक तत्वों के विश्लेषण से अंकों और वर्षों के रूप में किसी पत्थर या खनिज की ठीक–ठीक आयु बताई जा सकती है। प्रत्येक तत्त्व में प्रोटॉन की संख्या निश्चित होती है और उसी से उस तत्त्व की पहचान होती है। परन्तु प्रोटॉन उतने ही होते हुए न्यूट्रोन कम या अधिक हो जायें तो उन्हें उस तत्त्व के समस्थानिक (आइसोटोप) कहते हैं। हम जानते हैं कि एक निश्चित समयावधि में यूरेनियम लेड में, पोटेशियम अर्गोन में, रूबीडियम स्ट्रांशियम में, अर्गोन का एक

समस्थानिक अर्गोन के दूसरे समस्थानिक में, नियोडीनियम डाइनीमियम में, कार्बन का एक समस्थानिक कार्बन के दूसरे समस्थानिक में और इस प्रकार से अनेक तत्त्व या उनके समस्थानिक एक से दूसरे में बदलते रहते हैं और हरेक के बदलने की अलग–अलग परन्तु निश्चित समयावधि होती है। इसलिये रासायनिक विश्लेषण की विधि से किसी भी शैल या खनिज में बाद में बने हुए तत्त्व या समस्थानिक की मात्रा ज्ञात कर ली जाय तो यह निकाला जा सकता है कि वह खनिज या शैल कितने वर्ष पहले बना। शैलों की आयु निकालने की यह रेडियोमितिक विधि वैज्ञानिकों के हाथ में क्या आई उन्हें तो कारूं का खजाना मिल गया। अब वे किसी भी शैल की आयु वर्षों में और अंकों में बता सकते हैं।

एक और भी महत्वपूर्ण बात हुई। जीवाश्मों के आधार पर तुलनात्मक रूप से यह शैल पुराना, यह उसके बाद का, वह उसके बाद का आदि जो बातें कही जा रही थीं, जब शैलों की रेडियो समस्थानिक आयु निकाली गई तो जीवाश्मों द्वारा बताई गई आयु एकदम सही निकली अर्थात् स्तर क्रम वैज्ञानिक जिसे पुराना और जिसे बाद का कहते थे वह वर्षों के अनुसार भी वैसा ही सिद्ध हुआ। इस प्रकार शैल की आयु जानने का जीवाश्मीय उपाय ओर निश्चित रूप से सत्य स्थापित हो गया।

यह सब ठीक होते हुए भी इन दोनों ही विधियों में कठिनाइयाँ बहुत हैं। जैसे जीवाश्मों से शैल की आयु बताई जा सकती है यह तो ठीक परन्तु हर शैल में जीवाश्म नहीं होते। पिघले हुए शिला पदार्थ (मैग्मा) के ठंढे होने से बने आग्नेय शैलों (इग्नियस रॉक्स) में जीवाश्मों का मिलना लगभग असम्भव है। जो शैल बढ़े हुए ताप या दबाव के कारण अपना रूप बदल देते हैं और जिन्हें भूवैज्ञानिक कायांतरित शैल (मेटामॉर्फिक रॉक्स) कहते हैं उनमें भी जीवाश्म मिल भी गये तो भी दबाव के कारण उस शरीर रचना में इतना परिवर्तन हो चुका होता है कि उस जीव को सही सही पहचानना सम्भव नहीं होता। इसलिये आयु निर्धारण के लिये उनका कोई महत्त्व नहीं। सामान्य ताप दाब पर पानी में जमा मिट्टी या चूने से बने शैल जिन्हें हम अवसादी (सेडिमेंटरी) कहते हैं, केवल वे ही जीवाश्मों के पाये जाने की दृष्टि से उत्तम हैं। परन्तु हर अवसादी शैल में जीवाश्म हों यह तो आवश्यक नहीं होता। पहले तो जिस समुद्र में अवसाद (मिट्टी आदि) जमा हो रहा था उसमें जीव होने चाहिये। फिर मरने के बाद उनका शरीर अवसादों में तुरन्त दफन होना चाहिये। तीसरे शरीर के भागों के पत्थर बनने की क्रिया (जीवाश्मी भवन) पूरी होनी चाहिये। सब कुछ ठीक–ठाक रहा और शैल जीवाश्मों से भरे मिले तो भी यह आवश्यक नहीं कि आयु निर्धारण के लिये वे उपयोगी हों ही। शैलों की आयु ज्ञात करने के लिये केवल वे ही जीवाश्म महत्त्वपूर्ण होते हैं जो ऐसे जीवों के हों जिनकी प्रजातियों की पृथ्वी पर उपस्थिति कालावधि बहुत कम रही हो। पृथ्वी के अरबों वर्षों के पूरे इतिहास में अनेक प्रकार के जीव आये, थोड़े या अधिक समय तक रहे, फिर नष्ट हो गये। जो जीव प्रजाति जितने कम समय के लिये रही आयु निर्धारण में वह उतनी महत्त्वपूर्ण। फिर जीवाश्म की सही–सही पहचान भी होनी चाहिये। क कहे कि यह पत्थर मुझे घोड़े जैसा दिखता है और ख कहे कि गधे जैसा तो यह बात चलने वाली नहीं। और भी अनेक मुद्दे हैं जीवाश्मों के आधार पर शैलों के आयु निर्धारण के।

उसी प्रकार रेडियो समस्थानिक विधियों में भी कठिनाइयाँ है। सबसे बड़ी बात है वैज्ञानिक की अपनी समझ की। एक शैल अनेक खनिजों का बना होता है। जिस तत्त्व का विश्लेषण कर हम आयु ज्ञात कर रहे हैं वह किस खनिज में है यह पता होना चाहिये। फिर जो आयु आयेगी वह उस खनिज की होगी। इसलिये वह खनिज और वह शैल दोनों एक ही समय में बने या अलग–अलग यह तय होना चाहिये। इसे यों समझा जा सकता है कि एक छोटा सा बालू का कण नदी में बह रहा है। बहते–बहते समुद्र में जमा हो गया। वहाँ अनेक ऐसे बालू के कण मिल कर एक नया शैल बने। अब यदि किसी वैज्ञानिक ने इस बालू के कण में स्थित तत्वों के रासायनिक विश्लेषण से कोई आयु का आंकड़ा बता भी दिया तो भी वह आयु उस शैल की आयु नहीं हुई वरन् वह बालू का कण मूल रुप में जब बना था तब की आयु हुई। इसलिये किसी रसायन विज्ञानी द्वारा आयु का आंकड़ा बताने से ही काम नहीं चलने वाला। भूविज्ञानी को उस खनिज का पूरा इतिहास भी समझना पड़ता है। इसमें गफलत हो गई तो सारा तर्क का महल धराशायी। विध्य शैलों की आयु के साथ भी यही खेल चल रहा है।

विन्ध्य महासंघ के शैल उत्तम अवसादी शैल होते हुए भी आम तौर पर जीवाश्म रहित हैं। आयु निर्धारण की जो रेडियोमितिक विधियाँ पहले ज्ञात थीं उनसे अवसादी शैलों की आयु निकालना कठिन था। इस प्रकार इन दोनों ही विधियों का प्रयोग नहीं हो सकता था। जब इस प्रकार से निश्चित रुप से शैल की आयु ज्ञात न की जा सके तो भूविज्ञानी सहसंबंध की पद्धति अपनाते हैं अर्थात् जहाँ के शैलों की आयु ज्ञात है उनसे इन शैलों के विविध गुणों की समानता के आधार पर आयु का अंदाज लगाया जाता है। पुराने भूवैज्ञानिकों ने विंध्य शैलों के लिये भी वही प्रयास किये। आज के पाकिस्तान के सिंध क्षेत्र में नमक की पहाड़ियाँ हैं। वहाँ के शैलों में जीवाश्म भी मिलते हैं जिनसे उनका काल कैंब्रियन (लगभग चौवन करोड़ वर्ष पूर्व) निर्धारित होता है। वहाँ के शैलों जैसे ही शैल विंध्य में भी मिले तो लोगों ने अनुमान लगाया कि इनका काल भी कैंब्रियन पूर्व से कैंब्रियन बाद तक का हो सकता है। फिर साठ के दशक में रूस में शैलों में पाई जाने वाली शैवालों (काई जैसी वनस्पति) के द्वारा बनाई गई संरचनाओं का जिन्हें स्ट्रोमेटोलाइट कहते हैं अध्ययन विकसित हुआ तथा उनके आधार पर शैलों का कालनिर्णय किया गया। ठीक वैसी ही संरचनाएँ विंध्य में भी पाई गई तो सहसम्बन्ध के सिद्धान्तानुसार विंध्य शैलों का भी वही काल मान लिया गया अर्थात् कैंब्रियन पूर्व काल (लगभग एक अरब चौदह करोड़ वर्ष से लेकर नब्बे करोड़ वर्ष तक जिसे भूवैज्ञानिक भाषा में मध्य से उत्तर प्रोटेरोजोइक काल कहते हैं।) फिर विंध्य शैलों में किंबरलाइट नामक एक आग्नेय शैल बाद में फँसा मिलता है। इसी किंबरलाइट शैल के साथ पृथ्वी की गहराई में बने हीरे सतह पर आये। आज मध्यप्रदेश के पन्ना क्षेत्र में हीरे की खानें उन्हीं के कारण है। तो कुछ रूसी वैज्ञानिकों ने इन किंबरलाइट की रेडियोमितिक विधि से आयु निकाली जो

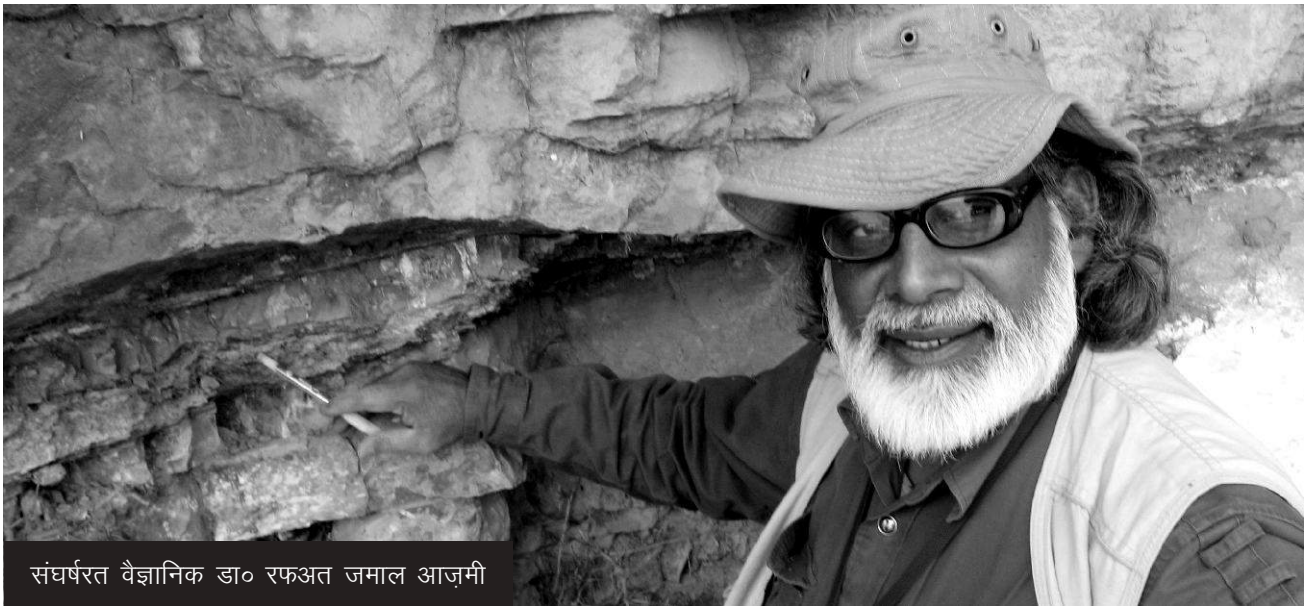

संघर्षरत वैज्ञानिक डा० रफअत जमाल आज़मी

लगभग एक अरब बारह करोड वर्ष आई। तो विंध्य की आयु की कहानी तय हो गई कि ये सारे शैल प्रोटेरोजोइक काल के हैं। हाँ, इनकी ऊपरी सतह कैंब्रियन तक खींची जा सकती है यह मत भी कुछ का था।

सन् 1998 में इस कहानी में नया मोड़ आया। देहरादून स्थित वाड़िया हिमालय भू–विज्ञान संस्थान (वाड़िया इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलोजी) के वैज्ञानिक डॉ. रफअत जमाल आज़मी को विंध्य शैलों से अनेक सूक्ष्म जीवाश्म मिले। संसार भर के अनेक स्थानों पर ये जीवाश्म कैंब्रियन पूर्व–कैंब्रियन सीमा के काल (लगभग साठ करोड़ वर्ष पूर्व) के शैलों में मिलते है। तो उनके आधार पर आजमी ने विंध्य शैलों की आयु कैंब्रियन पूर्व से लेकर कैंब्रियन बाद तक की प्रतिपादित की। ऊपर–ऊपर से देखने पर यह एक सामान्य बात लग सकती थी। इसके पहले भी अनेक वैज्ञानिकों ने विंध्य शैल समूह से अलग–अलग प्रकार के जीवाश्म पाये जाने की बातें की थी। जब कोई कुछ नया पाता है तो घोषित करता ही है। उसकी खोज वैज्ञानिक कसौटी पर कसी जाती है। यदि ठीक सिद्ध हुई तो मान्य हो जाती है और यदि नहीं हुई तो वैज्ञानिक समुदाय द्वारा अस्वीकृत हो जाती है। यह एक सामान्य प्रक्रिया है। आजमी की खोज के बारे में भी इतना ही और बस इतना ही होना चाहिये था। परन्तु इस बार वैज्ञानिक समुदाय की प्रतिक्रिया कुछ अधिक तीव्र और उग्र हो गई। इसका एक तो कारण यह था कि सूक्ष्म जीवाश्म विज्ञान के क्षेत्र में आजमी की योग्यता के बारे में कोई सन्देह नहीं हो सकता था। इस क्षेत्र में भारत में जो कुछ थोड़े महत्त्वपूर्ण विशेषज्ञ हैं उनमें आजमी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। लघु हिमालय के क्रोल–ताल संघ की आयु निर्धारण में आजमी द्वारा खोजे गये कोनोडॉण्ट तथा अन्य सूक्ष्म जीवाश्मों ने एक क्रान्तिकारी भूमिका निभाई थी। इसलिये उनके द्वारा विंध्य संघ से की गई खोज को यूं ही हल्के में नहीं लिया जा सकता था। दूसरे उनके द्वारा दिये गये जीवाश्मों के प्रमाण इतने वजनदार थे कि उनको नजर अन्दाज करना सम्भव ही नहीं था। वैज्ञानिक समुदाय के सामने दो ही रास्ते थे – या तो स्वीकार करो या अस्वीकार। अस्वीकार करने के लिये आवश्यक था कि आजमी के ही स्तर के कुछ अन्य सूक्ष्म जीवाश्म विज्ञानी उन शैलों का अध्ययन करते और वैसे

विन्ध्य शैलों से प्राप्त जीवाश्म

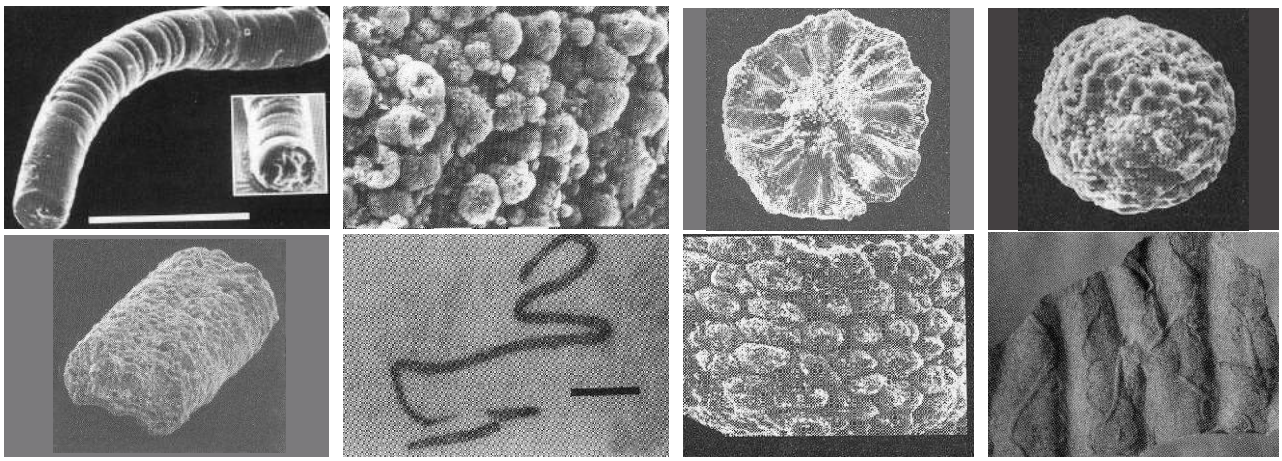

जीवाश्म पाते या न पाते और फिर दूध का दूध पानी का पानी कर देते। परन्तु आजमी की बात स्वीकार कर लेने का अर्थ होता कि विन्ध्य संघ की अबतक सर्वमान्य आयु को बदलना। ऐसा करने में अनेक स्थापित विज्ञान महन्तों को अपनी गद्दी हिलती नजर आती थी। खैर, एक अच्छी वैज्ञानिक प्रक्रिया चली। वैज्ञानिकों ने आजमी की प्रयोगशाला में सूक्ष्मदर्शी में स्वयं उन जीवाश्मों को देखा। उन्हें वे ठीक भी लगे पर मानने में हिचक होती थी। फिर वैज्ञानिकों का एक दल आजमी के साथ ही उन इलाकों में गया जहाँ के शैलों में ये जीवाश्म पाये गये थे। वहाँ से शैलों के नमूने सबने एकत्रित किये। अपनी अपनी प्रयोगशालाओं में उन पर आवश्यक संस्कार किये। कुछ को जीवाश्म मिले, कुछ ने कहा कि हमें नहीं मिले, कुछ को मिले तो पर उन्होंने उन्हें जीवाश्मों के रुप में पहचानने से इंकार कर दिया। इस सारी प्रक्रिया में अनेक मुद्दे थे। सूक्ष्म जीवाश्म विज्ञान एक अत्यन्त विशिष्ट विषय है। इसमें विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्ति ही इसके संबंध में अधिकार से मत प्रदर्शित कर सकते हैं। दूसरे सूक्ष्म जीवाश्मों के भी अनेक प्रकार हैं और हर प्रकार के विशेषज्ञ अलग–अलग होते है। कोई फोरामिनिफेरा जाति के जीवों का विशेषज्ञ होता है, कोई ऑस्ट्रेकोडा का तो कोई और कोनोडॉण्ट का। इनके अतिरिक्त भी अनेक प्रकार के सूक्ष्म कवचयुक्त जीवाश्मों के प्रकार होते हैं। हर व्यक्ति हर क्षेत्र का जानकार नहीं हो सकता। दूसरे अलग–अलग कालों के जीवाश्मों में भी भिन्नता होती है। कोई वैज्ञानिक तृतीयक या टर्शियरी काल का विशेषज्ञ है तो वह पैलियोजोइक या पुराजीवी युग के बारे में अधिकार के साथ नहीं बोल सकता। आजमी के जीवाश्मों की सत्यासत्यता के बारे में केवल वही विद्वान् कुछ कहने की स्थिति में हो सकता था जो कैम्ब्रियन पूर्व–कैम्ब्रियन काल के सूक्ष्म कवचयुक्त जीवाश्मों का अधिकारी विद्वान् हो और भारत में ऐसे लोगों की संख्या बहुत सीमित है। तीसरे सूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन एक अत्यन्त कष्ट साध्य प्रक्रिया होती है। बड़े आकार के जीवाश्म तो क्षेत्र में जा कर शैलों में प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं। पर ये सूक्ष्म जीवाश्म तो शैलों के नमूनों को प्रयोगशाला में ला कर उन्हें विशिष्ट अभिक्रियाओं द्वारा गला कर या घोल कर उनमें से बारीक–बारीक कणों को एकत्रित कर घण्टों, दिनों या महीनों तक बड़े धैर्य के साथ सूक्ष्म दर्शक यन्त्र में देखते हुए उनकी खोज करने पर ही मिलते हैं। इस प्रकार के अध्ययन के लिये एक लम्बा समय और धीरज चाहिये। उतना श्रम करने के लिये केवल वे ही तत्पर हो सकते हैं जिन्हे खोज की अबूझ पिपासा हो। चौथे विशुद्ध वैज्ञानिक भावना के साथ ही साथ मानवोचित अहंकार और ईर्ष्या की भावना भी होती ही है। तो वैज्ञानिकों के एक बड़े समुदाय ने आजमी की खोज को नकार दिया। संतुलित विचारकों ने कहा कि जब तक अन्य वैज्ञानिकों द्वारा इन जीवाश्मों की उपस्थिति की पुष्टि नहीं हो जाती तबतक इस विषय पर अंतिम रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। यहाँ तक तो सब ठीक ही था। आजमी अपने अध्ययन में लगे रहे। बार–बार नये–नये शैल नमूनों को जांचते रहे। अन्यान्य क्षेत्रों से शैल एकत्रित कर जीवाश्म खोजते रहे। उन्हें अपने निष्कर्ष के समर्थक और नये–नये प्रमाण मिलते भी रहे। परन्तु विज्ञान समाज का एक वर्ग केवल सत्य की खोज के मान्य वैज्ञानिक मार्ग के स्थान पर आजमी को व्यक्तिगत स्तर पर लांछित करने के कुपथ पर चल पड़ा। इस प्रकार की बातों को वे छाप तो नहीं सकते थे परन्तु व्यक्तिगत चर्चाओं, मत प्रदर्शनों, कानाफूसियों, निन्दात्मक उद्‌गारों और उपहासात्मक भावों का दौर चल पड़ा। किसी ने कहा कि आजमी झूठा आदमी है। कोई कहने लगा कि वह 'वी.जे.गुप्ता इन मेकिंग' है। कुछ दशक पहले भारत के एक अन्य जीवाश्म वैज्ञानिक वी.जे.गुप्ता झूठे साबित हो चुके थे। एक साहब ने कहा कि आजमी ने मसूरी क्षेत्र के पत्थरों की मिट्‌टी विन्ध्य क्षेत्र में जा कर बिछा दी और फिर वैज्ञानिकों को वहाँ ले गये और दिखा दिया कि यहीं से जीवाश्म मिले थे। फिर दूसरों को भी मिल गये तो क्या आश्चर्य?

सन् 1980 के दशक में लघु हिमालय क्षेत्र के क्रोल तथा ताल संघ की आयु के सम्बन्ध में कोनोडॉण्ट नामक सूक्ष्म जीवाश्मों की खोज कर डॉ. रफअत जमाल आजमी को बहुत प्रसिद्धि मिली। भूवैज्ञानिक दृष्टि से हिमालय को दक्षिण से उत्तर पाँच भागों में बांटा जाता है जिन्हें क्रम से बाह्य हिमालय, लघु हिमालय, सेंट्रल क्रिस्टलाइन, टेथीस हिमालय और इंडस–त्सांगपो सूचर झोन कहते हैं। शिमला, मसूरी, नैनीताल आदि का क्षेत्र लघु हिमालय में आता है। हम सभी जानते हैं कि मसूरी क्षेत्र के पहाड़ चूने के पत्थर के बने हैं। स्तरक्रम विज्ञान में इसे क्रोल समूह (क्रोल फॉर्मेशन) कहा जाता है। इसके ऊपर शेल, सैंडस्टोन का समूह है जिसे ताल समूह कहते है। इन क्रोल–ताल समूहों की आयु वैज्ञानिकों के बीच गहन मतभेद का विषय बनी हुई थी। आमतौर पर उन्हें पर्मियन से क्रटेशियस काल का माना जाता था। परन्तु सारे संसार में यह काल जीवों के विकास की दृष्टि से बहुत सम्पन्न था। ऐसा होते हुए भी इस क्रोल–ताल समूह के शैलों में जीवाश्मों का नितान्त अभाव था। वैज्ञानिक इस गुत्थी को नहीं सुलझा पा रहे थे। पर्मियन–क्रटेशियस काल पुराने अंग्रेज वैज्ञानिकों ने बताया था। उसे काटने की हिम्मत किसी में नहीं थी। वह हिम्मत सबसे पहले दिखाई लखनऊ विश्वविद्यालय के भू–विज्ञान प्राध्यापक इन्द्रबीर सिंह ने जिन्होंने कहा कि ये शैल उस पुराने काल के हैं जब जीवों का विकास हुआ ही नहीं था। इसी समय सन् 1980 में आजमी की एक खोज प्रकाशित हुई। क्रोल–ताल समूह की सीमा पर फॉस्फोराइट शैल के विशाल भण्डार मिलते हैं। देहरादून के पास मालदेवता नामक स्थान पर उसकी खानें थी। उस फॉस्फोराइट से आजमी तथा उनके सहयोगी एम.एन.जोशी तथा के.पी.जुयाल ने कोनोडॉण्ट नाम सूक्ष्म जीवाश्मों की खोज की जो कैंब्रियन काल के थे। उस खोज ने इस समूह की आयु तय कर दी। बाद में अनेक वैज्ञानिकों को और भी विविध प्रकार के जीवाश्म मिले और आज क्रोल–ताल की आयु का प्रश्न सुलझ चुका है। कोनोडॉण्ट किसी अज्ञात सूक्ष्म (एक सेमी से भी छोटे) जीव के दांत होते हैं जो चबाने और काटने का काम करते थे। ये किस जीव के दांत है यह अभी तक निश्चित रूप से नहीं पता परन्तु इन दंत जीवाश्मों के अनेक प्रकार कैब्रियन से ट्रायासिक काल तक मिलते है। उनके विभिन्न स्वरूपों के कारण शैल की आयु निर्धारित करने में वे अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इसलिये ताल समूह से इनका मिलना लघु हिमालय के इन शैलों की आयु जानने का एक अत्यन्त उत्तम प्रमाण हो गया।

प्रो. विश्वजीत गुप्ता पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ के भूविज्ञान के उच्च अध्ययन केन्द्र में जीवाश्मविज्ञान तथा स्तरक्रमविज्ञान के प्राध्यापक थे। वे अपने विषय के मान्य विद्वान् तथा एक गहन अनुसन्धान कर्ता के रुप में अत्यन्त सम्मानित थे। अच्छे वक्ता तथा लेखक थे। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। अध्यापक भी उत्तम रहे हैं। शोध पत्र तो असामान्य तेजी से लिखते थे। एक–एक साल में बीस से तीस तक शोध पत्र प्रकाशित कर जाते थे। विज्ञान जगत् दांतो तले उंगली दबा कर उनकी उपलब्धियों को देखता था। परन्तु अस्सी के दशक में ही उनका ऊँचा–ऊँचा जा रहा अंतरिक्ष यान धड़ाम से नीचे गिर पड़ा। ऑस्ट्रेलिया के एक जीवाश्म विज्ञानी जॉन टैलेण्ट तथा उसके सहयोगियों ने (इनमें भारतीय भी थे) गुप्ता के शोध पत्रों का गहन विश्लेषण करना प्रारम्भ किया और पाया कि गुप्ताजी के अनेक शोध केवल धोखा धड़ी का मामला है। हिमालय के अत्यन्त दुर्गम स्थान से जहाँ वे कभी गये ही नहीं, कोई जीवाश्म मिला ऐसी घोषणा करना एक ही जीवाश्म के अनेक कोणों से लिये गये चित्रों को अलग–अलग जीवाश्म के रुप में प्रचारित करना, एक ही जीवाश्म को अलग–अलग कई स्थानों से मिला बताना जैसे अनेक कारनामे उन्होने किये। फलस्वरुप विज्ञान जगत में उनका नाम काली सूची में डाल दिया गया। उनके शोध पत्र छपने का तो प्रश्न ही नहीं, यदि किसी ने उनके पहले के छपे शोध पत्रों का सन्दर्भ भी दिया तो पत्रिकाएँ उसके भी शोध पत्र नहीं छापतीं। वी.जे. गुप्ता ने विज्ञान के क्षेत्र में स्वयं को तो गिरा ही दिया पर साथ ही भारत के जीवाश्म विज्ञानियों की साख में भी बट्टा लगा दिया।

भूवैज्ञानिक समय सारणी

महाकल्प	कल्प	युग	काल के प्रारंभ की आयु (वर्षों में)
सीनोजोइक	क्वाटर्नरी	होलोसीन	पाँच लाख वर्ष पूर्व
		प्लीस्टोसीन	बीस लाख वर्ष पूर्व
	टर्शियरी	प्लायोसीन	सत्तर लाख वर्ष पूर्व
		मायोसीन	दो करोड़ साठ लाख वर्ष पूर्व
		ओलिगोसीन	तीन करोड़ अस्सी लाख वर्ष पूर्व
		ईओसीन	छः करोड़ वर्ष पूर्व
		पैलिओसीन	छः करोड़ पचास लाख वर्ष पूर्व
मीसोजोइक	क्रटेशियस		तेरह करोड़ पचास लाख वर्ष पूर्व
	जुरासिक		अठारह करोड़ वर्ष पूर्व
	ट्राइएसिक		बाईस करोड़ पचास लाख वर्ष पूर्व
पैलियोजोइक	पर्मियन		अठाईस करोड़ वर्ष पूर्व
	कार्बोनिफेरस		पैंतीस करोड़ वर्ष पूर्व
	डेवोनियन		चालीस करोड़ वर्ष पूर्व
	साइल्यूरियन		चवालीस करोड़ वर्ष पूर्व
	ओर्डोविशियन		पचास करोड़ वर्ष पूर्व
	कैंब्रियन		चौवन करोड़ वर्ष पूर्व
प्रोटेरोजोइक			दो अरब पचास करोड़ वर्ष पूर्व
आर्कियन			चार अरब वर्ष पूर्व
पृथ्वी की उत्पत्ति – चार अरब साठ करोड़ वर्ष पूर्व			

ऐसी बात कहते हुए उन्होंने यह भी नहीं सोचा कि कोई सामान्य सा भूवैज्ञानिक भी क्षेत्र में पहुंचते ही यह जान जायेगा कि यह शैल और मिट्टी यहाँ की है या कहीं दूसरे स्थान की। फिर ये मान्य वैज्ञानिक ऐसी छोटी–सी बात क्या समझ न पाते? इन लोगों में जो सबसे भले थे, उन्होंने कहा कि आजमी से भूल हुई है। प्रयोगशाला में वे अनेक स्थानों के शैलों का अध्ययन करते रहते हैं तो इधर के नमूने उधर मिल गये होंगे। मतलब कि आजमी जीवाश्म पहचान तो लेते हैं पर गज़ब के लापरवाह हैं। ये सभी आरोप घोर अवैज्ञानिक थे परन्तु किसी व्यक्ति का मानसिक उत्पीड़न करने में सक्षम तो निश्चित ही थे। एक उच्च पदस्थ वैज्ञानिक ने तो, अखबार को इंटरव्यू भी दे दिया कि आजमी की खोज झूठ का पुलिंदा है। एक विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष तो जो अपनी योग्यता के कारण नहीं केवल नौकरी के कारण उस पद तक पहुँचे थे, आजमी के पीछे हाथ धोकर पड़ गये। इन सब बातों का व्यावहारिक खामियाजा भी आजमी को भुगतना ही पड़ा। परन्तु अत्यन्त धैर्य के साथ वे अपने मत पर अडिग बने रहे।

इसी बीच आइ.आइ.टी., रुड़की का एक विद्यार्थी उनके निर्देशन में पीएच.डी. करने आया। उन्होंने उसे भी विंध्य शैलों के जीवाश्मों का विषय दिया। उसने अनेक क्षेत्रों में जा कर वहाँ के शैलों के नमूने ला कर अपनी प्रयोगशाला में उनका अध्ययन किया। उसे बहुत बड़ी मात्रा में भांति–भांति के जीवाश्म मिले। अपने अध्ययन को शोध प्रबन्ध के रुप में उसने प्रस्तुत किया। परीक्षकों में विदेशी परीक्षक भी थे जो कैंब्रियन पूर्व–कैंब्रियन काल के सूक्ष्म जीवाश्मों के विशेषज्ञ विद्वान थे। उन्होने उस शोध प्रबन्ध की सराहना की। उस विद्यार्थी दीपक जोशी को पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त हुई। आजमी को थोड़ा समाधान मिला। अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में भी विन्ध्य शैलों का महत्त्व समझा जाने लगा। सबसे बड़ी बात थी कि जो शैल मध्य प्रोटेरोजोइक काल के कहे जाते हैं उनमें कैंब्रियन पूर्व–कैंब्रियन काल के जीवाश्म मिल ही कैसे सकते हैं? या तो जीवाश्म गलत हैं या विन्ध्य शैलों की जो आयु मानी जा रही है वह गलत है। स्वीडेन के इस विषय के एक मान्य विशेषज्ञ वैज्ञानिक स्टीफेन बेंग्सन ने

इसका अध्ययन करने का निश्चय किया। वे भारत आये। आजमी के साथ वे उन क्षेत्रों में गये जहाँ शैलों में आजमी को जीवाश्म मिले थे। शैलों के नमूनों को बेंग्सन सीधे अपनी प्रयोगशाला में ले गये। उनका अध्ययन किया और उन्हें भी वैसे ही जीवाश्म बहुत बड़ी मात्रा में प्राप्त हुए। जब उन्होंने अपने निष्कर्षों को प्रकाशित किया और उसमें यह लिखा कि आजमी द्वारा खोजे गये जीवाश्म एकदम ठीक हैं तब आजमी के संघर्ष का एक चरण उनकी ईमानदारी और सत्यनिष्ठा की स्थापना के साथ पूरा हुआ। यह दुर्भाग्य की बात अवश्य है कि एक भारतीय वैज्ञानिक के सच साबित होने के लिये एक विदेशी, यूरोपीय गवाह की जरुरत पड़ी। परन्तु उनको उनका सम्मान पुनः प्राप्त हो गया यह संतोष की बात है। निन्दक चुप हो चुके हैं। परन्तु विंध्य की आयु के संबंध में उनका संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है। अन्य शोधकर्ताओं को भी वे जीवाश्म मिल गये इसलिये उन पर लगा झूठ और फरेब का कलंक तो धुल गया परन्तु विन्ध्य की आयु के सम्बन्ध में उनके मत को अभी मान्यता मिलनी शेष है। इसका एक मुख्य कारण है कि पिछले कुछ वर्षों में रेडियोमितिक विधियों से विंध्य शैलों की आयु एक अरब साठ करोड़ वर्ष से भी अधिक आ रही है। इतने पुराने शैलों में ये जीवाश्म संसार में कहीं नहीं मिलते। विश्व भर में ये जीवाश्म तो लगभग साठ करोड़ वर्ष पूर्व के शैलों में ही मिलते हैं। इस गुत्थी को कैसे सुलझाया जाय यह मुद्दा तो अब भी बना हुआ है। बेंग्सन कहते हैं कि जीव ही उतने पुराने होंगे। पर यह नहीं बताया जा सकता कि पृथ्वी के अन्य स्थानों पर जो जीव साठ करोड़ वर्ष पहले मिलते थे वे केवल विंध्य में एक अरब साठ करोड़ वर्ष पहले कहाँ से आ गये। आजमी कहते हैं कि रेडियोमितिक विधि से जो आंकड़े आ रहे हैं वे उन खनिजों के हैं जो बहुत प्राचीन काल में बने और विंध्य शैलों के जमा होते समय बह कर उनमें आ गये। लोग अभी उनकी बात नहीं मान रहे हैं पर उत्तराखण्ड का यह वैज्ञानिक संसार भर में विज्ञान के चैतन्य की ध्वजा का भूर्तिमन्त प्रतीक बना संघर्षरत बना हुआ है।

भू–विज्ञान विभाग,
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून

ऐतरेय ब्राह्मण (संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद् आदि वैदिक ग्रंथों का काल 4000 से 1000 ई.पू.) के जैसे आरम्भिक काल में ही वैदिक भारतीय इस निष्कर्ष पर पहुंच गये थे कि सूर्य एक है और वह कभी अस्त नहीं होता। 'स वा एष न कदाचनास्तयेति नादेति' 'यह सूर्य वास्तव में न तो अस्त होता है और न उदित। जब लोग ऐसा सोचते हैं कि वह अस्त होता है तो यह होता है कि वह दिन के अन्त में पहुंचता है, उलटा हो जाता है, नीचे रात्रि बनाता है और ऊपर दिन। जब लोग ऐसा सोचते हैं कि प्रातःकाल उदित होता है तो उसका अर्थ है कि वह रात्रि के अंतिम रूप में पहुंच कर उलटा हो जाता है। नीचे दिन बनाता है और ऊपर रात्रि। वह वास्तव में कभी–भी अस्त नहीं होता है।

(ऐ.ब्रा. 3.44)

(संदर्भः पांडुरंग वामन काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, हिंदी समिति, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रकाशित हिंदी अनुवाद, 1973, पृ–256)

यह तो सभी मानेंगे कि किसी भी नई खोज के लिये उसके जनक को पूरा श्रेय मिलना चाहिये। लेकिन विज्ञान की यह भी जिम्मेदारी रही है कि नई खोजें, खासकर ऐसी जिनका समाज के लिये कल्याणकारी प्रभाव साबित हो चुका है, जन सामान्य तक पहुंचे। निजी स्वार्थ के लिये उन्हें कुछ इने गिने लोगो तक सीमित रखना उचित नहीं। ऐसे समय में समाज को न्यायपूर्ण निर्णय लेने होंगे। उदाहरण के लिये कुछ असाध्य माने जाने वाले रोगों पर इलाज करने वाली दवाइयाँ सभी को उपलब्ध होनी चाहिये। केवल कुछ लोगों या कंपनियों को इन्हें बनाने का अधिकार हो तो यह देखना आवश्यक है कि वे इसका अनुचित लाभ न उठायें। विज्ञान के शोधकार्य को जारी रखना, उसे पर्याप्त आर्थिक सहायता देना जैसे समाज का कर्तव्य बनता है वैसे ही समाज को यह भी जिम्मेदारी निभानी पड़ेगी कि यह शोध ऐसी दिशा में न बढ़े जिससे आगे समाज को पछताना पड़े। परमाणु बम की खोज एक ऐसा ही उदाहरण है।

जयन्त विष्णु नारलीकर ('इकीसवीं सदी में विज्ञान', हिन्दी में विज्ञान भावना नामक पुस्तक (2003) से, पृ.37)

पनडुब्बी को संदेश
वी० एल० एफ० संचार प्रणाली

राजेन्द्र पाल

भारतीय समुद्री सीमाएं देश के लगभग दो-तिहाई भाग को छूती हैं। पश्चिम में अरब सागर, पूरब में बंगाल की खाड़ी व दक्षिण में हिन्द महासागर जैसे विस्तृत क्षेत्र हमारी सुरक्षा को चुनौती देते प्रतीत होते हैं। भारतीय नौ सेना के युद्धपोत निरन्तर चौबीसों घण्टे समुद्री सीमाओं की चौकसी करते हैं। समुद्री सतह पर जलपोत कार्यरत रहते हैं और समुद्र के अन्दर पनडुब्बी छुपे-छुपे किसी भी खतरे से निपटने के लिये तैयार रहती है। समुद्र के अन्दर गहराइयों में घूमती पनडुब्बी के लिये आवश्यक दिशा-निर्देश प्राप्त करना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। इस दुष्कर व जोखिम भरे कार्य के लिए जीवन-दायिनी प्रणाली है वी. एल. एफ. (अति निम्न आवृत्ति) संचार।

कहते हैं चांद पर बैठे आदमी से बातें करना आसान है लेकिन समुद्र में पानी के नीचे कार्यरत पनडुब्बी को संदेश भेजना अपेक्षाकृत कठिन है। भारत आज विश्व के चुने चन्द देशों की श्रेणी में है जहाँ पिछले लगभग दो दशक से भारतीय नौ सेना के लडाकू जलपोत व पनडुब्बियां वी.एल.एफ. संचार प्रणाली द्वारा गोपनीय संदेश प्राप्त कर राष्ट्रीय सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

पनडुब्बी

पनडुब्बी एक युद्धपोत है, एक अनोखी नौका है जो समुद्र के ऊपर भी तैरती है व छुपकर समुद्र के अन्दर गहराइयों में घूम–फिर सकती है। एक बार डुबकी लगाने के बाद पनडुब्बी लगभग पूरी तरह से बाहरी दुनिया से कट जाती है – इसका संचार सम्पर्क टूट जाता है। पनडुब्बी में कार्यरत नौसैनिक केवल अपनी सीमित दुनिया में बंध जाते हैं। युद्ध के समय जब चारों ओर दुश्मन के टोही विमान, जलपोत व उपग्रह इस पनडुब्बी की खोज में लगे रहते हैं तब स्थिति नाजुक व शोचनीय हो जाती है। ऐसी अवस्था में छोटा सा छेद, हल्का सा टकराव, थोडा सा असन्तुलन और तनिक सी सैनिक अकुशलता पूरे बेड़े के लिए भयावह स्थिति पैदा कर सकती है। कहते हैं तिनके का सहारा मिले तो तूफान में भी नदी पार कर जाता है। ऐसी अनिश्चित अवस्था में दो–शब्द का सन्देश भी अगर पनडुब्बी को मिल जाय जो उसे बता सके कि वो कहाँ है, उसके ऊपर समुद्र पर क्या हो रहा है, शुभचिंतक व दुश्मन कहाँ–कहाँ तैनात हैं तो उसे बहुत बड़ा सहारा मिलता है, उसके सैनिकों का मनोबल बढ़ता है, उनकी कार्य कुशलता व कार्यक्षमता में वृद्धि होती है और सबसे बडी बात पनडुब्बी को अहसास होता है कि उसका कोई अपना है जो उसकी सुरक्षा के प्रति सचेत है।

पनडुब्बी को किसी से सम्पर्क स्थापित करने के लिये या तो ऊपरी सतह पर आना पड़ता है अथवा समुद्री सतह से थोड़ा नीचे (पेरिस्कोपिक गहराई पर) छुप कर अपने उच्च/अति उच्च आवृत्ति (एच. एफ./वी.एच.एफ) ऐन्टेना को पानी से बाहर निकाल कर सन्देश प्राप्त / प्रेषित करने पड़ते हैं। इन दोनों ही स्थितियों में पनडुब्बी के जीवन को भारी खतरे का सामना करना पड़ता है क्योंकि दुश्मन उसे पहचान सकता है। पनडुब्बी की मारक शक्ति पानी के अन्दर छुपकर प्रहार करने में ही निहित है अतः युद्ध के समय उच्च आवृत्ति /अति उच्च आवृत्ति की संचार प्रणाली प्रयोग में नहीं लायी जा सकती इसीलिये अति निम्न आवृत्ति (वी.एल.एफ.) की आवश्यकता सामने आयी।

वी०एल०एफ० – मुख्य विशेषताएं

3 कि. हर्ज. से 30 कि. हर्ज तक फैले रेडियो आवृत्ति बैण्ड़ को वैरी लो फ्रीक्वेंसी (अति निम्न आवृत्ति) बैण्ड के नाम से जाना जाता है। रेडियो तरंग आवृत्ति

जैसे–जैसे कम होती है उसकी पानी में भेदन क्षमता वैसे–वैसे बढ़ जाती है। यही कारण है कि अति निम्न आवृत्ति पर इन तरंगों का समुद्र के पानी में प्रवेश सम्भव है। समुद्री पानी में नमक की प्रचुरता होने के कारण रेडियों तरंगों की शक्ति का ह्रास तीव्रता से होता है। "काश कि समुद्र के पानी में नमक न होता तो हम उच्च आवृत्ति पर भी अधिक गहराई तक पनडुब्बी को सन्देश भेज सकते"।

वी०एल०एफ० संचार प्रणाली के प्रमुख अंग

सक्षिप्त में केवल आवश्यक प्रमुख अंगों का मात्र परिचय देने का प्रयास किया गया है। साथ ही तकनीकी गूढ विषय की जटिलता को सरल बनाने का भी प्रयत्न भी निहित है।

1. ट्रान्समीटर – भारत के सुदूर दक्षिण में कन्या कुमारी के पास फरवरी 1984 को तत्कालीन रक्षा मन्त्री श्री वेंकटरमण ने एशिया के प्रथम वी.एल.एफ. स्टेशन का शिलान्यास किया था। लगभग 6–7 वर्षो के निरन्तर प्रयास व कठिन परिश्रम से यह कार्य 1990 में पूरा हुआ। आज इस विशाल परियोजना के अंतर्गत वी. एल.एफ. स्टेशन की स्थापना और लगभग सभी भारतीय नौ सेना के जलपोत व पनडुब्बी पर वी. एल. एफ. रिसीवर की स्थापना से भारतीय संचार क्षेत्र में एक नये अध्याय का प्रारम्भ हो गया है।

ट्रान्समीटर के प्रमुख उपकरण हैं :–

एक – विशाल छतरी नुमा ढ़ांचा जो कई सौ मीटर ऊँचे अनेक लौह स्तम्भों के सहारे टिका हुआ है। इस एन्टेना के संचालन के लिये सभी आधुनिक

इलैक्ट्रानिक उपकरण उपलब्ध हैं जो इसकी विभिन्न कार्य प्रणालियों को नियंत्रित करते हैं।

दो – निम्न शक्ति वाला ट्रान्समीटर (मोडुलेटर)। इसमें ऑन ऑफ कीईंग (ओ.ओ.के.), फ्रीक्वेंसी शिफ्ट कीईंग (एफ.एस.के.) के अतिरिक्त मिनिमम शिफ्ट कीईंग (एम.एस.के.) जैसी अति आधुनिक माडुलेशन तकनीक सम्मलित हैं जिसके प्रयोग से उच्च शक्ति के प्रेषित यन्त्र तीव्र उतार–चढाव के डाटा को बिना अनावश्यक दबाव के सुगमता से प्रेषित कर देते हैं। मोडुलेटर के द्वारा एक साथ चार विभिन्न मुख्यालयों से प्राप्त सूचना को चतुराई के साथ आपस में लपेटकर अलग–अलग क्षेत्र में कार्यरत पन्डुब्बी जलपोत के लिए प्रेषित कर दिया जाता है। मिनिमम् शिफ्ट कीईंग की अनुपस्थिति में केवल 15–20 शब्द प्रति मिनट भेजने की क्षमता थी जबकि एम.एस.के. मोडुलेटर से चार टेलीप्रिन्टर सन्देश एक साथ भेजे जा सकते हैं। इस प्रकार ट्रान्समीटर की प्रेषण क्षमता में लगभग आठ गुना वृद्धि हो गयी।

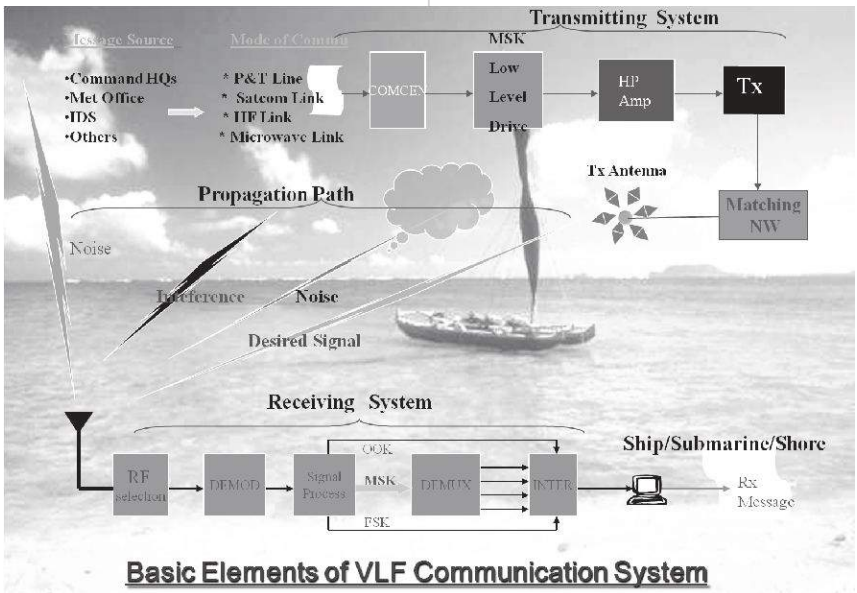

Basic Elements of VLF Communication System

विभिन्न मुख्यालयों से प्राप्त सूचना में आवश्यकतानुसार छटनी कर कोडेड सन्देश की भाषा को और अधिक गूढ़ व दुश्मन की समझ से परे बनाकर प्राथमिकता के आधार पर विशाल एन्टेना के माध्यम से वाताकाश में प्रेषित कर दिया जाता है।

वी.एल.एफ. संचारण

छतरीनुमा एन्टेना से निकली वर्टिकली पोलेराइस्ड़ तरंगें चारों ओर वायुमण्डल में फैल जाती हैं। पृथ्वी की गोलाकार सतह व आइनोस्फेयर के गलियारे से होती हैं। लगभग 600–1000 कि.मी. तक ये तरंगें पृथ्वी से सटकर चलती हैं और इस से अधिक दूरी तय करने के लिये इन्हें आकाश का सहारा लेना पड़ता है।

हमारे पूरे वायुमण्डल में प्राकृतिक रूप से जो घटनाएं होती हैं उनसे वी.एल.एफ. संचारण का निकट का नाता है। बादलों का गरजना, बिजली का चमकना इस आवृत्ति पर बड़ा कष्टदायक व अरुचिपूर्ण है। वैसे चीखना चिल्लाना किसी भी भले आदमी को अच्छा नहीं लगता। ये अनचाहा संयोग ही है कि बादलों का गरजना भी वी.एल.एफ. बैण्ड पर ही होता है और गर्जन की दहाड़ बहुर दूर तक फैल जाती है जो वी.एल.एफ. संचार व्यवस्था में बाधा पहुँचाती है। लगभग प्रत्येक सेकेण्ड पृथ्वी पर कहीं न कहीं बिजली कड़कती है। करोड़ो वाट्स् की ये दहाड़ें हमारे ट्रान्स्मीटर से प्रेषित सिग्नल की शक्ति को दबोच लेती हैं।

समुद्र के अन्दर का संचारण बिल्कुल भिन्न, अनोखा व कठिन है। समुद्र की सतह पर पानी के सम्पर्क में आनेपर वी.एल.एफ. तरंगों को बड़ा भारी संघर्ष करना पड़ता है जिससे सिगनल ऊर्जा की बहुत क्षति होती है, लगभग 70 डी.वी. का नुकसान। नमकीन पानी में घुसने

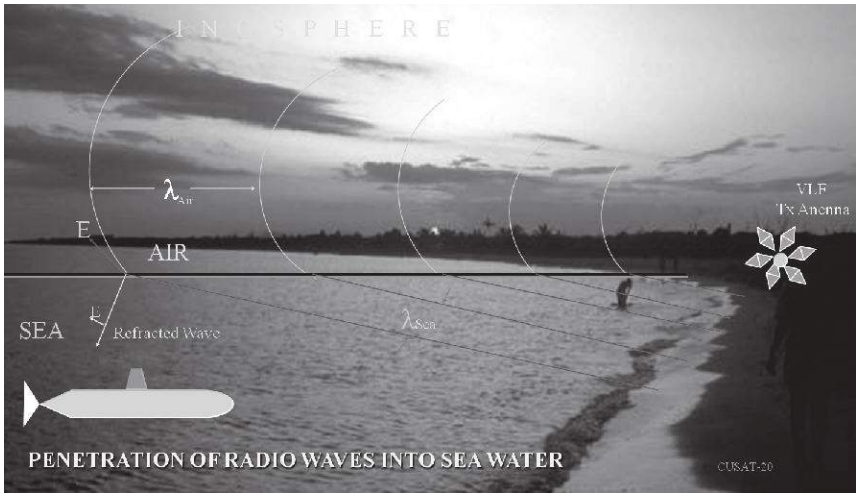

पर पुनः लगभग 5.5 डी. वी. प्रतिमीटर गहराई (25 कि. हर्ज आवृत्ति पर) की दर से इनकी शक्ति तीव्रता से घटती है। अतः इन सभी उपरोक्त सच्चाइयों से निपटने के लिये, ऐसी परिस्थिति में सिग्नल प्राप्त करने के लिये अत्यन्त संवेदनशील रिसीविंग उपकरण की आवश्यकता है। भारतीय वैज्ञानिकों ने स्वदेशी तकनीक से ऐसा उपकरण तैयार कर लिया है।

वी.एल.एफ. रिसीविंग एन्टेना

पानी के अन्दर कार्यरत पनडुब्बी द्वारा सन्देश प्राप्त करना एक विशेष विधा है। इसके लिए प्रयुक्त एन्टेना भी साधारण एन्टेना से हट कर होता है। मुख्यतः तीन प्रकार के एन्टेना प्रयोग में लाये जाते हैः–

(क) पनडुब्बी में स्थिर एन्टेना

(ख) पानी के अन्दर तैरता केबिल एन्टेना

(ग) पानी के अन्दर तैरता लूप एन्टेना

वी.एल.एफ. तरंग समुद्र में 8–10 मीटर तक ही प्रवेश कर पाती है। अगल एन्टेना (क) पनडुब्बी के अन्दर लगा है तो पनडुब्बी केवल 8 से 10 मीटर की गहराई तक सन्देश प्राप्त कर सकती है। जैसा कि चित्र 5 में दिखाया गया है इस गहराई पर पनडुब्बी का संचालन करना खतरे को मोल लेने जैसा है क्योंकि सतह पर घूतते लड़ाकू जलपोत की निचली सतह (तली) भी लगभग 10 मीटर पानी के नीचे होती है अतः पनडुब्बी व जलपोत के टकराने की सम्भावना बढ़ जाती है। (ख) व (ग) प्रकार के एन्टेना समुद्र के नीचे तैरते हुए एक लम्बी केबल के द्वारा पनडुब्बी से जुड़े रहते हैं। इन के द्वारा पनडुब्बी समुद्री सतह से 100 मीटर गहराई तक वी.एल.एफ. सन्देश प्राप्त कर सकती है।

वी. एल. एफ. रिसीवर

रेडियो रिसीवर से सभी भली भांति परिचित हैं। विविध भारती/आकाशवाणी से प्रेषित पुराने गानों का श्रवण जवानी की मदमस्त यादों को स्पर्श कर जाता है। मोबाइल रिसीवर तो आज की दुनिया में एफ. एम. रेडियो द्वारा नयी पीढ़ी का भरपूर मनोरंजन कर रहा है। वी. एल. एफ. रिसीवर भी ऐसा ही एक अति आधुनिक उपकरण है जो अति निम्न आवृत्ति की सूक्ष्म तरंगों को पकड़ कर वांच्छित सन्देश को टेलीप्रिन्टर पर टांक देता है। यह अत्यन्त सुग्राही उपकरण है जो एक वोल्ट के 10 लाखवें भाग के अति सूक्ष्म संकेत ग्रहण कर सकता है। ऑन ऑफ कीईंग (ओ.ओ.के.) पर प्रेषित मोर्स कोड़ के सन्देश सुन कर कुशल नाविक द्वारा डीकोड़ कर लिये जाते हैं। एम.एम.के. चैनल पर चार विभिन्न सन्देश टेली प्रिन्टर द्वारा कागज पर छप जाते हैं। रक्षा अनुसन्धान के वैज्ञानिक इस कार्य में अपना श्रेष्ठ योगदान दे रहे हैं।

उपसहांर

इस संचार प्रणाली के प्रारम्भ हो जाने से भारत आज विश्व के उन चुनिंदा राष्ट्रों की श्रेणी में आ गया है जो इस विशेष संचार क्षेत्र में अग्रणी हैं। अरबों रुपयों की यह राष्ट्रीय परियोजना अपने आप में अनूठा उदाहरण है। भाखड़ा–नांगल बांध के समान विशाल व महत्वपूर्ण योजना से नौसेना को बहुत लाभ हो रहा है। परमाणु विस्फोट के उपरान्त सभी संचार प्रणालियां प्रायः ठप्प पड़ जाती हैं केवल वी.एल.एफ. चैनल ही सन्देश भेजने का एक मात्र विकल्प बचता है जिसके माध्यम से आपातकालीन सन्देश भेज कर राष्ट्रीय सुरक्षा को बचाया जा सकता है। दूसरा विशेष लाभ है कि वी.एल.एफ. ट्रान्स्मीटर को दुश्मन जाम नहीं कर सकता। यही कारण है कि वी.एल.एफ. आज भारतीय नौ सेना की प्रमुख संचार सेवा बन गयी है।

इस संचार व्यवस्था के आरम्भ होने से पानी की पर्त में छुपी पनडुब्बी में बैठा नाविक जब चार भिन्न प्रकार के लिखित सन्देश प्राप्त करता है तो वो खुशी से उछल जाता है और बाहरी दुनिया से जुड़कर उसका आत्मविश्वास व कार्य कुशलता और बढ़ जाती है। इस परियोजना की सफलता का श्रेय वैज्ञानिक दल के उन सभी सदस्यों को भी जाता है जिनके अथक प्रयास, समर्पण व कार्य निष्ठा से योजना पूर्ण हुई।

(से. नि.) वैज्ञानिक,
डिफेंस इलेक्ट्रॉनिक्स एप्लिकेशन लेबोरेटरी,
देहरादून

किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त की सफलता

100 प्रतिशत
यदि दूसरों द्वारा परीक्षित तथा स्वीकृत हो

50 प्रतिशत
यदि दूसरों द्वारा घोर विरोध कर अस्वीकृत हो

0 प्रतिशत
यदि कोई भी उस पर ध्यान ही न दे या उसका उल्लेख भी न करे।

– हरमैन बॉंडी (अंग्रेज खगोल वैज्ञानिक)
(जयन्त विष्णु नारलीकर लिखित पुस्तक 'द सांइटिफिक एज' से)

ख़तरनाक आकाशीय पिण्ड

इरफान ह्यूमन

बहुत सी विज्ञान कथा आधारित फिल्में विशाल उल्का पिण्डों, क्षुद्र ग्रहों (एस्टेरॉएड्स) या धूमकेतु (कॉमेट्स) से पृथ्वी की टक्कर पर आधारित कर बनाई जाती रहीं हैं। हों भी क्यों न, क्योंकि उल्का पिंडों की पृथ्वी से टक्करों को नजरअंदाज़ नहीं किया जा सकता। बहुत से वैज्ञानिक डायनासौर के पृथ्वी से खात्मे का कारण विशाल उल्का पिंड का पृथ्वी से टकराना ही मानते हैं। बीती सदी के अन्तिम दशक में बृहस्पति (ज्यूपिटर) से शूमेकर लेवी नामक धूमकेतु की टक्कर कभी भुलाई नहीं जा सकती। सवाल यह है कि ऐसी किसी टक्कर से पृथ्वी को कैसे बचाया जाए।

सितम्बर, 2010 में ही दो क्षुद्र ग्रह पृथ्वी के बहुत करीब से गुज़रे थे। इसमें से 2010 आरएक्स 30 नाम का क्षुद्र ग्रह 10 से 20 मीटर का और धरती से 248,000 किलोमीटर की दूरी से गुज़रा वहीं दूसरा 2010 आरएफ 12 छह से बारह मीटर का था। ऐसा पहली बार नहीं हुआ। इससे पूर्व भी विशालकाय क्षुद्र ग्रह पृथ्वी के पास से गुज़रते रहे हैं। इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि इस प्रकार कभी कोई विशाल क्षुद्र ग्रह रास्ता भटक कर पृथ्वी से टकरा जाए।

इसी वर्ष अगस्त में वैज्ञानिक आशंका व्यक्त कर चुके हैं कि 1999 आरक्यू 36 नामक क्षुद्र ग्रह वर्ष 2182 में धरती से टकरा कर तबाही मचा सकता है। इस क्षुद्र ग्रह की खोज वर्ष 1999 में की गई थी तभी से वैज्ञानिक इस पर लगातार निगाह रखे हुए हैं। 600 मीटर चौड़ा यह क्षुद्र ग्रह आज वैज्ञानिकों के लिए चिन्ता का विषय बना हुआ है।

आज दुनियाभर के वैज्ञानिक ऐसे आकाशीय पिण्डों से बचाव के रास्ते तलाश करने लगे हैं। एक सुझाव यह है कि उस आकाशीय पिण्ड की ओर एक मिसाइल दागी जाए जिस पर परमाणु बम लगा हो। यह मिसाइल जाकर उससे टकराएगी और उसे चकनाचूर कर देगी। मगर वैज्ञानिक कहते हैं कि यह कोई अचूक उपाय नहीं है, क्योकि उस पिण्ड के टुकड़े फिर भी पृथ्वी से टकरा सकते हैं। तो इस संबंध में एक और सुझाव सामने आया है कि परमाणु बम का पिण्ड पर नहीं बल्कि पिण्ड के निकट विस्फोट किया जाए ताकि उस धमाके से वह अपना रास्ता बदल दे। मगर इसमें भी कोई गारन्टी नहीं है कि पिण्ड अपना रास्ता बदल ही दे। एक सुझाव यह भी है कि जैसे ही यह आशंका हो कि अमुक पिण्ड पृथ्वी की ओर बढ़ रहा है, वैसे ही एक अंतरिक्ष यान छोड़ा जाए जो उस उल्का पर जाकर स्थिर हो जाए।

अब इस अंतरिक्ष यान का संचालन पृथ्वी से किया जाए और इससे उत्पन्न शक्ति से उसका रास्ता बदल दिया जाए। इस सुझाव पर पहली आपत्ति तो यही है कि शायद पिण्ड का गुरुत्वाकरूर्षण इतना न हो कि अंतरिक्ष यान उस पर टिक सके। दूसरी आपत्ति यह है कि पिण्ड कोई सपाट मैदान तो मुहैया कराएगा नही। कभी–कभी पुच्छलतारे जैसे पिण्ड चट्टान के रूप में होते ही नहीं, तब क्या होगा?

बचाव का एक सुझाव यह भी है कि अंतरिक्ष यान को उल्का पिण्ड पर भेजने की बजाय, उसके बाजू में स्थापित किया जाए। इस अंतरिक्ष यान के गुरूत्व बल के कारण उल्का का रास्ता धीरे–धीरे बदलेगा। इस संदर्भ में की गई गणनाएं बताती हैं कि यदि पिण्ड 200 मी चौडा है तो उससे 50 मी की दूरी पर स्थापित 20 टन का अंतरिक्ष यान उसकी रफ्तार को 2 मिलीमीटर प्रति सैकण्ड के हिसाब से कम करेगा। इतना काफी होगा, बशर्ते कि आप कई सालों पहले अंदाज़ लगा लें कि अमुक पिण्ड पृथ्वी से टकराने की संभावना है। वैसे आजकल खगोलाशास्त्री कई साल पहले ही इस प्रकार की भविष्यवाणी करने में सक्षम हो चुके हैं।

आज वैज्ञानिकों द्वारा कई यान क्षुद्र ग्रहों पर भेजे जा चुके हैं जो वहां से पिण्ड की कई महत्वपूर्ण जानकारियां पृथ्वी तक भेज चुके हैं। जापान द्वारा मई, 2003 में प्रक्षेपित हयाबुसा नामक अंतरिक्ष यान धरती से लगभग 30 करोड़ किलोमीटर दूर स्थित क्षुद्र ग्रह इतोकाबा का चक्कर लगा कर वापस लौट आया है, जो अपने साथ वहां की सतह से कई नमूने लाया जिन्हें एक उपकरण की मदद से पृथ्वी तक पहुंचा दिया गया। वैज्ञानिक इनका अध्ययन कर रहे हैं। आने वाले समय में हमें इस संबध में और महत्वपूर्ण जानकारियां मिल सकेंगी।

संपादक–साइंस टाइम्स
न्यूज़ एण्ड व्यूज

आओ जानें खगोलीय भाषा

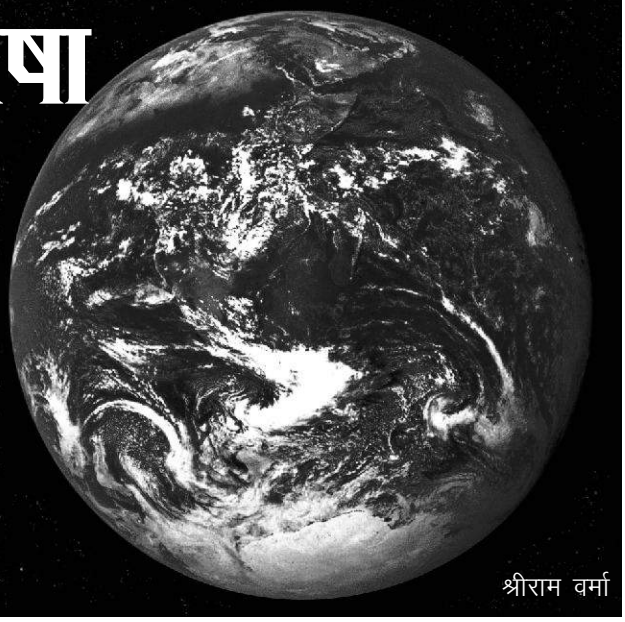

बीती शताब्दी विज्ञान के नाम रही है। विज्ञान ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। विज्ञान की सभी शाखायें अपने यौवन की तरफ अग्रसर हुई हैं। इक्कीसवी शताब्दी में विज्ञान जिन क्षेत्रों में तेजी से आगे बढ़ रहा है उनमें खगोल विज्ञान प्रमुख है। खगोल विज्ञान वेधशालाओं, वैज्ञानिकों तथा विज्ञान संकायों की परिधि से निकलकर सबसे ज्यादा लोकप्रिय हुआ। आज ज्यादातर वैज्ञानिक पत्रिकाएँ, दैनिक पत्र कई खगोलीय जानकारियाँ अपने में संजोये होते हैं। अतः जनसामान्य को खगोलीय भाषा के मूलतत्व की जानकारी आवश्यक है ताकि वो भी प्रकृति के रहस्यों को जान सकें, उसका आनन्द उठा सकें। यहाँ हम कुछ खगोलीय शब्दों की चर्चा करेंगे जिनको जानना जरूरी है।

श्रीराम वर्मा

खगोलीय दूरियाँ

पृथ्वी औसतन 1500 लाख किलोमीटर दूरी पर सूर्य के चारों ओर घूमती है। पृथ्वी और सूर्य के बीच औसतन दूरी को एक खगोलीय इकाई [(एस्ट्रोनोमिकल युनिट (ए.यू.)] कहते हैं। सौरमंडलीय दूरियों को नापने का यह एक पैमाना है। उदाहरण के तौर पर वृहस्पति ग्रह सूर्य से पाँच खगोलीय इकाई (5 ए.यू.) दूर है। प्लूटो सूर्य से औसतन 40 खगोलीय इकाई (40 ए.यू.) दूर है। प्रकाश दो लाख निन्यानबे हजार सात सौ बानबे किमी प्रति सेकण्ड की दर से एक वर्ष में जितनी दूरी तय करता है उसे प्रकाश वर्ष कहते हैं। एक प्रकाश वर्ष 63 हजार खगोलीय इकाई के बराबर होता है अर्थात् 9.5 ट्रिलियन किलोमीटर के बराबर (एक ट्रिलियन = 10^{12})। यहाँ यह जानना जरूरी है कि प्रकाश वर्ष समय नहीं दूरी नापने की इकाई है। उदाहरण के तौर पर सूर्य के अलावा जो तारा हम से सबसे करीब है अल्फा सेन्चुरी वह हमसे लगभग साढ़े चार प्रकाश वर्ष दूर है। ज्यादातर चमकीले तारे हमसे कुछ दर्जन से लेकर सैकड़ों प्रकाश वर्ष दूर हैं। बहुत ज्यादा दूरी नापने के लिए कुछ खगोलयविद् एक दूसरी इकाई पारसेक का प्रयोग करते हैं। एक पारसेक 3.26 प्रकाश वर्ष के बराबर होता है।

आकाश की माप

अक्सर लोग आकाश में दूरियों का वर्णन करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। आइये दो व्यक्तियो की बातचीत सुनते हैं जो इस तरह की होगीः

क्या आप उन दो तारों को देख रहे हैं? एक जो उनमें से 20 सेमी० दूर है।

हाँ लेकिन मुझे तो वो 25 सेमी० दूर दिखाई दे रहे हैं। यहाँ समस्या यह है कि आकाश में दूरियों का रेखीय मापन जैसे सेमी० या मीटर में नही होता। आकाश में दूरियों का कोणीय मापन किया जाता है।

खगोलविद् कहेंगे कि दो तारे 10 डिग्री (10^0) दूर हैं अर्थात यदि आपकी आँख से प्रत्येक तारे तक रेखायें खीची जाये तो दो रेखायें आपकी आँख पर 10 डिग्री कोण बनायेंगी। अगर आप अपनी मुट्ठी को अपनी भुजा की दूरी पर रखकर एक आँख से देखें तो आपकी मुट्ठी 10 डिग्री आकाश को ढक लेगी। भुजा की दूरी पर एक ऊंगली एक डिग्री को कवर करेगी। सूर्य और चन्द्रमा का आकार भिन्न है तथा उनकी पृथ्वी से दूरी भी भिन्न–भिन्न है किंतु पृथ्वी से देखने पर सूर्य और पूर्णमासी का चन्द्रमा ½° चौड़े हैं। क्षैतिज से सर के ठीक ऊपर (जीनिथ) 90° का कोण बनता है। कोणीय मापन की और छोटी इकाईयाँ भी हैं। एक डिग्री 60 आर्क मिनट के बराबर है तथा एक आर्क मिनट 60 आर्क सेकण्ड के बराबर है।

आकाशीय निर्देशांक

पृथ्वी से देखने पर रात में आसमान एक बड़े गुम्बद की तरह दिखाई देता है जिसकी अन्दर की सतह पर तारे जड दिये गये हों। प्रकाश विलुप्त हो जाये तो आपको अपने चारों ओर तारे दिखाई देंगे और आप तारों से जड़े गोले के केन्द्र पर अपने आपको लटका हुआ अनुभव करेंगे।

खगोलविद् तारों की स्थिति खगोलीय गोले पर वहाँ दर्शातें हैं जहाँ वे दिखाई देते हैं। पृथ्वी को खगोलीय गोले के केन्द्र पर लटका हुआ चित्रित करें। कल्पना करें पृथ्वी की लेटिट्यूड तथा लोंगिट्यूड रेखायें बाहर की तरफ फैल रही हैं और खगोलीय गोल पर उन्हें बनायें। अब ये रेखायें आसमान में निर्देशांक ग्रिड उपलब्ध करायेंगी जो कि आकाश में तारों की स्थिति बतायेगी। ठीक उसी तरह जैसे लेटिट्यूड तथा लोंगिट्यूड पृथ्वी पर किसी स्थान या

वस्तु की स्थिति बताते हैं। आकाशीय निर्देशांक में लेटिट्यूड को डिक्लिनेशन तथा लोंगिट्यूड को राइट एसेनसन कहते हैं। डिक्लिनेशन को खगोलीय इक्वेटर की डिग्री, आर्कमिनट और आर्क सेकण्ड उत्तर (+) या दक्षिण (-) से प्रदर्शित करते हैं। राइट एसेसन को डिग्री में प्रदर्शित नहीं किया जाता बल्कि समय के घंटा (h) मिनट (m) सेकण्ड (s) में शून्य से 24 घण्टे तक की इकाई में प्रदर्शित करते हैं। पृथ्वी चूँकि 24 घण्टे में एक बार घूम जाती है इसलिए खगोलीय गोला भी 24 घण्टे में पृथ्वी के चारों ओर एक बार घूमता हुआ प्रतीत होता है।

खगोलविद् तारे की चमक को उसका मेग्नीट्यूड कहते हैं। आपकी इस शब्द से अक्सर भेंट होगी। ईसा से सौ वर्ष पूर्व जब ग्रीक खगोलविद् हिपरकस तारों को उनकी चमक के आधार पर वर्गीकृत कर रहे थे तब यह मेग्नीट्यूड व्यवस्था शुरू हुई। उन्होंने सबसे चमकीले तारे को एक मेग्नीट्यूड का माना। वे तारे जो उससे कम चमकीले थे उनको दूसरा मेग्नीट् यूड माना। इसी तरह घटती चमक के साथ वह 6 मेग्नीट्यूड तक देख पाये।

टेलिस्कोप की खोज के बाद हम बहुत धुंधले तारों को भी देख पाते हैं। इस तरह सातवाँ, आठवाँ मेग्नीट्यूड भी जोड़े गये। उच्च तकनीकी विकसित होने के साथ यह संख्या और आगे बढ़ गई।

यह देखा गया कि हिपरकस के एक मेग्नीट्यूड से भी ज्यादा चमकीले तारे हैं। उनको भी समायोजित करने के लिए ऋणात्मक नम्बर भी इस व्यवस्था में शामिल कर लिए गये। वेगा शून्य मेग्नीट् यूड, चमकीले तारे, साइरस को -1.4 मेग्नीट्यूड तथा चमकीले शुक्र ग्रह की चमक -4 मेग्नीट्यूड तथा पूर्ण चन्द्रमा की चमक -13 मेग्नीट्यूड तथा सूर्य की चमक -27 मेग्नीट्यूड है।

तारे सबके प्यारे

तारे ब्रह्माण्ड का बुनियादी हिस्सा हैं। हमारे सबसे करीब तारे जो कि हमें एक बिन्दु की तरह दिखाई देते हैं उनके विभिन्न आकार हैं तथा उनकी चमक भी अलग अलग है और उनका ताप भी भिन्न भिन्न है। सूरज मध्यम आकार का पीला–सफेद मेन सीक्वैस का तारा है। तारे अपने जीवन का ज्यादातर हिस्सा तारों के उद्भव की मेनसीक्वैस में प्रज्वलन में बिताते है। सभी तारों को उनकी स्पेक्ट्रम के अनुसार, जो कि ज्यादातर उनके तापक्रम तथा उनके आकार, उम्र तथा दूसरी विशेषताओं पर आधारित है, वर्गीकृत किया जाता है।

तारों के केन्द्र में हाइड्रोजन लगातार जलकर नाभिकीय क्रिया द्वारा हीलियम में बदल रही है। इस नाभिकीय क्रिया में बहुत ऊर्जा पैदा होती है जो कि तारे में तापक्रम तथा प्रकाश के लिए उत्तरदायी है। हमारे सूर्य में प्रतिक्षण सात हजार लाख टन हाइड्रोजन, छः हजार नौ सौ पचास लाख टन हीलियम में बदल रही है और पचास लाख टन ऊर्जा में परिवर्तित हो रही है। तारों का भी अपना जीवन चक्र होता है। तारे पैदा होते हैं, जवान होते हैं, उन्हें बुढ़ापा भी आता है और अन्त में वे मर जाते हैं। किसी तारे की मौत किस तरह होगी यह उसमें स्थित द्रव्यमान पर निर्भर करता है। अगर तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान के 1.4 गुने से कम हो तो वह मौत के बाद सफेद बौने तारे में बदल जायेगा। अगर तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 1.4 गुने ज्यादा हो पर तीन गुने से कम हो तो तारा न्यूट्रोन तारे में बदल जायेगा। यदि तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान के तीन गुने से ज्यादा होगा तो वह ब्लैक होल में बदल जायेगा। इस सिद्धान्त को भारतीय वैज्ञानिक सुब्रम्हण्यम चन्द्रशेखर के नाम पर चन्द्रशेखर लिमिट कहा जाता है। सूर्य अब अपने यौवन के उतार पर है। सूर्य की कुल उम्र करीब दस अरब वर्ष है। अब तक उसके जन्म को करीब पाँच अरब वर्ष बीत चुके हैं। पाँच अरब वर्ष बाद सूर्य की ज्यादातर हाइड्रोजन हीलियम में बदल चुकी होगी और सूरज अपने मृत्यु से पूर्व अपने परिवार के ज्यादातर ग्रहों को निगल जायेगा तथा अन्त में सफेद बौने तारे में बदल जायेगा।

अन्तरिक्ष में हमारा स्थान

पृथ्वी हमारे सौरमण्डल के नौ ग्रहों में से एक ग्रह है जो सूरज के चारों ओर चक्कर काट रही है। हमारे सौर मण्डल का केन्द्र हमारा सूर्य एक तारा है। हमारी गैलेक्सी में ऐसे 100 अरब तारे हैं। हमारा सूरज हमारी गैलेक्सी आकश गंगा की एक भुजा के एक कोने में स्थित है। वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार हमारे ब्रह्माण्ड में छोटी–बड़ी सभी को मिलाकर लगभग 100 अरब गैलेक्सियाँ हैं। हमारे सबसे करीब अन्ड्रोमेडा गैलेक्सी है जो हमसे 25 लाख प्रकाश वर्ष दूर है और दूसरी गैलेक्सियाँ महाशून्य में समूहों में बिखरी हुई है।

हमारे सौर मण्डल में ग्रहों के आकार ग्रहों की आपस में बीच की दूरी की तुलना में बहुत छोटे हैं। अगर हम कल्पना करें कि सूर्य का व्यास एक मीटर है तो सूर्य और पृथ्वी की दूरी लगभग 108 मीटर होगी। शुक्र ग्रह जो पृथ्वी से सबसे करीब है वो भी पैमाने के अनुसार 29 मीटर दूर होगा और प्लूटो हमसे करीब 3 किलोमीटर दूर होगा। स्पष्ट है अन्तरिक्ष में ज्यादातर जगह खाली है। ब्रह्माण्ड एक महाशून्य की तरह है जिसमें जहाँ तहाँ ग्रह, तारे और

एसोशिएट प्रोफेसर,
भौतिक विज्ञान विभाग,
डी०बी०एस० कालेज, देहरादून
पूर्व उपाध्यक्ष : भारतीय विज्ञान लेखक संघ,
उत्तराखण्ड प्रभाग

अजय कुमार बियानी

भारत की धरती की कहानी
मकराना संगमरमर की जुबानी

मैं मकराना का सर्वश्रष्ठ सफेद संगमरमर। अवसर मुझमें से तराशी गई भगवान की भव्य मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा का प्राणप्रतिष्ठा के समारोह मे बोलते हुए उच्च कोटि के पंडित जी देश की महिमा का वर्णन करते हुए एक जगह बोले, यह भारत ही दुनिया का एक मात्र देश है जहाँ पर हर तरह की विविधता होते हुए भी एकता है और भगवान ने वरद् हस्त से देश को तरह–तरह के खनिज, जलवायु, खाद्यान्न एवं प्राकृतिक सौंदर्य प्रदान कर एक विशिष्टता दी है। हमारे भगवानों की मूर्तियाँ तरह–तरह के काले, पीले, लाल, हरे, भूरे रंगों से बनती हैं पर जो यह सफेद रंग के पत्थर से बनी मूर्ति है यह अपने आप में अद्भूत आभा लिए हुए है और ऐसा लग रहा है मानो भगवान साक्षात उतर कर यहाँ पर विराजमान हो गए हैं। इतनी प्रशंसा सुनकर मुझे अपने आप पर गर्व होना स्वाभाविक ही है। आखिरकार मैं भगवान का पर्याय जो हो गया हूँ। सौंदर्य बोध के विचारों से अभिभूत मैं न जाने कब अपने अतीत में चला गया, पता ही नही चला। मैं एक संयुक्त परिवार का सदस्य किसी पलने मे पलकर फला फूला और मेरे पलने मे कई और संताने फली फूलीं। आज का यह क्षण मेरे लिये भले ही आल्हादित करने वाला हो परन्तु मेरा अतीत? क्या नहीं देखा? क्या नहीं सहा? क्या था और क्या हो गया? मेरे सामने पत्थरों के बड़े–बड़े साम्राज्य बने और बिगड़े। मेरे से पूर्व सूदूर अतीत के पूर्वजों ने वर्षों वीरान मरुस्थल में अपने आपको जैसे तैसे बचाया। उनके साथ–साथ मुझको भी कुछ समय पूर्व ही छाया नसीब हुई। अन्यथा अगर प्रकृति मेहेरबान न हुई होती तो हमारे ऊपर मिट्टी की एक छोटी सी टोपी रहती थी। न हमें दिन का भान था न रात का। ऋतु चक्र के नाम पर हमने बड़ी–बड़ी करोड़ों वर्षो वाली ऊष्ण कालीन और शीतकालीन अवधियां भी देखी है। जब जरूरत लगेगी तो हम गवाही देने को भी तैयार हैं। हमें बेदर्दी से काटा, पीटा, तोड़ा और मरोड़ा गया। यह सब इस भारत भूमि में हमारे साथ हुआ। अगर संक्षेप मे कहूं तो हमारा वर्णन एक रोचक जासूसी उपन्यास से कम नहीं है।

अक्सर मेरे सगे सम्बन्धी जो इस देश में इधर–उधर फैले हुए हैं, मुझसे आग्रह करते हैं कि मैं उन्हे अपने वंश के अतीत के बारे मे बताऊँ। इस देश का अतीत। इस देश का ही क्यो? पूरे विश्व का क्यों नही? हम पत्थर किसी देश की सीमा से बंधे हुए नहीं हैं। मानव जाति के श्रृंखला बद्ध इतिहास से तो आप सब लोग भली भाँति परिचित हैं। यह मुश्किल से छः सात हजार वर्ष पुराना होगा जब कि अवशेषों के आधार पर मानव के विकास की कहानी कम से कम 4.5 करोड़ वर्ष पूर्व ही प्रारभ्भ हो चुकी थी। आदिम मानव संभवतः प्राकृतिक शक्तियों के आगे बेबस होने के कारण अपना इतिहास निर्मित न कर पाया हो परन्तु विश्व के अन्य देशों के साथ भारत का उद्भव और विकास अरबों वर्ष पूर्व शुरू हो गया था और इसके इतिहास के महत्वपूर्ण प्रमाण चट्टानों में उसी तरह सुरक्षित हैं जैसे बैंकों मे आपके डिपाजिट्स्। एक और राज़ की बात बताऊँ। देश की राजनीतिक सीमाएँ राज्यकर्ता की सक्षमता पर निर्भर होती हैं। कल्पना कीजिए कि सरदार पटेल अगर राजाओं की इच्छा का पालन करते तो यह भूभाग एक देश न होकर 600 अलग–अलग देशों मे बंटा हुआ होता। भारत की प्राकृतिक सीमाएं भी अपने लम्बे इतिहास में दसियों बार बनीं और बिगडी हैं, और यह देश कभी इधर कभी उधर भटकता रहा था।, कभी किसी से जुड़ा और मन न हुआ तो बिछुड़ा भी। एशियाई कुनबे में शामिल होने के पूर्व इसके कुनबे का नाम था गोंडवाना। गोंडवाना रूपी संयुक्त परिवार में छोटे–मोटे देशों से लेकर बड़े–बड़े महाद्वीप शामिल थे। प्रकृति के नियम के अनुसार जुड़ाव के बाद बिखराव होना अवश्यंभावी था। तो भारत भी अपवाद नहीं रहा। भारत ने अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का निर्माण करीब 11–12

करोड़ वर्ष पूर्व किया था। नाते–रिश्तेदारों से स्वतंत्र हुए विशाल भूखंड को अपना बसेरा ढूंढने के लिए उत्तर की ओर चलना पड़ा। कद, काठी, बनावट तथा गठन की सक्षमता के कारण इसका 7000 किलोमीटर लम्बा सफर बिना नुकसान के तो हुआ पर इस लम्बे सफर ने इसको ऐसे स्थान पर छोड़ा जहाँ से इसका अल्प परन्तु सतत विनाश शुरू हो गया। समय के साथ भविष्य में इस पृथ्वी पर उभरने वाली नई हस्त रेखाएं ही इस विनाश को रोक सकती है, अन्यथा!

विनाश की बात को छोड़िए। मैं आपको फ्लेश बैक मे ले चलता हूँ। हमारी पृथ्वी 460 करोड़ वर्ष पूर्व बन चुकी है। इसका आकार तो फुटबाल की तरह गोल माटोल है परन्तु इसका स्वभाव? सांप की तरह फुफकारती मूल पृथ्वी थी अत्यंत ऊष्ण पिघले हुए लोहे की भांति तरल। बार–बार इसमें बुलबुले इस तरह फूट रहे थे जैसे दिवाली के अनार और जैसे एक पानी के किनारे बैठा चंचल बच्चा पानी में लगातार कंकड़ पत्थर फेंकता रहता है उसी तरह से आसमान से इसमें रह रह कर उल्काएं गिर रही थीं। पृथ्वी के ठंडे होने का दृश्य कुछ इस तरह का समझिये कि गैस पर दूध उबल रहा है और उबलते हुए दूध मे उपर जिस तरह से मलाई की परत बन जाती है और अन्दर से उत्पन्न बुलबुले उस मलाई की परत को नष्ट करते रहते हैं उसी तरह की पृथ्वी की बाहरी सतह का हाल था। धीरे–धीरे करोड़ों वर्षों मे ठंडी होती पृथ्वी की बाहरी परत में कुछ ठोसता के साथ कठोरता आई। शुरूआत के पचास करोड़ वर्ष मे क्या हुआ और क्या न हुआ होगा यह सब भूवैज्ञानिक कल्पनाशीलता का मामला है। आरंभ मे न तो भारत था, न ही अफ्रीका या अमेरिका। न समुद्र था और न ही वायुमंडल। गर्म वातावरण में तो जीवन का सवाल ही नहीं उठता था। उस वक्त का मात्र ठोस होता हुआ तप्त गोला आज कितनी विविधता लिए हुए है, इसको निहार कर मै अक्सर दातों से अंगुली चबा लेता हूँ।

धीरे–धीरे ठंडे होते धरातल पर कहीं से तो पानी और वायु आई होगी। कुछ लोग कहते हैं उनकी उत्पति पृथ्वी के अन्दर से हुई है तो दूसरे मत के लोग पृथ्वी के बाहर की उत्पति बताते हैं। एक बात अवश्य है। उस वक्त का जल और वायुमंडल आज के मुकाबले मे बहुत ही अलग थे। समय के साथ इनका विस्तार और इनमें परिवर्तन होता गया। जगह–जगह पर पृथ्वी पर छिछले समुद्र दिखने लगे। इन विशाल छिछले समुद्रों में सूखे द्वीप की भांति जमीन तो यदा–कदा ही दिखती थी। शुरूवाती द्वीप तो उभरते रहे और नष्ट होते रहे। मेरे परिवार का प्राचीनतम सदस्य तो अत्यंत ठंढे ग्रीनलेंड मे निवास करता है। इनकी आयु 430 करोड़ वर्ष के आसपास की है। मेरे प्रपितामहगण विभिन्न महाद्वीपों में अभी शान के साथ मौजूद हैं और आपको यह जानकार आश्चर्य होगा कि हजारों भूवैज्ञानिकों ने उन पर शोध कर उच्च उपाधियां अर्जित की हैं और भविष्य में भी करते रहेंगे। पूरी पृथ्वी पर धरातल की बुनियाद लगभग एक समयावधि (350 करोड़) में पच्चीस स्थलों पर रखी गई थी। इन स्थलों को भूवैज्ञानिक अर्कियन क्रेटानिक न्यूक्लियस कहते हैं। हो सकता है आदि प्राचीन काल में इन न्यूक्लियसों की संख्या और अधिक रही हो। वर्तमान मे अस्तित्व हीन न्यूक्लियसों को काल रूपी भूवैज्ञानिक क्रियाओं ने अपने उदर मे उसी प्रकार समाहित कर लिया होगा जैसे नवजात शिशु को मृत्यु के पश्चात् दफना दिया जाता है। आज हमें बात तो उनकी करनी है जो हैं। इन सब प्रपितामहगणों की आयु करीब 350 करोड़ वर्ष के आसपास की है। विशाल पृथ्वी पर इनका घर एक छोटी सी कुटियां की भांति है।

मैं मकराना का संगमरमर रायलो खानदान का सदस्य हूँ। अगर मैं आपको पूरे विश्व की कहानी सारांश में भी सुनाऊँ तो काफी समय ले लेगी। आपको तो अपने देश की ही कहानी सुननी है तो मैं आपको आज वही बताता हूँ। अगर आप अपने देश का प्राकृतिक नक्शा देखें तो आपको तुरन्त देश तीन भागों विभक्त हुआ प्रतीत होगा। दक्षिण का प्राचीन प्रायद्विपीय पठार, मध्य में मैदान और उत्तर मे पर्वतीय हिमालय प्रदेश। दक्षिण का प्रायद्वीपीय भाग विश्व के प्राचीनतम क्षेत्रो में से एक हैं। आज से 350 करोड़ वर्ष पूर्व भारत माता ने एक साथ पाँच पुत्रों को जन्म दिया, ये पुत्र पाँच द्वीपों के रूप मे उभरे थे। ये द्वीप आजके राजस्थान, बुन्देलखंड, झारखंड, कर्नाटक एवं छत्तीसगढ़–महाराष्ट्र में थे। छिछले समुद्र से घिरे ये द्वीप प्रारंभ मे तो विशाल काय रहे होगे। पर समय के आगे किसी की नही चलने के कारण आज इनका अस्तित्व सिमटकर एक अत्यंत छोटे भू–भाग पर रह गया है। हाँ, बुन्देलखंड वाला द्वीप अभी भी काफी बड़ा है। अब आप मुझसे अवश्य पूछेंगे कि ये द्वीप किस पदार्थ से निर्मित थे। जिस भूमि पर आप रह रहे हैं उसका निर्माण चट्टानों से या अगर परिष्कृत शब्दावली का उपयोग करें तो शैलों से और उनके टूटने या नष्ट होने से उत्पन्न मलवे से होता है। ये द्वीप भी शैलों से बने थे।

तो भारत की धरती के इन पाँच प्राचीनतम पुत्रों को वैज्ञानिक 'क्रेटान' कहते हैं। सामान्य तौर पर पृथ्वी का वह भूभाग जिसमें पिछले 54 करोड़ वर्ष मे विशेष उथल पुथल नहीं हुई हो उसे क्रेटान के नाम से जाना जाता है। जिस प्रकार मानव शरीर का विकास होता है उसी प्रकार इन क्रेटानों का विकास हुआ है। अन्तर इतना ही होता है कि मानव शरीर का विकास कुछ दशक तक ही होता है और क्रेटान का 100 करोड़ वर्ष से अधिक। चौंकिए नहीं हमारी जिन्दगी इतनी लम्बी होती है कि हमारे लिये सौ–दो सौ सालों का ही नहीं बल्कि करोड़ों सालों का कोई महत्व नहीं होता है। सबसे पहले बस्तर, सिंगभूम (सिंह भूमि, ओरिसा) और बुन्देलखंड के क्रेटान 350 करोड़ वर्ष पूर्व उभरे। उसके पश्चात धारवाड़ और अरावली क्रेटान 340 और 330 करोड़ वर्ष पूर्व उभरे थे। भारत के पास भले ही विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यता हो परन्तु सबसे प्राचीन शैल नहीं है। आज कर्नाटक के धारवाड़ क्रेटान का सामाज्य करीब 4.5 लाख वर्ग किलोमीटर मे फैला हुआ है। इस साम्राज्य का निर्माण होने में करीब 90 करोड़ वर्ष (340–250 करोड़ वर्ष) लगे थे। बस्तर क्रेटान राज्य 1.3 लाख वर्ग किमी मे फैला हुआ है जो 170 करोड़ वर्ष मे निर्मित हुआ था। मै मकराना का संगमरमर एक लाख वर्ग किमी में फैले अरावली क्रेटान का ही एक अंग हूँ जिसका विकास लम्बे समय तक चलता रहा जो 70 करोड़ वर्ष पूर्व ही समाप्त हुआ। सिंगभूम और बुन्देलखंड क्रेटान

शैल अपने आप मे एक बड़े कौतू हल का विषय हैं। भू–वैज्ञानिक अभी भी इनके बनने की प्रक्रिया को पूर्ण रूप से समझ नही पाए हैं। फिर भी मोटे तौर पर आप यह मानकर चलें कि शैलों के तीन प्रकार होते है। आपने अक्सर टीवी मे ज्वालामुखियों को फूटते हुए देखा होगा। उनमे से तप्त लाल रंग का पिघला गाढ़ा तरल पदार्थ निकलता है, इसे आप लावा कहकर पुकारते है। यही पदार्थ ठंडा होने पर कठोर चट्टान का रूप ले लेता है तब इसे वितलीय आग्नेय शैल के रूप मे जाना जाता है। शक्तिहीन अवस्था मे अगर लावा बाहर नही आ पाए तो वह धीरे–धीरे जमीन के अन्दर ही ठंडा होकर शैल बन जाता है, इसे पातालीय आग्नेय शैल कहते है। आपके घरों में लगा ग्रेनाइट इसी श्रेणी का है। नदी के पानी में अक्सर रेत बहती दिखती है। इन बहते हुए छोटे–बड़े कणों को भूविज्ञानी अवसाद अथवा 'सेडीमेन्ट' कहते है। जी हाँ! आपके घर मे जमने वाली धूल भी अवसाद का ही एक रूप है। नदी का अंतिम गंतब्य समुद्र होने के कारण अवसाद समुद्र में जमा हो जाता है। उचित वातावरण में ये कण आपस मे जुड़ जाते है और अवसादी शैलों का निर्माण करते हैं। आग्नेय और अवसादी शैल किसी कारण से अगर जमीन मे घँसते जाते हैं तो इनका सामना नारकीय परिस्थितियों से होता है। भट्टी के अन्दर 'थर्ड डिग्री' वाला अत्याचार, इनके रंग–रूप ही नही बल्कि खनिजों की प्रकृति मे भी आमूल चूल परिवर्तन कर देता है। परिवर्तित कलेवर के ये शैल कायान्तरित शैलों के नाम से जाने जाते हैं। रायलो परिवार ने भी यह कष्ट भोगा है। पृथ्वी के धरातल की रचना इन तीन प्रकार की शैलों से ही हुई है। इस पत्रिका के हर अंक ये आपको भूविज्ञान से संबंधित जानकारी मिलेगी इसलिए मैं आपको उपरोक्त तीनों श्रेणियो के कुछ शैलों के नाम बता दूं यथा ग्रेनाइट, पैग्माटाईट, डनाइट, ग्रैब्रो एवं पैरिडोटाइट पातालीय आग्नेय शैल हैं वहीं पर बैसाल्ट, ग्लास, रायोलाइट और एपलाइट लावा से बनने वाले शैल हैं। कांग्लोमरेट, ब्रेक्सिया, सैडस्टोन, लाइमस्टोन एवं शेल अवसादी शैल है। स्लेट, शीस्ट, नाइस मार्बल, क्वार्टजाइट, ग्रीन स्टोन एवं ग्रेनू लाइट कायान्तरित शैल है।

आज 50000 और 30000 वर्ग किमी मे फैले हुए है पर इनका विकास भी बड़ा दीर्घ कालीन रहा। आपको इतिहास मे तो आनन्द आता ही होगा। बड़े से बड़े साम्राज्यों की नींव बड़े ही छोटे राज्यों से होती थी। पुरुषार्थ के बल पर वंश के अन्य राजागण साम्राज्य का विस्तार करते थे। राज्यों का विस्तार एक तरफा नहीं होता है। कई बार राजाओं को संधि कर अपने राज्य को दूसरों को देना पड़ता था या कई बार राज्य पर दूसरों का कब्जा हो जाता था। ऐसा ही इन क्रेटानो के साथ हुआ है। इनके शुरूआती अवशेष तो बहुत ही छोटे–छोटे बिखरे हुए मिलते हैं पर इन्ही अवशेषों के चारों तरफ विकास शुरू हुआ। विकास के प्रवाह मे इनसे निकले अवसाद इन्ही के आसपास जमा हो गए जो बाद मे कायान्तरित शैलों के रूप मे अनाड़ी आदमी द्वारा बनाई हुई जलेबी की तरह एक के बाद एक पट्टी के रूप में जुड़ते रहे। इस प्रक्रिया मे आग्नेय शैलों का भी योगदान कम नहीं रहा, बल्कि बुन्देलखण्ड क्रेटान का अधिकतर हिस्सा तो आग्नेय शैलों का ही है। 100 करोड़ वर्ष की विकास मात्रा में इन क्रेटानों के संस्थापको के अन्दर तथा आसपास कई गतिविधियाँ चलती रहीं, परन्तु कोई भी गतिविधि निर्बाध रूप से इतने लम्बे समय तक नही चली। समय के अन्तराल के साथ आग्नेय, अवसादी और कायान्तरित शैलों द्वारा क्रेटानों का विस्तार होता गया। इन सब क्रेटानों के उत्थान और पतन का क्रमबद्ध इतिहास भू–वैज्ञानिक किताबों और पत्रिकाओं मे उपलब्ध है। कर्नाटक का धारवाड क्रेटान सूदूर दक्षिण को छोड़ मंगलौर से लेकर चैन्नई, गोवा–हैदराबाद–बंगलौर तक फैला हुआ है। बस्तर क्रेटान का विस्तार, रायपुर, जगदलपुर, दान्तेवाड़ा (अत्यधिक नक्सली प्रभावित क्षेत्र), बैलाडीला और खैरागड़ के मध्य में है। जमशेदपुर और कैओंझर का क्षेत्र सिंगभूम क्रेटान के अन्तर्गत आता है जबकि झांसी से लेकर छतरपुर – महोबा का क्षेत्र बुन्देलखंड में आता है। दिल्ली – अलवर – जयपुर – भीलवाड़ा – उदयपुर का पट्टी नुमा क्षेत्र अरावली क्रेटान का है।

मैं अरावली क्रेटान के वंश का सदस्य होने के कारण आपको बताना चाहूंगा कि यह महा परिवार आठ अलग–अलग इकाइयों का बना हुआ है जो एक लम्बी अवधि में बनी थी। प्रत्येक इकाई का अपना विविधता पूर्ण अतीत रहा है। अति प्राचीन अवशेषों को एंशिएण्ट सुप्राक्रस्टल एन्क्लेव कहा जाता है, इन्हें दक्षिणी राजस्थान के जगत क्षेत्र मे देखा जा सकता है। यह अवशेष मेवाड़ नीस (नाईस) मे मिलते हैं। मेवाड़ नीस के बनने के पश्चात् भील वाडा सुपर ग्रुप के शैल बने। उसके बाद अरावली तथा दिल्ली सुपरग्रूप के शैल। मैं दिल्ली सुपरग्रुप की ही एक शाखा जिसे रायलो ग्रुप के नाम से जाना जाता है का सदस्य हूं। मेरी आयु 130–140 करोड़ वर्ष की मानी जाती है। मेरे उत्पन्न होने पश्चात बहुत से सदस्य अत्यंत साधारण व्यक्तित्व के कारण प्रसिद्धि न पा सके पर मलानी और मारवाड़ समूहों की शैलों का व्यक्तित्व अत्यंत आकर्षक रहा है।

इसी प्रकार अन्य क्रेटानों का विकास हुआ। विकास की प्रक्रिया की जटिल गहराई मे जाना संभवत : आपकी मुझमें रोचकता को खत्म कर देगा, इसलिए मैं कई बहुत–सी छोटी–बड़ी घटनाओं का क्षेत्रवार विवरण बाद में कभी आपको सुनाऊंगा। अक्सर इस धरती को जिसे आप भारत माता पुकार कर अपने आप को गौरवान्वित महसूस करते है प्रकृति द्वारा काटा गया, चीरा गया, पीटा गया, मरोड़ा गया, गरम–गरम सलाखों से दागा गया और साथ ही खनिज रूपी आभूषणों से भी सजाया गया। उपरोक्त क्रियाओं की ऊर्जा का स्रोत पृथ्वी के अंदर की गर्मी ही थी जो निकलने के लिए बेचैन थी चाहे उसे किसी भी रूप मे निकलना पड़े। आज भी तो पृथ्वी की गर्मी बाहर निकल रही है। जब ऊपर वर्णित सारी क्रियाएँ करोड़ों वर्षों के लिए एक लम्बे किन्तु पतले क्षेत्र मे सक्रिय हो जाएँ तो आप कल्पना कीजिए कि क्या हुआ होगा। ऐसे क्षेत्रों को भूवैज्ञानिक 'मोबाइल बेल्ट' कहते हैं। दक्षिण भारत मे तीन मोबाइल बेल्ट पहचाने गए इनको पांडियन, ईस्टर्न घाट और सतपुड़ा मोबाइल बेल्ट के नाम से जाना जाता है। मोबाइल बेल्ट का एक कार्य पृथ्वी के ऊपर गगन चुंबी पहाड़ बनाना है। समय के साथ जरा अवस्था मे होने के कारण इन मोबाइल बेल्टों के पहाड़ अब अपना पुराना रुतबा खो चुके हैं। पांडियन,

इस्टर्न घाट और सतपुड़ा मोबाइल बेल्ट क्रमश सूदूर दक्षिण, पूर्वी और मध्य भारत में विकसित हुए थे।

एक बार प्रायद्विपीय भारत अस्तित्व मे आ जाने के काफी बाद इसके धरातल पर अस्थिरता के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। यह ऐसा ही है जैसे लम्बे समय तक चलने वाले साम्राज्यों मे विद्रोह होते हैं। इस अस्थिरता के फलस्वरूप 180–170 करोड़ वर्षों के मध्य में छोटे–छोटे क्षेत्रों मे ग्वालियर, बीजावर एवं सोनराय गड़ढ़े उभरे और अवसाद के जमा होने के फलस्वरूप शैलों का निर्माण हुआ। इसके तुरन्त बाद (160 करोड़ वर्ष पूर्व) बड़े पैमाने पर उथल पुथल होने के फलस्वरूप समुद्र ने जमीन पर धावा बोलकर आंध्र प्रदेश के कड़प्प कालाद्गी, भीमा, प्रणहिता–गोदावरी एवं छत्तीसगढ़–ओड़ीसा की हजारों वर्ग किलोमीटर भूमि पर जल का साम्राज्य स्थापित किया। इस समुद्री जल में नदियो द्वारा लाये गए अवसाद जमा होने से अवसादी शैलों का निर्माण हुआ। इसी समय मध्य भारत में छिछले समुद्र ने अपनी धाक जमा कर राजस्थान से लेकर बिहार तक विन्ध्य शैलों का निर्माण किया। विन्ध्य की आयु की कहानी इसी अंक में है जिसे पढ़कर आपको समझ में आएगा कि विज्ञान कितना विज्ञान है और जब अज्ञानी इसमें अराजकता उत्पन्न करते हैं तो ज्ञानी को कितना कष्ट सहना पड़ता है।

समुद्री साम्राज्य के नष्ट होने के पश्चात् काफी लम्बे समय तक दक्षिण भारत में शांति रही। एक बार फिर सुगबुगाहट के संकेत 30 करोड़ वर्ष पूर्व शुरू हुए और उत्पन्न गतिविधियाँ 16 करोड़ वर्ष पूर्व समाप्त हुई। इस दौरान भूमि पर बड़ी–बड़ी सादे पानी की झीलें बनी। ये झीलें पृथ्वी के अन्दर से उत्पन्न तनाव से बनी थीं। इन झीलों में गोंडवाना समूह की शैलों के अवसाद जमा हुए जो मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश झारखण्ड, बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश मे मिलते हैं। इन अवसादी शैलों का महत्व भारत की आर्थिक प्रगति में कोयले के कारण बहुत अधिक है। इसी वक्त गोंडवाना रूपी महाद्वीप के संयुक्त परिवार के विघटन की रूपरेखा तैयार होने लग गई थी। समुद्र ने फिर भारत की भूमि पर रैकी करना शुरू किया और इस रैकी के अवशेष विभिन्न स्थलों यथा कच्छ (गुजरात), उमरिया, बाघ एवं जबलपुर (म.प्र.), डाल्टनगंज (झारखण्ड), राजस्थान आदि कई जगह मिलते हैं। दक्षिण भारत में तमिलनाडु में अरियालूर क्षेत्र के बहुत बड़े भाग पर अल्प समय के लिए समुद्र ने अपना आधियत्य जमा कर शैलों का भण्डार बनाया। सिलहट (13 करोड़ वर्ष पूर्व) पंजाल और राजमहल (11.5 करोड़ वर्ष पूर्व) मे ज्वालामुखियों ने समुद्र को चुनौती देकर अपने आधिपत्य का निशान अवतलीय आग्नेय शैलों के रूप में छोड़ा। सिलहट, पंजाल और राजमहल में ज्वालामुखियों द्वारा निर्मित बेसाल्ट भले ही बहुत छोटे क्षेत्र में हों परन्तु आने वाले भविष्य में पृथ्वी के रौद्र रूप के संकेत मात्र थे, ठीक उसी प्रकार जैसे भगवान शंकर ने अपना तीसरा नेत्र खोल कर पृथ्वी पर आग का तांडव किया था।

स्वच्छन्द भारत अपनी उत्तर दिशा की यात्रा में नियति के चलते 'रियूनियन हाट स्पाट' के क्षेत्र पर से गुजरने लगा। इस अनधिकृत चेष्टा ने पृथ्वी के अन्दरी धधकते हुए मैग्मा भण्डार के सुप्त रौद्र रूप को खुल कर मुखर होने का अवसर दिया। पश्चिमी और मध्यभारत की धरती पर एकाएक हजारों ज्वालामुखी रूपी क्रुद्ध नाग फुफकारने लगे। मात्र 10 लाख वर्ष के अन्दर (6.6 से 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व) यह क्षेत्र (पाच लाख वर्गी कि.मी.) बेसाल्ट के आवरण से ढक गया। जितना आज बेसाल्ट जमीन पर दिखता है उससे दो गुना अधिक अरब सागर की तलहटी में मौजूद है। इस आवरण की अधिकतम मोटाई 3 किमी तक की है। करीब 2 लाख घन किमी लावा धरातल पर आया था। इस क्षेत्र को भारतीय भूवैज्ञानिक 'डेक्कन ट्रेप' के नाम से पुकारते है। आप हाट स्पाट का आशय उस बड़े क्षेत्र के रूप में जान चुके होगे जहाँ पर अक्सर ज्वालामुखी फूटते रहते है। रियुनियन हाटस्पाट 800 किमी व्यास वाला वृताकर पाइप था। राजमहल, सिलहट और पंजाल की ज्वालामुखी शैलों को केरगुलेन हाटस्पाट ने बनाया था। आज के हवाई द्वीप समूह भी हाट स्पाट के ऊपर हैं।

प्रायद्वीपीय भारत के उद्भव की कहानी अब अंतिम चरण में पहुच चुकी है। प्राणी जगत के कल्याण और सतता के लिए पृथ्वी माता को अपने आपको युवा बनाए रखना जरूरी है। इसी क्रियाशीलता के चलते गुजरात, राजस्थान और पूर्वी भारत में समुद ने पिछले 6 करोड़ वर्ष में अलग–अलग समय में प्रवेश किया। समुद्रीय आगमन के कारण इन क्षेत्रों मे जो शैल निर्मित हुए वे आज हमें पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस दे रहे हैं। कई स्थलों पर इस समय में बने शैल नदियों द्वारा जमा किए गए मलबे जिसे हम 'एलूवियम' के नाम से जानते हैं, के नीचे दब गए। राजस्थान में तो एलूवियम भी थार मरूस्थल की रेत के नीचे दब चुका है। पिछले 6 करोड़ वर्षो में अन्डमान और निकोबार द्वीप समूह भी बने हैं। शैलों का बनना और बिगड़ना आज भी जारी है। अपेक्षाकृत नवीन समय के शैल पूरे समुद्र तटीय क्षेत्र में पाये जाते हैं।

आप में अवश्य उत्सुकता जागेगी कि जहाँ पर शैल नहीं बन रही है वहाँ पर आज क्या हो रहा है? मेरा उत्तर है कि वहाँ पर मिट्टी बन रही है। अगर मिट्टी नहीं होगी तो क्या आप पत्थरों में खेती कर लेंगे? कदापि नहीं। मिट्टी भी आपके लिए उतनी ही आवश्यक है जितने हम पत्थर।

अभी भारत की धरती की कहानी खत्म नहीं हुई है। अभी तो विश्व के सिरमौर हिमालय पर्वत (सात लाख वर्ग किमी) और विश्व के सबसे बड़े मैदान–गंगा–सिंधु मैदान– की कहानी बाकी है। अगर आपको यह कहानी पंसद आएगी तो अगले अंकों में इन दो क्षेत्रों की कहानी भी सुनाऊंगा।

भू–विज्ञान विभाग,
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून

हरित रसायन
मानव जीवन एवं पर्यावरण सुरक्षा का सशक्त प्रयास

रघुनन्दन प्रसाद चमोली

रसायन शास्त्र, विज्ञान की वह शाखा है जिसमें पदार्थों की संरचना, गुणों एवं रासायनिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। औषधियों, खाद्य पदार्थों, वस्त्रोद्योग में प्रयुक्त रेशों, रंजकों, पेंट, सौन्दर्य प्रसाधनों, प्लास्टिक और कृषि रसायनों आदि के संश्लेषण में रासायनिक अभिक्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। मानव जीवन के सभी पहलुओं के गुणात्मक उन्नयन में रसायन शास्त्र का उल्लेखनीय योगदान रहा है। औषधियाओं के निर्माण में रसायन शास्त्र के महत्वपूर्ण योगदान का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि वर्ष 1900 में मनुष्य की औसत आयु 47 वर्ष थी और 1990 में यह बढतकर 75 वर्ष हो गई। आज, रसायन शास्त्र और रासायनिक अभिक्रियाओं के वगैर मानव समुदाय के सुविधा सम्पन्न जीवन की कल्पना करना भी सम्भव नहीं है।

रासायनिक अभिक्रियाओं में अनेक प्रकार के क्रियाकारी पदार्थ, अभिक्रमक एवं विलायक प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त होते हैं। ये सभी सामान्यतया मनुष्यों और पृथ्वी पर विद्यमान अन्य जीव–जन्तुओं तथा पेड़–पौधों के जीवन पर घातक प्रभाव डालते हैं। औद्योगिक स्तर की रासायनिक अभिक्रियाओं में वांछित उत्पादों के साथ–साथ अवांछित उप–उत्पाद अथवा पार्श्व–उत्पाद बनने के कारण बहुत बड़ी मात्रा में अपशिष्ट का भी निर्माण होता है। इस प्रकार उत्पन्न अपशिष्ट को आमतौर पर वायुमण्डल, नदियों, समुद्र या जमीन में विसर्जित कर दिया जाता है। जिसके कारण पर्यावरण प्रदूषण की विकट समस्या उत्पन्न हो जाती है, साथ ही विसर्जन मे काफी मात्रा में धन व्यय करना पड़ता है और धन के इस ऊपव्यय के कारण निर्मित पदार्थों के मूल्य में अनचाही वृद्धि हो जाती है। रासायनिक अभिक्रियाओं के दौरान विषाक्त पदार्थों के निर्माण एवं हानिकारक गैसों के रिसाव के कारण आये–दिन दुर्घटनाएं होती रहती हैं। भोपाल की भयानक दुर्घटना को अभी भी लोग भूले नहीं हैं। वहां स्थित यूनियन कार्बाइड सयंत्र में दिसम्बर, 1984 को मेथिल आइसोसायनेट के रिसाव के कारण हुई हृदय–विदारक दुर्घटना में लगभग 2,500 से अधिक लोग मौत के मुंह में चले गये थे, और डेढ़ लाख से अधिक लोग बुरी तरह से घायल हुए थे। भयानक और घातक रसायनों के प्रभाव से हमारा वायुमण्डल, भूमि, नदियां तथा समुद्र प्रदूषण की चपेट में आ रहे हैं। एक बार अमेरिका में ओहियो के निकट कयाहॉगा नदी रसायनों से इतनी प्रदूषित हो गयी थी कि उसमें आग लग गई थी। सुप्रसिद्ध कीटनाशक डी.डी.टी. से हम सब परिचित हैं। मच्छरों को मारने एवं मलेरिया उन्मूलन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। परन्तु मानव सहित अन्य प्राणियों के जीवन के लिए भी यह घातक है। इसके कैंसरकारी होने की संभावना भी व्यक्त की गई है। वर्तमान में डी.डी.टी. का उपयोग कई देशों में प्रतिबंधित है। कहा गया है कि यह पक्षियों की प्रजनन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। शायद इसी कारण गिद्धों की संख्या में आज भारी गिरावट नजर आ रही है।

उपयोगी रासायनिक अभिक्रियाओं ओर रसायनों के निर्माण में प्रगति के साथ ही इनसे जुड़े गंभीर खतरे भी रसायनज्ञों के सामने चुनौती के रूप में खड़े होते गये। परिणामस्वरूप 1990 के दशक से निरापद रासायनिक अभिक्रियाओं और रसायनों के निर्माण हेतु कारगर विधियों की खोज के लिए प्रयास प्रारंभ कर दिये गये ताकि मानव जीवन एवं पर्यावरण को किसी भी प्रकार की हानि की आशंका न रहे। इस प्रकार की हानिरहित एवं पर्यावरण स्नेही रासायनिक अभिक्रियाओं को **हरित रासायनिक अभिक्रियाएं** या **"ग्रीन रिऐक्शन्स"** कहा जाता है और इनमें निहित रसायन विज्ञान को हरित रसायन या **"ग्रीन केमिस्ट्री"** नाम दिया गया है। "ग्रीन केमिस्ट्री" नाम का प्रयोग सर्वप्रथम वर्ष 1991 में अमेरिकी रसायनवेत्ता डॉ० पॉल ऐनासटास तथा डॉ० जॉन जॉन वर्नर द्वारा किया गया था। "हरित रसायन", विज्ञान की एक नवीन विधा है, जिसका लक्ष्य पर्यावरण स्नेही अभिक्रियाओं द्वारा पर्यावरण स्नेही रासायनिक उत्पादकों का संश्लेषण (अवांछित अपशिष्ट पदार्थों की उत्पत्ति पर रोक लगाते हुए या कमी करते हुए) करना है। हरित रसायन और पर्यावरणीय रसायन की अवधारणाएं अलग–अलग हैं। हरित रसायन का संबंध हानिरहित विधियों को प्रतिपादित करने से है, जबकि पर्यावरणीय रसायन का संबंध पर्यावरण में होने वाली विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाओं के अध्ययन से है। हरित रसायन का प्रारम्भ कुछ वर्ष

पूर्व 1990 के दशक में विश्व के विकसित राष्ट्रों जैसे – अमेरिका, ब्रिटेन तथा जर्मनी में हुआ था। हरित रसायन का लक्ष्य केवल सुरक्षा एवं प्रयुक्त विधि की कार्य–क्षमता पर भी उचित ध्यान देना है। हरित रसायन को अधिक व्यावहारिक बनाने एवं प्रचलन में लाने के लिए वैकल्पिक अभिक्रमकों, विलायकों, उत्प्रेरकों, रासायनिक, उत्पादों की प्राप्ति हेतु स्थायी प्राकृतिक संसाधनों, रासायनिक अभिक्रियाओं में माइक्रोवेव एवं अल्ट्रासाउंड के उपयोग करने संबंधी शोध कार्य द्रुत गति से चल रहे हैं।

संश्लेषणात्मक कार्बनिक रसायन के क्षेत्र में प्रयुक्त मेटाथिसिस विधि हरित रसायन का उत्कृष्ट उदाहरण है। यद्यपि यह विधि बहुत पहले से (लगभग 1950) प्रयोग में लाई जा रही थी परन्तु इसे प्रसिद्धि हाल ही में मिली – जब फ्रांसीसी वैज्ञानिक डॉ० वाई० चौविन तथा दो अमेरिकी वैज्ञानिकों प्रो० आर० एच० ग्रुब्स एवं प्रो० आर० आर० श्रौक को मेटाथिसिस पर उनके उपलब्धि पूर्ण शोध कार्य के लिए वर्ष 2005 का नोबल पुरस्कार संयुक्त रूप से प्रदान किया गया। "मेटाथिसिस" शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्दों 'मेटा' (जिसका अर्थ परिवर्तन है) और 'थिसिस' (जिसका अर्थ स्थान है) से हुई है। मेटाथिसिस में दो पदार्थों या अणुओं के भाग परस्पर स्थान परिवर्तन करते है।

मेटाथिसिस एक निरापद एवं पर्यावरण स्नेही संश्लेषण तकनीक है। यह तकनीक औषधि निर्माण, पॉलीमर तथा कागज निर्माण के उद्योग में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। अनेक कीट फेरोमोनों के संश्लेषण में भी मेटाथिसिस सफलतापूर्वक प्रयुक्त की गई है। मूल रूप से फेरोमोन रासायनिक संकेतक हैं जिनका उपयोग मादा कीट प्रजनन हेतु अपने नर साथियों को आमंत्रित करने के लिये करती हैं। लेकिन अब संश्लेषित फेरोमोन भी उपलब्ध हैं और इनका उपयोग कीट नाशक के रूप में करने का प्रयास किया जा रहा है। खेतों में संश्लेषित फेरोमोनों के छिड़काव से नर कीटों की संवेदी कोशिकाएं संतृप्त हो जाती हैं और इसके परिणामस्वरूप वे मादा–कीटों द्वारा प्रेषित संकेत को ग्रहण नहीं कर पाते हैं और प्रजनन क्रिया में भाग लेने से वंचित रह जाते हैं। इस प्रकार प्रजनन चक्र के बाधित होने के कारण लक्ष्य कीटों की संख्या बिना अन्य कीटों या जन्तुओं को हानि पहुंचाए नियंत्रित हो जाती है।

---------- A-C+B-D

A - B + C - D ⟶ **A - C + B - D**

ओलिफिन या ऐल्कीनों में मेटाथिसिस का व्यापक अध्ययन किया गया है:

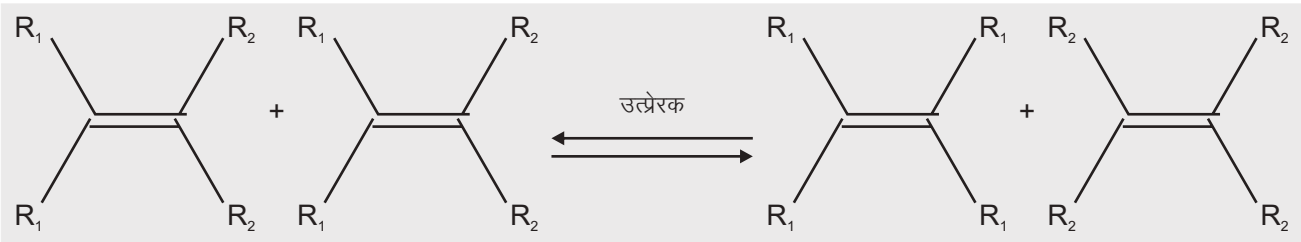

हरित रसायन के सिद्धान्त

पिछले 15–20 वर्ष की अवधि के दौरान हरित रसायन की पहचान, विकास के लिए अनिवार्य संस्कृति और वैज्ञानिक पद्धति के रूप में हो चुकी है। ऐनासटास और वर्नर ने 12 सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया है, जिन पर हरित रसायन आधारित है। इन सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय निम्नवत है।

1. रासायनिक अभिक्रियाओं में अपशिष्ट निर्माण को बाधित करना

रासायनिक अभिक्रियाएं ऐसी विधियों से सम्पन्न की जानी चाहिए जिनमें अवांछित उप–उत्पाद अथवा पार्श्व–उत्पाद (अपशिष्ट निर्माण के कारक) बने ही नहीं या कम से कम मात्रा में बनें। अपशिष्ट पर्यावरण को दूषित तो करते ही हैं, साथ ही इनके विसर्जन पर भी धन व्यय करना पड़ता है। अतः रासायनिक अभिक्रियाओं में अपशिष्ट निर्माण को बाधित करना आवश्यक है।

2. परमाणु किफायत (ऐटम इकोनॉमी)

संश्लेषण हेतु उन रासायनिक अभिक्रियाओं का प्रयोग किया जाय जिनमें क्रियाकारी पदार्थों के परमाणुओं का समायोजन पूर्णतः या अधिकांशतः उत्पादों की संरचना के अन्तर्गत हो सके। क्रियाकारी पदार्थों के परमाणुओं का समायोजन पूर्णतः या अधिकांशतः उत्पादों की संरचना के अन्तर्गत हो सके। क्रियाकारी पदार्थों के परमाणुओं का अपव्यय अन्य अवांछित पदार्थों के निर्माण में नहीं होना चाहिए अर्थात अभिक्रियाओं का परमाणु किफायती होना आवश्यक है। परमाणु किफायत का एक अच्छा उदाहरण डील्स– ऐल्डर अभिक्रिया है। इस अभिक्रिया में जब ब्यूटाडाइन तथा एथाइलीन, साइक्लोहेक्सीन का निर्माण करते है, तो ब्यूटाडाइन (I) और एथाइलीन (II) के समस्त परमाणुओं का समायोजन साइक्लोहेक्सीन (III) की संरचना में हो जाता है:–

यह अभिक्रिया 100**%** परमाणु किफायती है।

3. निरापद अथवा हानिरहित विधियों का प्रतिपादन

जहां तक संभव हो सके संश्लेषण विधियों की योजना इस प्रकार तैयार की जानी चाहिए ताकि उनमें जीवन एवं पर्यावरण के लिए हानिकारक रासायनिक पदार्थों का न तो प्रयोग हो और न उत्पत्ति हो।

4. निरापद अथवा हानिरहित रसायनों की निर्माण योजना

केवल उन्हीं रासायनिक पदार्थों के निर्माण की योजना तैयार की जानी चाहिए जिनमें विषाक्तता हो ही नहीं अथवा कम से कम हो। परन्तु इनमें वांछित उपयोगी गुण तथा क्रियाशीलता समुचित मात्रा में विद्यमान होनी चाहिए।

5. निरापद अथवा हानिरहित विलायकों एवं सहायक सामग्री का प्रयोग

रासायनिक अभिक्रियाओं में विलायकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रायः वाष्पशील कार्बनिक यौगिक या वोलेटाइल ऑरगैनिक कम्पाउंड (VOC) जैसे ऐल्कोहॉल बेंजीन, कार्बन टेट्राक्लोराइड, क्लोरोफॉर्म, परक्लोरोएथाइलीन (PERC), मेथिलीन क्लोराइड आदि का प्रयोग विलायक के रूप में किया जाता है। परन्तु विषाक्त होने के कारण ये सभी यौगिक मानव जीवन के लिए घातक हैं। बेंजीन कैंसरकारी है। टॉलूइन से मस्तिष्क, दृष्टि, यकृत और वृक्क को क्षति पहुंचती है। क्लोरीनीकृत विलायकों तथा मेथिलीन क्लोराइड, क्लोरोफॉर्म, परक्लोरोएथाइलीन और कार्बन टेट्राक्लोराड आदि में भी कैंसरकारी गुण विद्यमान होने की संभावना व्यक्त की गई है। अतः रसायनज्ञों को अन्य निरापद विलायकों की खोज के लिए अग्रसर होना पड़ा और उन्होंने इस दिशा में संतोषजनक सफलता प्राप्त कर ली है। वर्तमान में रासायनिक अभिक्रियाओं में जिन वैकल्पिक विलायकों को प्रयोग किया जा रहा है उनमें प्रमुख हैं : आयनिक द्रव, सुपरक्रिटिकल कार्बन डाइऑक्साइड ($SCCO_2$), सुपरक्रिटिकल जल (SCH_2O) एवं सामान्य जल। बीसवीं सदी के मध्य तक कार्बनिक अभिक्रियाओं में विलायक के तौर पर जल का प्रयोग बहुत कम हुआ। परन्तु जल के कुछ विशिष्ट गुणों की पहचान होने पर वर्तमान में अनेक कार्बनिक अभिक्रियाओं में जल विलायक के रूप में प्रयुक्त हो रहा है।

अनेक कार्बनिक अभिक्रियाएं ठोस अवस्था में बिना किसी विलायक की उपस्थिति में पूर्व में भी सम्पन्न की गई हैं और आज भी सम्पन्न हो रही हैं। ठोस अवस्था में विलायक विहीन कार्बनिक रासायनिक अभिक्रियाओं की अवधारणा नयी नहीं हैं परन्तु पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता एवं हरित रसायन में अभिरुचि के कारण इस क्षेत्र में कार्य पुनः तेजी से चल रहा है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में भी प्रो० पूर्ण चन्द्र गुप्ता के नेतृत्व में अनेक महत्वपूर्ण थैलाइडों एवं ब्युटीनोलाइडों का संश्लेषण बिना किसी विलायक के किया गया है।

6. ऊर्जा बचत

जहां तक संभव हो सके रासायनिक अभिक्रियाओं को सामान्य तापक्रम तथा दाब पर सम्पन्न करने का प्रयास होना चाहिए ताकि ऊर्जा का अनावश्यक व्यय न हो। इसी उदेद्श्य से आज अनेक रासायनिक अभिक्रियाएं माइक्रोवेव तथा अल्ट्रासाउंड द्वारा सम्पन्न की जा रही हैं।

7. रासायनिक अभिक्रियाओं में स्थायी प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

रासायनिक उत्पादों की प्राप्ति हेतु क्षरित हो रहे प्राकृतिक संसाधनों (पेट्रोलियम, नेचुरल गैस, कोल) की अपेक्षा स्थायी प्राकृतिक संसाधनों (जिनके निर्माण की क्रिया प्रकृति में सतत चलती रहती है अर्थात जिनका नव–निर्माण संभव हैः जैस बायोमॉस) का प्रयोग किया जाना चाहिए।

8 अभिक्रियाओं में व्युत्पन्न निर्माण की आवश्यकता की समाप्ति

यथासंभव संश्लेषण अभिक्रियाओं को इस प्रकार प्रतिपादित करना चाहिए कि व्युत्पन्न निर्माण (जिसे आवश्यकतानुसार क्रियाकारी यौगिकों में उपस्थित किसी विशेष क्रियात्मक समूह को बाधित करने, सुरक्षित रखने या अस्थायी रूप से परिवर्तित करने के लिए किया जाता है) की आवश्यकता न पड़े क्योंकि इस कार्य में अतिरिक्त अभिक्रमकों की आवश्यकता के कारण अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है और अवांछित अपशिष्ट भी उत्पन्न होता है।

9. उत्प्रेरकों का प्रयोग

उत्प्रेरक बिना अपशिष्ट निर्माण के अभिक्रियाओं की क्षमता में वृद्धि करते हैं। अतः इनके प्रयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

10. विघटनशील रासायनिक उत्पादों का प्रतिपादन

इस प्रकार के रासायनिक उत्पादों का प्रतिपादन किया जाय जोकि उपयोग के उपरांत अहानिकारक पदार्थों में आसानी से विच्छेदित हो सकें और वायुमण्डल में जमा होकर प्रदूषण में वृद्धि न करें।

11. रासायनिक अभिक्रिया की अवधि के अंतर्गत ही प्रदूषण की जांच एवं नियंत्रण हेतु व्यवस्था

रासायनिक सयंत्रों में रासायनिक अभिक्रिया प्रारंभ होने से लेकर सम्पन्न होने तक लगातार प्रदूषण की जांच और तदनुसार प्रदूषण नियंत्रण हेतु समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

12. दुर्घटना की रोकथाम

रासायनिक अभिक्रियाओं की अवधि में दुघर्टनाओं जैसे आग, विस्फोटन तथा हानिकारक गैसों के रिसाव आदि की कोई संभावना नहीं रहनी चाहिए। प्राप्त रासायनिक उत्पादों को भी दुर्घटनाओं के घटित होने की संभावना से पूर्णतया मुक्त होना चहिए।

जीवनोपयोगी रासायनिक अभिक्रियाओं से जुड़ी विभिन्न हानियों को दूर करने और इन्हें निरापद बनाने में हरित रसायन की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रस्तुत तथ्यों से स्पष्ट है कि मानव सभ्यता के स्थायी विकास के लिए हरित रसायन अति आवश्यक है। हमारे शिक्षक और छात्र हरित रसायन के व्यापक प्रचार–प्रसार में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। छात्रों को इस नवीन विधा से परिचित कराने के लिए उनकी पाठ्य पुस्तकों एवं प्रायोगिक कार्य में हरित रसायन से संबन्धित सामग्री का समुचित समावेश करना आवश्यक है।

प्राचार्य (से. नि.)
उच्च शिक्षा विभाग, उत्तराखण्ड

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,

समाचार-पत्रक
अक्तूबर से दिसंबर 2010

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद

निदेशक की कलम से

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) एवं उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं शिक्षा अनुसंधान (यूसर्क) राज्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के शोध एवं विकास संबर्धन, संरक्षण एवं विज्ञान लोकव्यापीकरण, वैज्ञानिक वातावरण के सृजन, विज्ञान शिक्षा को सरल, सुरूचिपूर्ण व उपयोगी बनाने के अपने उद्देश्यों के अनुरूप विगत अक्तूबर से दिसम्बर 2010 की अवधि में परिषद एवं केन्द्र के नैत्यिक क्रिया कलापों के अतिरिक्त विविध समसामयिक व विशिष्ट कार्यक्रमों का आयोजन किया है।

परिषद द्वारा पंचम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस का आयोजन 10–12 नवम्बर, 2010 को दून विश्वविद्यालय में किया गया। इस वर्ष 597 वैज्ञानिकों/शोधार्थियों द्वारा अपने शोध पत्र प्रस्तुत किये गये जिसमें से 42 उत्कृष्ट शोध पत्रों को पुरस्कृत किया गया एवं अन्वेषक वर्ष 2010 पुरस्कार भी दिया गया। इसके साथ ही परिषद द्वारा चार विभिन्न विषयोंः बायोडाईवर्सिटी, जलवायु परिर्वतन, अक्षय ऊर्जा एवं शुद्ध पेयजल पर विचार मंथन सत्रों का भी आयोजन किया गया।

विद्यार्थियों में विज्ञान विषय को रोचक एवं सरल बनाने हेतु "पाठ आधारित भौतिकी प्रयोग" नामक कार्यशालाओं का आयोजन नैनीताल एवं देहरादून जनपद में किया गया। कार्यशाला में विशेषज्ञों द्वारा छात्र–छात्राओं को विज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों को समझने एवं पढ़ने के तरीके बताये गये।

आयॅल एण्ड नैचुरल गैस कॉरपोरेशन एवं परिषद के संयुक्त तत्वाधान में वृक्षारोपण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रथम चरण में 5000 वृक्षों का वृक्षारोपण देहरादून जनपद में किया गया।

केन्द्र एवं राजकीय पी0जी0कॉलेज, बागेश्वर के संयुक्त तत्वाधान में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की उत्तराखण्ड राज्य के विकास में महत्ता नामक विषय पर दो दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

केन्द्र द्वारा अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर मौसम बदलाव, कम्प्यूटर शिक्षा, सांख्यिकी एवं गणित, समाज एवं पर्यावरण आदि विषयो पर कार्यशालाओं/संगोष्ठी /सेमिनार का आयोजन किया गया।

परिषद एवं केन्द्र द्वारा राज्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के संबंध में विविध कार्यक्रमों का आयोजन शोध तथा अनुसंधान एवं विकास को सतत गति देने का प्रयास जारी है। वैज्ञानिक समुदाय व राज्य के आमजन के सहयोग की अपेक्षा के साथ।

डॉ० राजेन्द्र डोभाल

इस संस्करण में

- परिषद, इन्स्टीट्यूट ऑफ इंजीनियर्स एवं प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड द्वारा अभियन्ता दिवस मनाया गया।
- यूकॉस्ट के निदेशक एवं दो अन्य वैज्ञानिकों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व।
- यूकॉस्ट एवं ओ0एन0जी0सी0 द्वारा वृक्षारोपण कार्यक्रम पैट्रोटेक-2010 के प्रथम चरण का सफल समापन।
- परिषद द्वारा पंचम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस-2010 का सफल आयोजन।
- परिषद द्वारा "पाठ आधारित भौतिकी के प्रयोग" नामक विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन।
- परिषद द्वारा इंडो-जर्मन बैठक का आयोजन।
- परिषद में डी0एस0टी0 नई दिल्ली द्वारा स्वीकृत परियोजनाओं का ब्यौरा।
- यूकॉस्ट द्वारा प्रदत्त यात्रा अनुदान।
- परिषद द्वारा युवा वैज्ञानिक को शोध हेतु प्रोत्साहन।
- यूसर्क द्वारा "उत्तराखण्ड के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की महत्ता" नामक विषय पर कार्यक्रम का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा "कम्प्यूटर क्विज", "मौसम बदलाव एवं वानिकी", "आरोहण-2010", राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस", "संवाद-2010", "सांख्यिकी एवं गणित", "कम्प्यूटर शिक्षा में प्रशिक्षण", "तकनीकी संगोष्ठी-2010" "ग्लोबल वार्मिंग और जल संसाधनों पर उसका प्रभाव" एवं "समाज एवं पर्यावरण" आदि विषयों पर अनेक कार्यक्रमों का सफल आयोजन।

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट)

पंचम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2010

परिषद एवं दून विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वाधान में विशेष पंचम राज्य स्तरीय विज्ञान कांग्रेस दिनांक 10–12 नवम्बर, 2010 को दून विश्वविद्यालय, देहरादून में आयोजित की गई, जिसका उद्देश्य उत्तराखण्ड के विभिन्न विषयों पर युवा वैज्ञानिकों द्वारा किए गए शोध कार्यों को आपस में समन्वय कराना तथा शोधकर्ताओं द्वारा किए जा रहे प्रयोगों का विषेशज्ञों द्वारा मूल्यांकन करना जिससे उत्कृष्ट युवा वैज्ञानिकों को पहचान मिल सके। पंचम राज्य स्तरीय विज्ञान कांग्रेस में 597 वैज्ञानिकों द्वारा उनके शोध कार्यों पर शोध पत्र पढ़े गए तथा 42 उत्कृष्ट शोध पत्र प्रस्तुतकर्ता वैज्ञानिकों को पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर एक विशेष पुरस्कार वर्ष, 2010 का अन्वेशांक भी प्रदान किया गया। विज्ञान कांग्रेस के पहले दिन परिषद द्वारा निम्न चार विषयों पर विचार मंथन सत्रों का आयोजन भी किया गया।

क) स्ट्रेटेजीस फॉर कन्जर्वेशन ऑफ बायोडाईर्वस्टी इन उत्तराखण्ड।

ख) इम्पेक्ट ऑफ क्लाइमेट चेंज ऑन हिमालयन लाईवलिहुड सिस्टम।

ग) रिनूवेबल रिसोर्सेज ऑफ एनर्जी: रोड़ मैप फॉर उत्तराखण्ड।

घ) प्रोवाईडिंग सेफ ड्रिकिंग वाटर टू रूरल पीपल थ्रू टैक्नोलॉजी इन्टर्वेन्शंस।

परिषद द्वारा पंचम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस 2010 में तीन वरिष्ठ वैज्ञानिकों को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में उनके अतुल्य योगदान के लिए अति विशिष्ट पुरस्कार से नवाजा गया

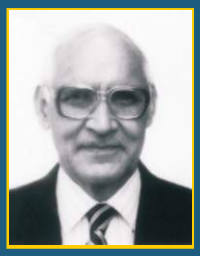

डॉ0 डी0एस0 भाकुनी
नेचूरल प्रोडेक्टस केमेस्ट्री
भूतपूर्व निदेशक, सीडीआरआई, लखनऊ

पदमश्री डॉ0 वी0पी0 डिमरी
जियोफिसिक्स
भूतपूर्व निदेशक, एनजीआरआई, हैदराबाद

डॉ0 बी0के0 गैरोला
इन्फॉरमेशन टैक्नोलॉजी
महानिदेशक
एनआईसी, नई दिल्ली

परिषद एवं राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (नासी), कलकत्ता द्वारा पंचम विज्ञान कांग्रेस में शिक्षक श्री उमेश चन्द्र पाण्डे को उत्कृष्ट विज्ञान शिक्षक के पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। श्री पाण्डे को NASI BEST SCIENCE TEACHER AWARD के रूप में रू0 10,000/– नकद व प्रशस्ति पत्र से सम्मानित किया गया।

मौसम बदलाव एवं वानिकी कार्यशाला

एकेडिमिक स्टाफ कालेज, कुमाऊ विश्वविद्यालय, नैनीताल में ''रिसर्च मैथड्स इन फॉरेस्ट्री एण्ड क्लाइमेट चेंज'' विषय पर नेशनल सेमिनार का आयोजन किया गया। इस सेमिनार में स्थानीय व अन्य स्थानों से आये विषय विशेषज्ञों, शिक्षकों व छात्र–छात्राओं ने भाग लिया। इस सेमिनार में बढ़ते हुए CO_2 लेविल पर चिन्ता व्यक्त की गई जिससे कि पिछले दस सालों में ग्लोबल तापमान में भी 0.6ºC की बढ़त पाई गई। इस बढ़त का हिमालयी राज्यों में प्रभाव अधिक होगा ये भी विभिन्न प्रतिभागियों द्वारा बताया गया। इसके लिए क्या उपाय किए जाएं इस पर प्रतिभागियों व विशेषज्ञों द्वारा प्रकाश डाला गया। यदि हम जलवायु परिवर्तन का असर बायोडायवर्सिटी, जल संसाधनों, मृदा बीज बैंक आदि पर कुछ वैज्ञानिक विधियां अपना कर काम कर सकें तो ये समाज के लिये वैज्ञानिकों, विषय विशेषज्ञों द्वारा दिये गये व्याख्यानों का सही उपयोग होगा।

आरोहरण 2010

अर्न्तराष्ट्रीय महाविद्यालय स्तर पर ''तकनीकी उत्सव'' का आयोजन बिपिन चन्द्र त्रिपाठी कुमायूँ इन्जीनियरिंग कालेज, द्वाराहाट में किया गया। इसमें विभिन्न विद्यालयों के छात्रों द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में किये गये कार्यों का चित्रण किया गया। विषय विशेषज्ञो द्वारा इस 'उत्सव' में प्रदर्षित कार्यों का अवलोकन किया गया व उपस्थि छात्र–छात्राओं, शोधार्थियों आदि को विशेष जानकारी दी गई।

पुरस्कृत युवा वैज्ञानिकों की सूची निम्न प्रकार हैः-

मौखिक

क्र.सं.		संकायपुरस्कृत प्रतिभागी
1.	कृषि विज्ञान	पारूल भट्ट कोटियाल, एफ0आर0आई0, देहरादून। वी0के0 सिंह, कृशि विज्ञान केन्द्र, चम्पावत।
2.	जैव प्रौद्योगिकी, जैव रसायन एवं सूक्ष्म जैविकी	मौइन अख्खतर, जी0बी0 पन्त विष्वविद्यालय, पन्तनगर। विक्रम सिंह गौड़, जी0बी0 पन्त विष्वविद्यालय, पन्तनगर।
3.	वनस्पति विज्ञान	निनाद बी0 रौत, डब्ल्यू0आई0आई0, देहरादून। हिमांषू राय, एल0एस0एस0 राजकीय (पी0जी0) कॉलेज, ऋशिकेष।
4.	रसायन विज्ञान	ष्याम वीर सिंह, एच0एन0बी0 गढ़वाल, विष्वविद्यालय, श्रीनगर। कमल कुमार, इंडीयन इन्स्टीट्यूट ऑफ पैट्रोलियम, देहरादून।
5.	पृथ्वी विज्ञान सह भू–विज्ञान, भू–भौतिकी	अल्पना हयांकी, कुमांऊ विष्वविद्यालय, नैनीताल। अंषुय्या भण्डारी, वडिया इन्स्टीट्यूट, देहरादून।
6.	अभियान्त्रिकी विज्ञान एवं तकनीकी	पूतुल हलदर, आई0आई0टी0, रूड़की। मनोज कुमार गठानी, यूनिविर्सिटी ऑफ पैट्रोलियम एण्ड एनर्जी इस्डीज, देहरादून।
7.	पर्यावरण विज्ञान एवं वानिकी	योगेष गैरोला, आई0सी0एफ0आर0ई, देहरादून। मनिशा थपलियाल, एफ0आर0आई0 देहरादून।
8.	गृह विज्ञान सह वस्त्र, भोजन,	वंदना भार्मा, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर।
	पोशण एवं बाल विकास	प्रियंका चक्रवर्ती इन्दु, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर।
9.	गणित, सांख्यिकी तथा कम्प्यूटर विज्ञान	निधि तिवारी, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर। निरविकार, इंजीनियरिंग कालेज, रूड़की।
10.	चिकित्सा विज्ञान एवं औशधीय विज्ञान	योग्रेन्द्र बहुगुणा, श्री गुरू राम राय इन्स्टीट्यूट आफ टैक्नोलॉजी एण्ड साइंसेज, देहरादून। संगीता पिलखवाल षाह, कुमांऊ विष्वविद्यालय, नैनीताल।
11.	भौतिक विज्ञान	राम प्रकाष नौटियाल, आई0आर0डी0ई0, देहरादून।
12.	विज्ञान एवं समाज/ विज्ञान लोकव्यापीकरण	हिमाद्री फुकान, इंजीनियरिंग कालेज, रूड़की।
13.	पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान	भास्कर गांगुली, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर। यषपाल एस0 मलिक, आई0बी0 आर0आई0 मुक्तेष्वर।
14.	जन्तु विज्ञान	स्वाति षर्मा, राजकीय (पी0जी0) कालेज, डाकपत्थर। मनिशा उनियाल, गुरू रामराम (पी0जी0) कालेज, देहरादून।

पोस्टर

क्र.सं.		संकायपुरस्कृत प्रतिभागी
1.	कृषि विज्ञान	गीतांजली बंगारी, जी0बी0 पन्त विष्वविद्यालय, पन्तनगर। एस0के0 षर्मा, कृशि विज्ञान केन्द्र काषीपुर।
2.	जैव प्रौद्योगिकी, जैव रसायन एवं सूक्ष्म जैविकी	मांषी गुप्ता, आई0आई0टी0 रूड़की।
3.	वनस्पति विज्ञान	वंदना षर्मा, के0एल0 डी0ए0वी0 (पी0जी0) कालेज, रूड़की।
4.	रसायन विज्ञान	दर्षन सिंह, कुमाऊ विष्वविद्यालय, नैनीताल। विपिन कुमार बंसल, आई0आई0टी0 रूड़की।
5.	अभियान्त्रिकी विज्ञान एवं तकनीकी	सौरभ कुमार, डी0आई0टी0, देहरादून।
6.	पर्यावरण विज्ञान एवं वानिकी	स्वाति नागर, आई0सी0एफ0आर0ई, देहरादून।
7.	गृह विज्ञान सह वस्त्र, भोजन, पोशण एवं बाल विकास	राजकुमारी, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर।
8.	गणित, सांख्यिकी तथा कम्प्यूटर विज्ञान	चन्दा थपलियाल नौटियाल, डी0ए0वी0 (पी0जी0) कालेज, देहरादून।
9.	चिकित्सा विज्ञान एवं औशधीय विज्ञान	अर्चना उप्पल, श्री गुरू राम राय इन्स्टीट्यूट आफ टैक्नोलॉजी एण्ड साइंसेज, देहरादून। अलका एन चौधरी, कुमांऊ विष्वविद्यालय, नैनीताल।
10.	भौतिक विज्ञान	भावना पाण्डे, जी0बी0 पन्त कृशि एवं प्रौद्योगिकी विष्वविद्यालय पन्तनगर।

क्र.सं.		संकायपुरस्कृत प्रतिभागी
1.	अन्वेषण	हेमेंन्द्र गुप्ता, स्पैक्स देहरादून।

लोकप्रिय व्याख्यान का आयोजन

राष्ट्रीय विज्ञान एकादमी (नासी), उत्तराखण्ड चेप्टर द्वारा पंचम राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस के शुभारम्भ के दिन डॉ0 आर0एस0 टोलिया, पूर्व मुख्य सचिव, उत्तराखण्ड द्वारा ''इंडियन माऊटेन इनीसियेटिव'' विषय पर एक लोकप्रिय व्याख्यान दिया गया।

अभियन्ता दिवस

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद, इन्स्टीट्यूट ऑफ इंजीनियर्स, उत्तराखण्ड प्रदूशण नियन्त्रण बोर्ड एवं ग्राफिक एरा यूनिवर्स्टी के संयुक्त तत्वाधान में दिनांक 16 सितम्बर 2010 को अभियन्ता दिवस तथा भारत रत्न सर मोक्षागंघम विश्वेश्रैया की 150 वीं जयंती के रूप में ग्राफिक एरा यूनिवर्स्टी, क्लोमेन्टाउन में मनाया गया। कार्यशाला में विशेशज्ञों ने बताया कि ग्लोबल वार्मिंग की वजह से पर्यावरण को नुकसान हो रहा है। उन्होंने जलवायु परिवर्तन एवं मौसम के चक्र में हो रहे बदलावों पर चर्चा की और इससे जुड़े तथ्यों को प्रस्तुत किया। कार्यशाला में इंजीनियरिंग के बदलते आयाम एवं विज्ञान में भविश्य की चुनौतियों पर वैज्ञानिकों ने कहा कि हमें ऐसे खतरों से बचने के लिए दूरगामी रणनीति बनानी होगी। दूरगामी खतरों से बचने के लिए अभी तक कुछ खास उपाय नहीं किए जाने पर भी चिंता जताई गई।

पैट्रोटेक–2010

यूकॉस्ट एवं ओएनजीसी के संयुक्त तत्वाधान में 21 अक्तूबर, 2010 को पौधारोपण कार्यक्रम ''पैट्रोटेक–2010'' का आयोजन आईसीएफआरआई सभागार में किया गया। कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रथम चरण में 5000 वृक्षों का वृक्षारोपण वन विभाग के सहयोग से किया जाना है तथा द्वितीय चरण में उनका सफल निरिक्षण एवं संरक्षण करना है। कार्यक्रम का शुभारंभ मा0 अध्यक्ष, उत्तराखण्ड विधान सभा, श्री हरबंश कपूर जी ने किया। उन्होने बताया कि पर्यावरण संरक्षण एवं सम्बर्धन हेतु वृक्षारोपण बेहद जरूरी है। उन्होने बताया कि अगर युवा वर्ग वृक्षारोपण हेतु जागरूक हो तो पर्यावरण को बचाया जा सकता है तथा राज्य को हरित प्रदेश बनाने में भी मददगार होगा।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस

'पहल' संस्था के सौजन्य से ''राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस'' का आयोजन कोटद्वार में किया गया। इसके उद्देश्य निम्नवत रहे– 1. बच्चों में विज्ञान के प्रति जागरूकता पैदा करना। 2. जनसामान्य में विज्ञान के प्रति जागरूकता लाना। 3. बच्चों में जिज्ञासा जनक व शोध परक योजनाओं के प्रति उत्साह जाग्रत करना। 4. बच्चों के माध्यम से पुरानी परम्परागत पद्धतियों को वैज्ञानिक आधार व सोच के साथ प्रस्तुत करना व संशोधित रूप से जनसामान्य तक पहुँचाना। 5. बाल वैज्ञानिकों को अभिव्यक्ति हेतु मंच प्रदान करना।

संवाद–2010

'उत्तराखण्ड सेवा निधि पर्यावरण शिक्षा संस्थान', अल्मोड़ा द्वारा ''डिसास्टर मैनेजमैंट, जलवायु परिवर्तन एवं स्कूली शिक्षा आदि विशयों पर चर्चा की गई। इसका मुख्य उद्देश्य उत्तराखण्ड की ज्वलंत समस्याओं पर विचार विमर्श कर संस्तुतियों को शासन को प्रेशित करना एवं उत्तराखण्ड की शिक्षा नीति को गुणवत्ता परक बनाने का प्रयास करना था। जलवायु परिवर्तन व उसका जन जीवन पर प्रभाव, पर्वतीय क्षेत्र में भूस्खलन एवं आपदा प्रबंधन आदि विशयों पर गहन चर्चा की गयी।

पाठ आधारित भौतिकी के प्रयोग

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, देहरादून द्वारा राज्य के दो मण्डलों में पाठ आधारित भौतिकी प्रयोगों यानी "Lesson Based Physics Experiments" नामक विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। कुमांऊ मण्डल के नैनीताल जनपद में इन कार्यशालाओं का आयोजन 10–11 दिसम्बर, 2010 को किया गया। कार्यक्रम का संयोजन कुमांऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ0 गिरिजा पाण्डे द्वारा किया गया तथा गढ़वाल मण्डल के देहरादून जनपद में इन कार्यशालाओं का आयोजन दिनांक 12–14 दिसम्बर 2010 तक पीपुल्स एसोसियेशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) द्वारा किया गया। कार्यशालाओं में एक लोकप्रिय व्याख्यान हेतु डा0 समर कुमार बागची, पूर्व अध्यक्ष NCSM तथा NCSTC Network तथा प्रो0 बी0एन0 दास, उपाध्यक्ष, साइंस कम्यूनिकेशन फोरम कलकत्ता को विशेषज्ञों के रूप में आमंत्रित किया गया था। विशेषज्ञों द्वारा नैनीताल में जनपद के अनेक विद्यालयों से आये शिक्षकों एवं छात्र–छात्राओं को विज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों को रोचक और सरल तरीके से पढ़ने व समझने के तरीके बताये गये।

देहरादून में दिनांक 12 नवम्बर, 2010 को कक्षा 9 से 12 तक के बच्चों तथा शिक्षकों हेतु कार्यशाला व प्रदर्शन का आयोजन किया गया। दिनांक 13 दिसम्बर, 2010 को जनपद के सभी 6 विकास खण्डों तथा स्थानीय विद्यालयों के 60 भौतिक विज्ञान शिक्षको व छात्र–छात्राओं द्वारा जसवन्त माडर्न सीनियर सेकेन्ड्री स्कूल, राजपुर रोड़, देहरादून में हुए कार्यक्रम में भाग लिया। दिनांक 13 व 14 दिसम्बर, 2010 को कार्यशालाओं का आयोजन राजकीय बालिका विद्यालय, लक्खीबाग तथा राजीव गॉधी नवोदय विद्यालय में किया गया।

यूकॉस्ट द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व

यूकॉस्ट के निदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने जर्मनी में प्रतिनिधिमण्डल का नेतृत्व किया व परियोजना शीर्षक ''डेवलपमेंट ऑफ रिवर बैंक फिलट्रैंशन इन हिल रीजन ऑफ उत्तराखण्ड फार सस्टेनेबल सोलूशन ऑफ क्वालिटी एण्ड क्वांटिटी प्रोबल्मस ऑफ ड्रिकिंग वाटर इन उत्तराखण्ड'' के तहत रिवर बैंक फिल्ट्रेशन व शुद्ध पेय जल की नवीनतम तकनीक को समझने के लिए संयुक्त रूप से जर्मन वैज्ञानिकों द्वारा किऐ जा रही तकनीकों को समझा व इस दौरान उनके द्वारा यूनिर्वस्टी ऑफ ड्रेस्डन, जर्मनी की लैबों एवं अन्य स्थानों का भ्रमण किया गया व उत्तराखण्ड में भी इस परियोजना के तहत इन तकनीकों का इस्तेमाल पानी की शुद्धता एवं गुणवक्ता हेतु राज्य सरकार को सुझाया है। पूर्व में भी एक अन्तर्राष्ट्रीय इंडो–जर्मन कार्यशाला का आयोजन दिनांक 14–16 सितम्बर, 2009 को किया गया था। इसी क्रम में दिनांक 10.12.2010 को यूनिर्वस्टी ऑफ ड्रेस्डन, जर्मनी का एक प्रतिधिमण्डल उपरोक्त परियोजना के तहत उत्तराखण्ड भ्रमण में परिषद कार्यालय में आया एवं रिर्वर बैंक फिल्ट्रेशन पर हो रहे कार्यो को देखा। प्रतिनिधिमण्डल द्वारा उक्त परियोजना में हो रहे कार्यो को सराहा गया एवं माह अप्रैल 2011 को अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन देहरादून में किये जाने पर भी सहमति बनी।

डॉ0 डोभाल की यात्रा से दोनो देशों में चल रहे शोध एवं विकास परियोजनाओं में सोलर एवं वाटर विशय पर संयुक्त रूप से परियोजना चलाने हेतु भी सहमति बनी है जो कि भविष्य में ऊर्जा एवं जल संकट को पूरा कर सकेगी।

अन्तर्राष्ट्रीय संस्था Terra Madre, Italy द्वारा पांचवे अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान एवं तकनीकी कार्यशाला का आयोजन दिनांक 21 से 25 अक्टूबर, 2010 तुरीन, इटली में किया गया। इस कार्यशाला में विश्व के 150 देशों के वैज्ञानिकों ने प्रतिभाग किया व विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विभिन्न विषयों पर शोध पत्रों का प्रस्तुतिकरण किया। परिषद के वरिश्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, डॉ0 डी0पी0 उनियाल ने उपरोक्त कार्यशाला में प्रतिभाग किया व विष्व मत्स्य संगठन (World Fish Organization) द्वारा आयोजित सेमिनार पर "हिमालय की मत्स्य सम्पदा व संवर्द्धन" पर शोध पत्र प्रस्तुत किया जिसमें उनके द्वारा हिमालय की मत्स्य सम्पदा विषय पर व्याख्यान दिया गया व अवगत कराया कि महाषीर मछली को हिमालयी क्षेत्रों में बने डैमों से इनके वाशा स्थल सिकुड़ गये हैं। डैम के कारण इन मछलियों का माईग्रेसन रूट बाधित हो जाता है जिससे इनकी

संख्या बड़ी तेज रतार से कम हो रही है व इन्हे विलुप्तप्राय की श्रेणी में ला दिया है। निश्चित तौर पर समय आ गया है कि इनके संरक्षण एवं सवंर्द्धन हेतु कार्य किये जाने की आवश्यकता है व इनके वाशा स्थल को बचाया जाना चाहिए व डैमो में फिश लैडर एवं फिश पाथ बनाए जाने चाहिए जिससे भविष्य में महाषीर का अस्तित्व संकट में आ जायेगा जो कि हमारी पारिस्थितिकी संतुलन पर विपरीत असर डालेगा। डॉ0 उनियाल ने विश्व मत्स्य संगठन के वैज्ञानिकों को इस मत्स्य सम्पदा को बचाने के लिए एक प्रचार–प्रसार अभियान करने पर जोर दिया जैसे कि यूरोप मsa salmon फिष को बचाने के लिए किया जा रहा है। साथ ही मत्स्य सम्पदा को सामाजिक एवं आर्थिकी से जोड़ने के लिए जोर दिया व हिमालय क्षेत्र में ईको–टूरिज्म की भी अपार सम्भावनाओं हैं जिसमें दहसपदह के द्वारा टूरिज्म को बढ़ावा दिया जा सकेगा व उत्तराखण्ड में कार्बेट नेशनल पार्क, नयार नदी का क्षेत्र, हिमाचल में सतलुज नदी का क्षेत्र व जम्मू कश्मीर में चिनाव नदी के क्षेत्र में इसकी अपार सम्भावनाएं है। इससे जन सामान्य को मत्स्य सम्पदा बचाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है व साथ–साथ आर्थिकी को भी सुदृढ़ किया जा सकता है।

डॉ0 उनियाल ने परिषद के शोध एवं विकास, विज्ञान लोकव्यापीकरण एवं उद्यमिता विकास आदि कार्यक्रमों का भी प्रस्तुतिकरण किया व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों से भविष्य में साथ मिलकर उपरोक्त विषयों पर संयुक्त रूप से सहभागिता करने पर भी सहमति

बनाई जिससे नई तकनीकों का हस्तान्तरण हो सकेगा व उपरोक्त कार्यशाला को सफलतम एवं राज्य की प्रगति के लिए उपयोगी व ज्ञानवर्धक बताया

क्वालालम्पुर, मलेशिया में दिनांक 11–14 अक्टूबर तक आयोजित गुटनिरपेक्ष देशों के विज्ञान केन्द्र द्वारा एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला जो विकासशील देशों में अन्वेशी समाज एवं सुदृढ़ विकास तथा जवाबदेह बृद्धि हेतु ज्ञानी एवं अन्वेशी समाज की स्थापना के लिए विज्ञान केन्द्रों का निर्माण करने हेतु आयोजित की गयी थी। इस कार्यशाला में डॉ0 बी0पी0 पुरोहित, परियोजना अधिकारी, विज्ञान धाम द्वारा परिषद की ओर से गुटनिरपेक्ष विज्ञान व तकनीकी केन्द्र के आमंत्रण पर देष का प्रतिनिधित्व करते हुए प्रतिभाग किया।

उपरोक्त कार्यशाला में डॉ0 बी0पी0 पुरोहित द्वारा देहरादून में निर्माणाधीन विज्ञान केन्द्र परियोजना का विस्तृत प्रत्यावेदन प्रस्तुत किया गया तथा मलेषिया में आयोजित उक्त कार्यशाला में विचार–विमर्ष व क्वालालम्पुर स्थित विज्ञान केन्द्र भ्रमण कर विभिन्न देशों से आये हुए प्रतिनिधियों से तकनीकी ज्ञान का आदान–प्रदान भी किया। उनकी यह यात्रा परिषद में निर्माणाधीन विज्ञान धाम के अन्तर्गत विज्ञान केन्द्र के निर्माण की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

"इंडो–जर्मन बैठक का आयोजन"

यूनिवर्स्टी ऑफ अपलाईड साइंसेस, ड्रेसडन, जर्मनी के प्रतिनिधि मण्डल जिसका प्रतिनिधित्व प्रो0 थॉमस ग्रिसचिक कर रहे थे, माह दिसम्बर के दौरान उत्तराखण्ड राज्य के दौरे पे थे। प्रतिनिधि मण्डल द्वारा 10 दिसम्बर, 2010 को परिशद का दौरा किया गया तथा डी0एस0टी0, नई दिल्ली से पोशित परियोजना "Development of River Bank Filtration in Hill Regions for Sustainable Solution for Quality and Quantity Problems of Drinking Water in Uttarakhand" पर परिशद सभागार में यूनिवर्स्टी ऑफ अपलाईड साइंसेस, ड्रेसडन, जर्मनी, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद, देहरादून, एवं उत्तराखण्ड जल संस्थान, देहरादून की एक संयुक्त बैठक का आयोजन किया गया जिसमें परियोजना के प्रथम चरण में हुये कार्यो की समीक्षा की गयी अथवा परियोजना की प्रगति पर भी विचार–विर्मष किया गया। बैठक के दौरान कुछ महत्वपूर्ण विशयो पर चर्चा की है जिनकें कुछ बिन्दु इस प्रकार है–

- यूकॉस्ट एवं यूनिवर्स्टी ऑफ अपलाईड साइंसेस, ड्रेसडन, जर्मनी के संयुक्त प्रयासो द्वारा राज्य के ज्यादातर जगहों पर पानी में बहुतायत में पाये जाने वाले आईरन के निर्वारण हेतु एक परियोजना चलाने हेतु सहमति बनायी गयी।
- 29–30 अप्रैल, 2011 को एक कार्यषाला का आयोजन ''रिर्वर बैंक फिलट्रेषन विधि'' विशय पर करने हेतु प्रस्ताव पर सहमति प्रदान की गयी। कार्यषाला का आयोजन यूकॉस्ट, उत्तराखण्ड जल संस्थान, देहरादून, नेषनल इंस्टीटूयट ऑफ हाईड्रोग्राफिक, रूड़की एवं यूनिवर्स्टी ऑफ अपलाईड साइंसेस, ड्रेसडन, जर्मनी के संयुक्त तत्वाधान में किया जायेगा।
- सोलर ऊर्जा से पानी को स्वच्छ कर पीने हेतु बनाने पर भी एक परियोजना को चलाने की सहमति बनाई गई। इस परियोजाना को यूरेड़ा, देहरादून, यूकॉस्ट, देहरादून, उत्तराखण्ड जल संस्थान, देहरादून एवं यूनिवर्स्टी ऑफ अपलाईड साइंसेस, ड्रेसडन, जर्मनी के संयुक्त तत्वाधान में किया जायेगा।
- सब सरफेस जल में आईरन की अधिकता को देखते हुए उत्तराखण्ड में यूकॉस्ट एवं जर्मनी की सहभागिता से आईरन के उपचार हेतु संयुक्त प्रोजेक्ट की परिकल्पना की गयी।

डी0एस0टी0, नई दिल्ली द्वारा वित्तीय पोषित शोध परियोजनाएं

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा वर्श 2010 में मुख्यतः निम्न परियोजनाओं को स्वीकृत किया गया है। परियोजनाओं का ब्यौरा निम्नलिखित हैः

1. इस परियोजना के अंतर्गत केदारनाथ में 100 किलोवाट क्षमता के दो लघु हाईड्रो पावर प्रोजैक्ट एवं रांग कांग में 50 किलोवाट क्षमता वाले एक लघु हाईड्रो पावर प्रोजैक्ट, पिथौरागढ़ स्थापित करने हेतु स्वीकृती प्रदान की गई है। इन दोनो परियोजनाओं के अर्न्तगत देशी तकनीकों एवं बिजली की निरन्तरता बनाने के लिए दो क्रोस लो टरबाइन का इस्तेमाल किया जायेगा। केदारनाथ में इस परियोजना से प्राप्त बिजली को केदारनाथ धाम एवं आसपास के गाँवो में वितरित किया जाएगा। पिथौरागढ़ में हाईड्रो पावर द्वारा प्राप्त बिजली से पाँच गांव लाभान्वित होंगे।
2. डी0एस0टी0, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा स्वीकृत इस परियोजना के अंर्तगत प्लाज्मा पाइरोलाइजर सिस्टम, दून अस्पताल, देहरादून में स्थापित किया गया है। यह सिस्टम अस्पताल के सौलिड वेस्ट के निस्तारण हेतु इन्स्टीट्यूट ऑफ प्लाज्मा रिसर्च, गाँधीनगर, गुजरात द्वारा बनाया गया है। यह सिस्टम 15 किलोग्राम प्रति धण्टा की रफतार से वेस्ट निस्तारण करता है। यह भी उल्लेखनीय है कि प्लाज्मा पाइरोलाइजर एमीशन्स सी0पी0सी0बी0 लिमिटेट के अन्दर है तथा यह एक ईको–फ्रैन्डली सिस्टम है। अभी यह सिर्फ डेमोन्स्ट्रेटिव मोड में काम करेगा ताकि भविश्य में इस प्रकार की मशीनें अन्य अस्पतालों में भी लगाई जा सकें।
3. वाटर टैक्नोलॉजी पहल के अन्तर्गत रिवर बैंक फिलट्रेषन इन हिल रिजन ऑफ उत्तराखण्ड नामक परियोजना को संचालित किया गया जिससे लगभग 40,000 लोग लाभान्वित होगें। उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद, देहरादून एवं उत्तराखण्ड जल संस्थान, देहरादून कि इस परियोजना के अन्तर्गत 5 स्थलों का चयन किया गया है जहाँ इस तकनीक के अनूरूप पीने का जल उपलब्ध कराया जा सकें। ये स्थल हैं – सतपुली, श्रीनगर, रूद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग एवं अगस्तमुनि। सतपुली में कार्य किया जा चुका है एवं 500 LPM, RBF द्वारा पानी उपलब्ध कराया जा चुका है। RBF तकनीक के हस्तक्षेप के पश्चात् पानी की उपलब्धता 0.34 MLD से 0.94 MLD तक पहुँच गयी है। साथ ही प्रति व्यक्ति दर से पानी की उपलब्धता सतपुली क्षेत्र में 44 LPCD से 103 LPCD हो गई है। इस परियोजना की तकनीकी सुझाव यूनिवर्स्टी ऑफ ड्रेसडेन, जर्मनी के सहयोग से होगा व इससे RBF तकनीक से पानी को शुद्ध कर आम जन मानस तक पहुंचाया जायेगा। इस तकनीक से लगभग 7937 लाभार्थी सतपुली क्षेत्र में हैं। इसी के साथ यह भी पाया गया कि RBF द्वारा उपलब्ध पानी की गुणवक्ता में सुधार हुआ है एवं सिर्फ डिस्इनफैक्शन की आवश्यकता है। परियोजना का द्वितीय सत्र का कार्य प्रगति पर है एवं अन्य क्षेत्रों में भी इसी प्रकार के परिणाम आने की संभावना है।
4. यूकॉस्ट के निर्देषन में षुद्ध पेयजल को उत्तराखण्ड के जनमानस को उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार के 'जल तकनीकी पहल' कार्यक्रम के अन्तर्गत संचालित इस षोध एवं अनुसंधान परियोजना में अब तक निम्नलिखित कार्य किये गये हैंः

- भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा निर्धारित 26 जल गुणवत्ता मानकों द्वारा लगभग 300 स्रोतों की जांच अत्याधुनिक उपकरणों से की जा चुकी है तथा जांच की परिणामों का विष्लेशण कर षुद्ध पेयजल की उपलब्धता हेतु उत्तराखण्ड जल संस्थान द्वारा आवष्यक कार्यवाही की जा रही है।
- राज्य स्तरीय जल गुणवत्ता परीक्षण व षोध प्रयोगषाला की उत्तराखण्ड जल संस्थान परिसर देहरादून में स्थापना ।
- परियोजना के अन्तर्गत स्थापित प्रयोगषाला में 1) रंग, 2) गंध, 3) स्वाद, 4) टर्बिडिटी, 5) पी. एच., 6) टोटल हार्डनेस, 7) आयरन, 8) क्लोराइड्स, 9) रेसिड्यूअल फ्री क्लोरीन, 10) डिसोल्वड सालिड्स, 11) कैल्षियम, 12) कॉपर, 13) मग्निषियम, 14) मैंगनीज, 15) सल्फेट, 16) नाईट्रेट, 17) लोराइड, 18) फीनोलिक कम्पाउंड, 19) कैडमियम, 20) आर्सेनिक, 21) लेड, 22) जिंक, 23) क्रोमियम, 24) एल्केलिनिटी, 25) एलुमीनियम तथा 26) कालीफार्म बैक्टिरिया सहित कुल 26 जल गुणवत्ता मानकों का नवीनतम उपकरणों से परीक्षण किया जा रहा है।
- उत्तराखण्ड के जल गुणवत्ता मानचित्र की ओर अग्रसर, जो अब तक किसी भी प्रादेषिक या केन्द्रीय संस्थान द्वारा नहीं बनाया गया है।

पेटैंट इनफॉरमेशन सेंटर

बौधिक सम्पदा अधिकार इस विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी एवं आर्थिक उन्नति के समय में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। देश के विभिन्न वैज्ञानिक संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा शोध एवं विकास के कार्यक्रमों चलाये जा रहे है। वैज्ञानिक एवं नीति निर्धारको को नवीन सूचनाओं की आवश्यकता होती है जिससे वे अपने उत्पादों को सुरक्षित कर सकें। इसी दिशा में डी0एस0टी, भारत सरकार, नई दिल्ली की नई पहल है पेटैन्ट फैसीलियेशन सैल (PFC) यह सैल भारत सरकार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली द्वारा देश भर में स्वीकृत किए गये हैं एवं उत्तराखण्ड में परिशद में यह सैल स्थापित किया गया है। यह सैल उत्तराखण्ड में वैज्ञानिकों एवं आविशकारकों को पेटैन्ट संबंधी जानकारी उपलब्ध कराने में मददगार होगा व समय समय पर यह सैल नई उपलब्धियों, पेटैन्ट संबंधी मुद्दो को नीति निर्धारण के लिए प्रस्तुत करेगा। साथ ही साथ लोगों में बौधिक सम्पदा अधिकार हेतु जागृति पैदा करने के लिए सेमीनार, कार्यशालाओं का भी आयोजन करेगा।

इन्टरप्रोनोरसिप प्रामोशन हेतु TePP सेंटर की स्थापना

TePP विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली की स्वीकृत परियोजना है। जिसके अन्तर्गत TePP Outreach Centre की स्थापना यूकॉस्ट परिसर ६, वसंत विहार, फेस-१ में की गई है। यह TUC विज्ञापन प्रकाशित कर उद्योग क्षेत्र से जुड़े नवीन अण्वेशको और आविश्यकारकों के प्रस्तावों को डी०एसी०टी० नई दिल्ली से प्रायोजित करवाना, साथ ही प्रस्तावों की तकनीकी, वित्तीय उपयुक्ताओं एवं उनकी मौलिकता का परीक्षण करना। इन सभी प्राप्त प्रस्तावों की प्रगति की समय समय पर सूचना प्राप्त करना एवं सभी प्रस्तावों से प्राप्त तकनीकी उत्पत्तियों का व्यवासयिक क्रियान्वयन कराना।

कम्प्यूटर क्वीज

कम्प्यूटर सोसाइटी ऑफ इंडीया द्वारा केषवदेव मालवीय मिनी सभागार ओ0एन0जी0सी0 में ''कम्प्यूटर क्वीज'' का आयोजन किया गया। इसमें सरकारी व गैर सरकारी स्कूलों के छात्र–छात्राओं ने भाग लिया इसका मुख्य उद्देश्य था कि आरंभ से ही छात्र–छात्राओं को कम्प्यूटर की जानकारी दी जाए। आधुनिक समय में कम्प्यूटर एक जरूरत बन गया है। अतः इसका प्रयोग करना यदि आरंभ से ही आ जाए तो भविष्य में छात्र–छात्राओं को अपने देश की ही नहीं अपितु विदेषों में हो रहे वैज्ञानिक अनुसंधानों व अन्य तकनीकी जानकारियाँ मिल सकती है।

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा स्वीकृत सेंटर (MSME)

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा स्वीकृत सेंटर **Intellectual Property Facilitation Center (IPFC)** के रूप में मिली है। यह सेंटर पेटैन्ट फाइलिंग, ट्रेडमार्क, रजिस्ट्रशन, इंडसट्रियल डिजाइन इत्यादि के लिय कार्य करेगा। साथ ही यह सेन्टर पेटैन्ट ट्रेडमार्क इत्यादि सम्बिधित सुझाव लोगों को देगा एवं इनसे सम्बधित कानूनी सलाह भी इस परियोजना के अंतर्गत लक्षित वर्ग निम्न प्रकार से है:-

1. इन्डस्ट्रि
2. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम
3. शोध संस्थाएं
4. विश्वविद्यालय

विशेशतः यह सेन्टर सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की पेटैन्ट आवश्यकताओं/ जरूरतो का पता लागा कर उसके अनूरूप सेवाएँ उपलब्ध करवाएगा। साथ ही इस उद्यमों को पेटैन्ट सम्बन्धी सलाह देगा और पेटैन्ट टूल की जानकारी प्रदान करेगा।

इंस्पायर कार्यक्रम

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा ''अनुप्राणित शोध हेतु विज्ञान खोज में नवीनीकरण'' इंस्पायर नामक वृहक कार्यक्रम वर्श 2008 में शुरू किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों में छोटी कक्षाओं से ही विज्ञान विशय में रूचि उत्पन्न करना है जिससे विज्ञान विशय में घटते अनुपात को रोका जा सके। यह कार्यक्रम विज्ञान विशय को छात्रों तक पहुंचाने में सहायक होगा।

इंस्पायर कार्यक्रम की मुख्यतः तीन योजनाएं हैं – स्कीम फॉर अर्ली अट्रेक्शन ऑफ टेलेंट फॉर साइंस (SEATS), हायर एजुकेशन फॉर स्कॉलरशिप (SHE) एवं एश्योर्ड अपरचुनिटी फॉर रिसर्च कैरियर्स (AORC)। इंस्पायार की इन तीन योजनाओं की तहत छात्रवृत्ति के लिए मापदंड तैयार किये गये हैं। पात्रता के दौरान इन मापदंडो को ही परख के छात्रवृत्ति प्रदान की जाएगी। इंस्पायर सम्बन्धी जानकारी डी0एस0टी0 नई दिल्ली की वैबसाइट www.inspire-dst.gov.in पर उपलब्ध है।

यह कार्यक्रम विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, उत्तराखण्ड राज्य स्कूली शिक्षा निदेशालय एवं उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद द्वारा कराया जा रहा है। यह एक स्वर्णीम अवसर है कि प्रदेश के छात्र–छात्राये/युवाऐं इसका भरपुर लाभ उठाये व भविश्य में विज्ञान विशय को लेकर करेयर बना सकें।

यूकॉस्ट द्वारा प्रदत्त यात्रा अनुदान

षोधकर्त्ताओं एवं वैज्ञानिकों को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित कार्यशलाओं/सेमिनार/संगोष्ठी इत्यादि में प्रतिभाग करने हेतु यूकॉस्ट सदैव प्रोत्साहन देता है। विगत तीन माह में 05 (पाँच) षोधकत्ताओं/वैज्ञानिकों को यूकॉस्ट द्वारा यात्रा अनुदान के लिए चिन्हित किया गया, जिससे वे इन कार्यशला/सेमिनार/संगोष्ठी इत्यादि में सम्मिलित हो सकें।

क्रं.सं.	नाम	स्थान	दिनांक
1.	डॉ0 अंजना श्रीवास्तव, जी0बी0 पन्त विश्वविद्यालय, पंतनगर।	क्यूबेक, केनडा	12–17 सितम्बर, 2010
2.	डॉ0 प्रशान्त सिंह, डी0ए0वी0 पी0जी0 कॉलेज, देहरादून।	सैल्सर्बग, औस्ट्रीया	22–24 सितम्बर, 2010

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क)

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र के सौजन्य से विभिन्न स्थानों पर अलग–अलग तिथियों में कार्यषालाएं आयोजित की गई। इन कार्यषालाओं में विशय विषेशज्ञों द्वारा विभिन्न विशयों की जानकारी दी गई। इन जानकारियों से छात्र–छात्राओं, षोधार्थी, षिक्षकों को विषेश लाभ मिल सकता है। इतना ही नहीं इस प्रकार विषेशज्ञों द्वारा दी गई जानकारियां राज्य के लिए भी लाभकारी हो सकती है।

उत्तराखण्ड के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की महत्ता पर चर्चा

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बागेष्वर के भौतिक विज्ञान विभाग के तत्वाधान में आयोजित उत्तराखण्ड राज्य के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का योगदान विशय पर दो दिवसीय राज्य स्तरीय कांफ्रेंस का दिनांक 26–27 अक्टूबर को षुभारंभ हुआ। वक्ताओं ने राज्य के विकास में विज्ञान की महत्ता पर लंबी चर्चा की। कार्यक्रम में बतौर मुख्य अतिथि विवेकानंद पर्वतीय कृशि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के निदेषक, डॉ0 जे0सी भट्ट ने कहा कि कृशि प्रधान देष के लिए वैज्ञानिक षोध की नितांत आवष्यकता है। आधुनिक युग में इसकी महत्ता और बढ़ जाती है। आज विभिन्न प्रकार के बीजों के षोध से ही राज्य का देष में अव्वल स्थान है। उन्होंने कहा कि वैज्ञानिक दृश्टि से काम करने से किसान तथा राज्य का विकास होगा। अध्यक्षता करते हुए प्राचार्य डा. जे.सी. गड़कोटी ने कहा कि इस तरह के कांफ्रेंस से जहां देष को विकासषील सोच मिलेगी वहीं किसानों को भी इसका देर सबेर लाभ होगा। समारोह में वक्ताओं ने कहा कि राज्य के विकास में कृशि वानिकी का बड़ा योगदान है। उत्तराखण्ड का अधिकांष भू–भाग वनों से आच्छादित है। इसके समुचित इस्तेमाल की आवष्यकता है। विज्ञान व प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के बगैर कोई भी समाज आगे नहीं बढ़ सकता है। 21 वीं सदी तो विज्ञान प्रौद्योगिकी व सूचना क्रांति के नाम से जानी जाएगी। कार्यक्रम में षोध पत्र तथा व्याख्यान संकलित पुस्तक का विमोचन किया गया। कांफ्रेस में 30 से अधिक षोधार्थियों ने षोध पत्र प्रस्तुत किये। इस कांफ्रेंस में वक्ताओं ने कहा कि विज्ञान को समाज से जोड़कर विकास के लिए प्रयोग किया जा सकता है एवं लघु जल विद्युत परियोजनाओं का इस्तेमाल कर राज्य में खुशहाली लायी जा सकती है।

समाज एवं पर्यावरण

यूजीसी ऐकेडमिक स्टाफ कालेज, कुमाऊ विश्वविद्यालय द्वारा ''एनवायरनमेंट, डवलपमेंट एण्ड सोसायटी'' विशय पर राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित किया गया। ये सेमिनार ''आइडिया बेनर'' के तत्वाधान में तीन दिन तक चला। इस सेमिनार में अध्यक्षता कर रहे ले.ज.एम.सी. भण्डारी ने कहा कि हमें सबसे पहले अपनी कृशि को बचाना चाहिए, जिससे कि आय के साथ–साथ मिट्टी को भी बचाया जा सके। इतना ही नहीं इससे प्रदूषण, पानी व मिट्टी सभी को लाभ होगा। इसी क्रम में डा0 जोशी ने बताया कि ''वॉटर चैक्स'' से इको बैलेंस बनाया जा सकता है। अन्य विषेशज्ञों ने ''जोंयट फारेस्ट मैनेजमेंट'' द्वारा व वन पंचायतो के माध्यम से जगंलों को बचाने पर जोर दिया जिससे पर्यावरण कुछ हद तक स्वच्छ रह सकता है। गाँववासी व वन संरक्षकों की सहायता से जंगल व जमीन बचाई जा सकती है।

ग्लोबल वार्मिंग और जल संसाधनों पर उसका प्रभाव

ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय ने ''ग्लोबल वार्मिंग और जल संसाधनों पर उसका प्रभाव'' विशय पर राष्ट्रीय स्तर का सेमिनार आयोजित किया। इसमें भारत में जल संसाधनों पर ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव, उनका प्रबंधन आदि विशयों पर विस्तृत चर्चा की गई। इसके प्रभाव को कैसे कम किया जा सकता है ? चर्चा का विषय रहा। विषय विषेशज्ञों द्वारा सुझाये गये उपायों को छात्र–छात्राओं के माध्यम से जन सामान्य तक पहुंचाना इस सेमिनार का मुख्य उद्देश्य रहा।

तकनीकी संगोष्ठी 2010

''रिसेन्ट ट्रेन्डस इन माइक्रोवेव एवं मिलिमीटर वेव तकनीक'' विषय पर गोश्ठी का आयोजन ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय में किया गया। इस गोष्ठी में शिक्षकों, शोधार्थियों व प्रतिभागी छात्र–छात्रओं आदि को विषय विषेशज्ञों के माध्यम से नई तकनीकों से अवगत कराया गया। इस गोष्ठी के माध्यम से आने वाले दिनों के लिए छात्र–छात्राएं कैसा 'स्लेबस' पढ़े इसका भी ज्ञान दिया गया। आधुनिक इन्डस्ट्रीस में किन नई तकनीकों से लाभ उठाया जा सकता है, विषय पर विचार–विमर्श हुआ, छात्रों में उत्साह व नयी–नयी तकनीकों को खोजने पर ध्यान देने की सलाह दी गई।

कम्प्यूटर शिक्षा में प्रशिक्षण कार्यक्रम

''हिमालयन इन्स्टीट्यूट ऑफ कम्प्यूटर एजुकेषन संस्था'' द्वारा पिथौरागढ़ में एस.सी/एस.टी./ओ.बी.सी/बी.पी.एल. परिवारों के बच्चों के लिए छः महीनों का एक 'ट्रेनिंग प्रोग्राम आरंभ किया गया। इसमें पहले ऊपर लिखे हुए परिवारों के बच्चों की सुनिष्चितता की गई। इसके बाद उनको कम्प्यूटर षिक्षा, अंग्रेजी बोलचाल, व्यक्तित्व निखार, समूह चर्चा आदि पर प्रषिक्षण देना आरंभ किया गया।

सांख्यिकी एवं गणित विषय पर कार्यशाला

एस0एस0 जे कैम्पस कुमांऊ विष्वविद्यालय द्वारा ''इटरफेस बिटविन स्टैटेस्टिक्स, मैथेमैटिक्स एण्ड एलायड सांइसिज'' विशय पर राश्ट्रीय स्तर के सेमिनार को आयोजित किया गया। 100 से अधिक विषेशज्ञों, वैज्ञानिकों व प्रतिभागियों ने इस सेमिनार में भाग लिया। देष के विभिन्न षहरों जैसे कलकता, दिल्ली, कानपुर, बैंगलौर, गुड़गांव, इलाहाबाद, पूना आदि स्थानों से आये विषेशज्ञों ने विशय पर अपने–अपने विचार व्यक्त किए। इस सेमिनार का उद्देष्य था कि हम ऐसी विधियाँ अपनाएं जिनसे इस नये राज्य को लाभ मिल सके। यहां पर षिक्षक, षोधार्थी व वैज्ञानिक स्टैटेस्टिक्स मैथेमेटिक्स और अन्य विज्ञानों में तालमेल कर ऐसे उपाय सुझाए जिससे नये गठित राज्य का विकास हो सके। स्टैटेस्टिक्स के माध्यम से मल्टीवैरियेट एनालेसिस, लार्ज डाटा एनालैसिस आदि–आदि को आसान बनाया जा सकता है। जिनसे षीघ्र गुणवत्ता परक परिणामों पर पहुंचा जा सकता है।

पक्षी दिवस (5 जनवरी) पर विशेष

बिना पासपोर्ट के मेहमान!

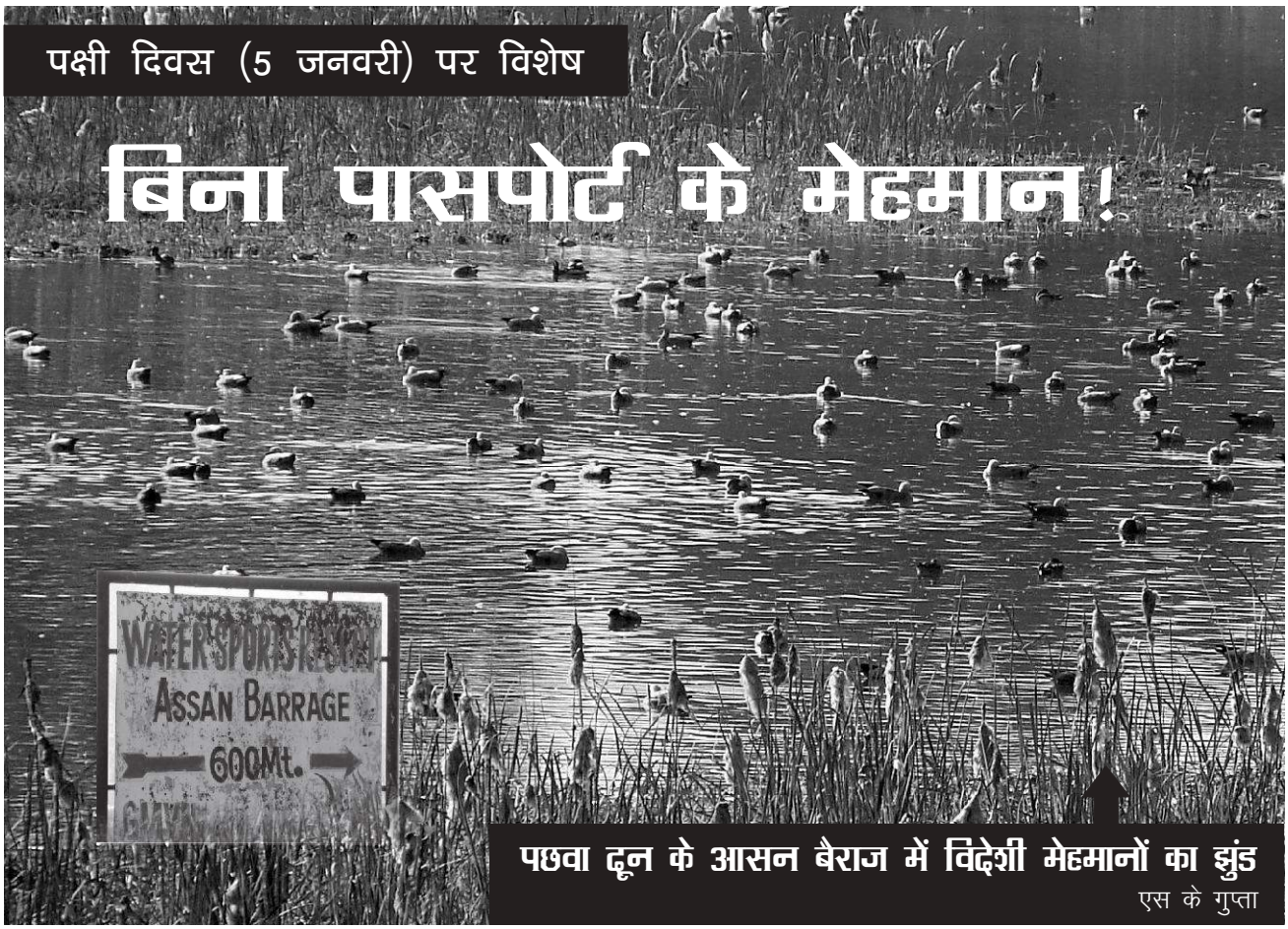

पछवा दून के आसन बैराज में विदेशी मेहमानों का झुंड

एस के गुप्ता

नोट : प्रवासी अथवा निवासी पक्षियों से संबंधित चित्रों को पत्रिका के कवर के अन्तिम पृष्ठों पर दर्शाया गया है। चित्रों पर अंकित संख्या का संदर्भ इस लेख की सामग्री में स्थान – स्थान पर दिया गया है (जैसे गोल्डन प्लोवर 1 आदि)।

'विदेशी मेहमानों का 'आसन बैराज' में आना प्रारम्भ', 'विदेशी मेहमान पहुँचने लगे हैं' 'हजारों की संख्या में सुर्खाब दून . घाटी पहुँचे' '.....सितम्बर – अक्टूबर माह से प्रारम्भ हो जाता है विदेशी पक्षियों का आना ''.....फरवरी – मार्च आते – आते विदे'ी मेहमान अपने मूल आवास को वापस लौटने लगते हैं', आदि, आदि। ये वो समाचारों के शीर्षक अथवा पंक्तियों के अंश हैं जो प्रतिवर्ष समाचार माध्यमों द्वारा जन – जन की जानकारी अथवा जिज्ञासाओं को शांत करने के लिए प्रसारित/प्रचारित होते रहते हैं । पक्षी – विज्ञानी अथवा रंग – बिरंगे खगों में रूचि रखने वाले व्यक्ति प्रतिवर्ष उत्सुकतावश, वैज्ञानिक तथ्यों की खोज हेतु अथवा पक्षियों की गणना हेतु सक्रिय हो जाते हैं।

पक्षी प्रकृति की एक ऐसी विचित्र कृति है, जिसने वायु पर जीत हासिल की अथवा यूँ कहें कि पक्षी ऐसे प्राणी हैं जिनका शरीर वायु में उड़ान के लिए अनुकूलित है। कहना न होगा, अनुकूलन के क्रम में पक्षियों का शरीर कितना हल्का हो सकता था, इस पर ही जैव – विकास की प्रक्रिया के समय ध्यान केंद्रित रहा । विचित्र, किन्तु सत्य है कि पक्षियों का विकास एक समय इस पृथ्वी पर राज कर रहें सरीसृपों (साँप, छिपकली, डायनोसौर वर्ग) से हुआ और इसी कारण टी.एच.हक्सले ने ठीक ही कहा कि, ''पक्षी, ख्याति – प्राप्त सरीसृप हैं (बर्डस आर ग्लोरिफाइड रेप्टाइल्स)''।

हम अपने आस–पास जिन पक्षियों को उड़ता देखते हैं, उन्हें छोटी दूरी तय करते हुए पाते हैं, परन्तु यह जानकर आश्चर्य होता है कि कुछ पक्षी मीलों की दूरी तय कर अपने मूल आवासों से दूर चले जाते हैं । इसे पक्षियों का 'प्रवास' और इन पक्षियों को 'प्रवासी' पक्षी कहते हैं।

बहुत सी पक्षी जातियों में 'मौसमी' गमन (देशांतर) तथा वायु में उड़ान भरने की विलक्षण क्षमता होती है। सदियों से इस घटना ने मानव जाति को अचंभित किया है। बड़ा विचित्र एवं आनंदित करने वाला क्षण वह होता है जब आकाश की उँचाइयों में, बादलों से दूर पक्षियों के झुंड एक निर्दिष्ट दिशा में अग्रसर होते दिखाई पड़ते है।

गमन ! ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

- महान दाशर्निक अरस्तू ने अपनी पुस्तक, 'जन्तुओं का इतिहास' में पक्षियों की नियमित यात्राओं का वर्णन किया था ।
- तुलसीदास जी रचित रामचरितमानस की निम्न पंक्तियों में खंजन पक्षी के प्रवास का उल्लेख स्पष्ट होता है।

जान शरद ऋतु खंजन आए,
पाइ समय जिमि सुकृति सुहाए।

पक्षियों की विलक्षण गमन (= प्रवास) गतिविधि एक द्वि–पथीय यात्रा है जो नियमित अंतराल में प्रतिवर्ष उनके ग्रीष्म एवं शरद आवासों अथवा यूँ कहें कि प्रजनन एवं स्थायी नीडों एवं पोषण तथा विश्राम स्थलों के बीच होती रहती हैं। वे पक्षी जो वर्ष – दर – वर्ष एक ही स्थान पर निवास करते हैं, उन्हें **'निवासी–पक्षी' (रेज़ीडेन्ट बर्ड्स)** कहते है। पक्षियों में प्रवास विविध प्रकार से होता है, जैसे :

गमन के प्रकार

- **अक्षांशीय अथवा उत्तर दक्षिण गमन (लैटीट्यूडिनल)**

इस प्रकार का गमन उत्तर से दक्षिण तथा विपरीत दिशा में होता है और यह उत्तरी गोलार्द्ध तक ही सीमित रहता है । यहाँ पर पक्षी ग्रीष्म ऋतु के समय **समशीतोष्ण (टेम्परेट)** तथा **उप – उत्तरी – ध्रुवीय (सब – आर्कटिक)** क्षेत्रों मे गमन करते रहते है जहाँ पर भोजन एवं घोंसला बनाने की सुविधाएं उपलब्ध रहती हैं। शरद ऋतु के समय ये पक्षी दक्षिण की ओर आश्रयों की खोज में निकल पड़ते है क्योंकि उस समय उत्तरी – ध्रुवीय क्षेत्र बर्फ से ढक जाते हैं, उदाहरण के लिए बहुत से उत्तरी – अमेरिका तथा यूरेशिया के पक्षी भूमध्य रेखा को पार कर दक्षिणी अमेरिका तथा अफ्रीका के गर्म एवम् घने क्षेत्रों में शरद ऋतु बिताने चले जाते हैं। अमेरिका का **'गोल्डन प्लोवर'**[1] नामक पक्षी शरद ऋतु के 9 महीने अपने मूल आवास से लगभग 13,000 किमी दूर दक्षिण में अर्जेंटाईना में बिताता है। इसी प्रकार साइबेरिया तथा यूरोप के कुछ पक्षी भारत के हिमालयी क्षेत्रों से मैदानी इलाकों की ओर गमन करते हैं। उपर्युक्त के विपरीत दक्षिणी गोलार्ध में भी गमन होते हैं जहाँ पर उत्तर से उलट मौसमीय परिवर्तन होते हैं।

- **लम्बवत / अनुदैर्ध्य अथवा पूरब – पश्चिम गमन (लौंगिट्यूडिनल)**

ऐसे गमन पूर्व से पश्चिम तथा विपरीत दिशा में होते हैं, उदाहरण के लिए स्टारलिंग (मैना)[2] ' नामक पक्षी पूर्वी यूरोप अथवा एशिया में स्थित प्रजनन क्षेत्रों से एटलांटिक तटों की ओर गमन कर जाते हैं। यह गमन महाद्वीपीय शरद ऋतु से बचने के लिए होता है।

- **पहाड़ों की उँचाईयों में गमन (आल्टिट्यूडिनल अथवा वर्टिकल)**

समशीतोष्ण क्षेत्रों में जहाँ भी पर्वत श्रृंखलाएँ पाई जाती हैं, वहाँ पक्षी नियमित रूप से मौसम परिवर्तनों के साथ पहाड़ की ऊँचाईयों से नीचे तथा नीचे से वापस उँचाईयों की ओर गमन करते हैं। स्पष्ट है कि ये पक्षी ग्रीष्म ऋतु का समय पर्वतीय क्षेत्रों में व्यतीत करते हैं परन्तु शरद ऋतु आने पर निचले क्षेत्रों की ओर वापस लौट आते हैं। ऐसे गमनकारी पक्षियों में अर्जेंटाईना एन्डीज़ के **'ज़िरेबीज़'**[3] तथा साइबेरिया के **'विलो टारमिगन'**[4] तथा हिमालय के **ग्रिफॉन**[5], **रूबीथ्रोट**[6], **मोनाल**[7], **छोटी कोयल**[8], **स्नो कॉक**[9], आदि प्रमुख हैं।

- **आंशिक गमन**

समशीतोष्ण क्षेत्रों के बहुत से पक्षी केवल **'आंशिक गमनकारी'** होते हैं। कभी – कभी स्थायी निवासी पक्षियों (जो कभी गमन नहीं करते) के झुण्ड में, अल्पकाल के लिए उसी जाति के सदस्यों के आ जाने से संख्या में वृद्धि हो जाती है, उदाहरण के लिए कनाडा तथा उत्तरी संयुक्त राष्ट्र के प्रदेशों से **'खलिहान उल्लू' (टाइटो एल्बा)**[10], **'ब्लू–जे'**[11], आदि दक्षिण की ओर यात्रा करते हैं और दक्षिणी प्रदेशों की स्थानीय जनसंख्या में मिश्रित हो जाते हैं।

- **अनियमित गमन**

कुछ पक्षियों में प्रजनन के पश्चात् वयस्क तथा उनके शिशु अपने मूल आवासों से भोजन एवम् सुरक्षा की खोज में किसी भी दिशा में सैकड़ों मील दूर तक भटक जाते हैं। ऐसे पक्षियों में **'बगुले'**[12] जैसे पक्षी प्रमुख होते हैं। कभी – कभी समुद्री तूफानों के कारण, समुद्री पक्षियों के समूह लगभग 3,300 किमी. से भी अधिक दूरी तक भटक जाते हैं जहाँपर वे निढ़ाल होकर गिर पड़ते हैं और अपरिचित तटों पर दम तोड़ देते हैं।

- **मौसमी गमन**

वैज्ञानिकों ने गमनकारी पक्षियों को मौसमों के अनुसार निम्न वर्गों में बाँटा है :

1. ग्रीष्म आगंतुक (समर विज़िटर्स)

वे पक्षी जो वसन्त ऋतु में दक्षिण से उत्तर की ओर आते हैं और वहाँ प्रजनन कर शरद ऋतु में दक्षिण की ओर लौट जाते हैं, जैसे ब्रिटेन के **स्विट**[13], **स्वैलो**[14], **बुलबुल**[15], **कोयल**[16] आदि।

2. शरद आगंतुक (विंटर विज़िटर्स)

ये पक्षी शरद ऋतु में मुख्यत : उत्तर से आते हैं और पूर्ण शरदीय काल व्यतीत हो जाने के पश्चात् वसन्त ऋतु के आगमन पर उत्तर की ओर गमन कर जाते हैं। **फील्डफेयर**[17], **स्नो – बंटिग**[18] तथा **रेड – विंग**[19] नामक पक्षी इस श्रेणी में प्रमुख हैं।

3. राह के पक्षी (बर्ड्स आफ पैसेज)

कुछ पक्षी गमन करते समय बसंत तथा शरद ऋतु में गर्म अथवा ठन्डे प्रदेशों की ओर जाते हुए, वर्ष में दो बार अल्पकाल के लिए गमन पथों पर दिखाई पड़ते हैं। ऐसे पक्षियों को राह के पक्षी की संज्ञा दी जाती है। **'स्नाईप'**[20] तथा **'सैंड – पाइपर'**[21] नामक पक्षी इनमें प्रमुख हैं।

'आसन बैराज' में विश्राम करते मेहमान

II गमन के समय उड़ान भरने के ढ़ंग

- **रात्रि उड़ान**

अधिकांश गमनकारी पक्षी रात्रिचर होते हैं, जिनमें गौरय्या समान पक्षी जैसे रैब्लर[22], थ्रशेज़[23] आदि सम्मिलित होते हैं। रात्रि में उड़ान भरने का मुख्य कारण अंधकार के सुरक्षा कवच में शत्रुओं से बचकर गमन करना होता है।

- **दैनिक उड़ान**

बहुत से बड़ी आकृति वाले पक्षी जैसे कौऐ[24], स्वैलौ, रॉबिन[25], बाज़[26], क्रेन[27], लून[28], पेलीकन (हवासील)[29], गीज़ (कलहंस)[30], तथा अन्य तटीय पक्षी दिन में उड़ान भरते हैं तथा इनमें झुंड बनाकर यात्रा करने की प्रवृत्ति होती है।

- **गमन के समय झुंड विशेषता**

बाज़, स्विट, नीलकंठ (किंगफिशर) 31 जैसे पक्षी अलग–अलग समूहों में यात्रा करते हैं, जबकि स्वैलो, टर्की 32, ब्लू–बर्ड 33 आदि, आकृति एवम् भोजन में समानता होने के कारण, कई जातियों के मिश्रित समूहों में यात्रा करते हैं। कुछ में तो नर एवम् मादा अलग–अलग यात्रा करते हैं और नर सबसे पहले गंतव्य स्थल पहुँच कर घोंसले बनाना प्रारंभ कर देते हैं। शिशु पक्षी तो मादा के साथ ही रहते हैं।

- **गमन दूरी**

गमन के समय तय की गई दूरी जाति विशिष्ट एवम् स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है, उदाहरण के लिए, हिमालयी तीतर (पारट्रिज) 34 कुछ ही सैकड़ों मीटर अथवा 1 – 2 किमी. तक नीचे की ओर आ जाते हैं, जबकि, अलास्का के 'शिकेड' 35 नामक पक्षी लगभग 2,500 मीटर तक नीचे आ जाते हैं। लम्बी दूरी प्रवास में निसंदेह 'उत्तरी ध्रुवीय टर्न' (आर्कटिक टर्न) 36 नामक पक्षी 'चैंम्पियन' कहलाता है। यह पक्षी आर्कटिक क्षेत्र में सुदूर उत्तरी लैब्राडोर के बफ़ रहित तटों पर ग्रीष्म ऋतु व्यतीत करता है और प्रजनन करता है । तत्पश्चात् शीतकाल में यह एंर्टाकटिका के तटों की ओर लगभग 18,000 किमीण की दूरी लगभग 200 किमीण प्रति दिन की दर से तय कर वहाँ पहुँच जाता है और ग्रीष्म ऋतु आने पर, पुनः उन्ही रास्तों से होते हुए अपने मूल आवास आ जाता है। इसी प्रकार यूरोप का 'सफेद सारस' 37 लगभग 13,000 किमी. की दूरी तय कर दक्षिणी अफ्रीका में शीतकाल व्यतीत करता है।

- **उड़ान की उँचाई**

अधिकांश गमन पृथ्वी से लगभग 900 मीटर की उँचाईयों के भीतर होते हैं। रडार की सहायता से प्राप्त आँकड़े बताते हैं कि रात्रि में उड़ान भरने वाले गमनकारी पक्षी लगभग 1520 से 4300 मीटर तक की उँचाई पर उड़ते हैं। कुछ पक्षी तो हिमालय तथा एंडीज़ पर्वत मालाओं की लगभग 6,100 मीटर या उससे भी अधिक उँचाईयों को पार कर जाते हैं।

- **उड़ान – गति**

औसतन, छोटे पक्षियों की उड़ान गति लगभग 50 किमी. प्रति घंटा के भीतर ही रहती है। भारत में 'स्विट' जातियों की अधिकतम ज्ञात की गई गति लगभग 300 से 330 किमीण प्रति घंटा है। गमनकारी पक्षी दिन अथवा रात, बिना रुके लगभग 800 किमीण प्रति घंटा के औसत से हजारों मील की दूरी तय कर लेते हैं। सामान्यतः, एक दिन में ये लगभग 5 से 9 घंटे की यात्रा करते हैं और इस बीच वे भोजन अथवा जल के लिए विश्राम करते हैं। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि अमेरिका के 'गोल्डन प्लोवर' नामक पक्षी के नाम बिना रुके उड़ान भरने का विश्व कीर्तिमान स्थापित है। यह पक्षी हडसन की खाड़ी तथा अलास्का से दक्षिणी अमेरिका तक लगभग 4000 किमी. की दूरी तय करता है।

- **गमन पथ**

पानी के जहाजों तथा प्रकाशघरों (लाइटहाउस) से एकत्रित आंकड़े बताते हैं कि प्रवासी पक्षी निरंतर एक निर्धारित पथ से ही होकर यात्रा करते हैं। दूरबीनों तथा राडारों द्वारा किए गए निरीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि छोटे आकार के थलीय पक्षी वायु के सामान्य प्रवाह के साथ–साथ आगे बढ़ते हैं। वसन्त ऋतु में यह कार्य दक्षिण से उत्तर की ओर बहने वाली गर्म हवाओं के साथ होता है जबकि शरद ऋतु में यह कार्य उत्तर से दक्षिण की ओर बहने वाली ठण्डी हवाओं के कारण होता है।

III गमन समस्याएँ

प्राग. ऐतिहासिक काल से ही ए जब मानव ने पक्षियों को विचरण करते देखना प्रारंभ किया और वसन्त ऋतु समाप्त हो जाने पर उनके अदृश्य एवम् वसन्त के आ जाने पर पुनः उनके प्रकट हो जाने को देखा ए तब से ही गमन से संबंधित, अचंभित करने वाली समस्याएँ मानव के लिए अनबूझ पहेली बन कर रह गई हैं। मानव के समक्ष बहुत से प्रश्न सदैव ही जाग्रत रहे और उन प्रश्नों का उत्तर खोजने में वैज्ञानिकों ने अथक प्रयास किए और अलग अलग परिकल्पनाओं को जन्म दिया। आइए ! गमन से संबंधित पहेली बने कुछ प्रश्नों पर विचार करें रू

1. गमनकारी पक्षी कैसे अपना रास्ता ढूंढते हैं ?

निश्चित ही यह उत्सुकता विचारणीय है कि पक्षी कैसे निश्चित पथों से होकर अविरल यात्राएँ करते रहते हैं? इस संदर्भ में बहुत से स्पष्टीकरण एवम् सिद्धाँत प्रस्तुत किए गए हैं, जैसे,

- **दृष्टिगत थलसंकेत**

ऐसा माना जाता रहा है कि पर्वत श्रृंखलाओं ए सागरीय टापुओं के समूह, तटीय क्षेत्रों, नदी घाटियों, विशाल नदियों आदि जैसे भौगोलिक अथवा थलीय संकेतों की पहचान कर पक्षियों को निश्चित दिशा का ज्ञान/आभास होता है। परन्तु इस परिकल्पना को बहुत से वैज्ञानिकों ने सटीक नहीं समझा क्योंकि रात्रि में गमन करने वाले अधिकांश पक्षी ऐसे थलीय संकेतों का सुविधाजनक रूप से उपयोग नहीं कर सकते। साथ ही साथ उन पक्षियों के बारे क्या कहा जाए जो विशाल सागरों के ऊपर से होकर गमन करते हैं ए जहाँ संकेत के रूप में ऐसे कोई समुद्री संकेत नहीं होते हैं।

- **अनुभव**

कुछ प्रकृति वैज्ञानिकों का मानना है कि पक्षी अनुभव से सीखते हैं। ऐसा माना गया कि परंपराओं का निर्वाह करते हुए ए समूह के युवा सदस्य अनुभवी पुराने सदस्यों का अनुसरण करते हैं। हालांकि ए कुछ पक्षी वयस्कों से पथ की दिशा नहीं सीखते क्योंकि वे तो झुंड बनाकर उड़ते ही नहीं। कभी – कभी ऐसा भी होता है कि जब बहुत से युवा पक्षी स्वतंत्र रूप से बिना वयस्कों के दिशानिर्देश के यात्रा करते हैं। तो ऐसा प्रतीत होता है कि पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही प्रकार का व्यवहार अपनाते हुए यह गमनकारी व्यवहार एक नैसर्गिक स्वभाव (इंन्सटिंक्ट) बनकर उनके मस्तिष्क तंत्र में पैठ कर चुका है।

- **पृथ्वी का चुम्बकत्व क्षेत्र**

कुछ वैज्ञानिकों ने यह विचारधारा विकसित की कि पक्षियों की उड़ान पृथ्वी के चुम्बकत्व क्षेत्र से प्रभावित होती है तथा उनके ' कान ' पृथ्वी के चक्कर लगाने से उत्पन्न एक प्रकार के यांत्रिक प्रभाव के प्रति संवेदनशील होते हैं। परन्तु, इस विचारधारा के सम्बन्ध में पुष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं हो सके हैं।

- **खगोलीय पिण्डों द्वारा निर्देशित होना**

पक्षी वैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा यह स्पष्ट किया कि दिन में यात्रा करने वाले पक्षी सूर्य को दिशा निर्धारण करने के लिए एक दिक्सूचक (कम्पास) की तरह उपयोग करते हैं। रात्रि में उड़ान भरने वाले पक्षी तारा – मण्डल ए नक्षत्र ए ग्रह आदि की मदद से दिशा निर्धारण करते हैं।

2. गमन की उत्पत्ति कैसे हुई?

प्रवासी पक्षियों में गमन की उत्पत्ति कैसे हुई ए इस संदर्भ में भी अलग अलग विचारधाराएँ प्रस्तुत की गईं । एक विचारधारा के अनुसार पक्षियों का मूल आवास उत्तरी गोलार्ध था तथा भूगर्भीय प्लीसटोसीन काल में पक्षियों के रहने के लिए उपयुक्त जलवायु उपलब्ध थी परन्तु उस काल के अन्तिम चरण बर्फबारी से भरपूर थे । हिमखण्डों (ग्लेशियरों) के लगातार बढ़ते जाने के कारण पक्षियों को दक्षिण की ओर विस्थापित होना पड़ा परन्तु जब हिमखण्ड खिसक गए अथवा समाप्त हो गए तो पक्षी पुनः उत्तर की ओर प्रवास कर गए । (आपकी जानकारी के लिए ए पूरा दस लाख वर्ष का प्लीसटोसीन काल पृथ्वी पर बार – बार होने वाले गर्म – युग और हिम – युग का काल रहा है)।

एक अन्य सिद्धांत की मान्यता है कि पक्षियों का पूर्वजीय आवास उत्तर में न होकर दक्षिण में था और वे दक्षिण की ओर घोंसला बनाने तथा प्रजनन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आते थे ।

वह विचारधारा जिसे सबसे अधिक मान्यता मिली , वह थी जैवविकासीय (अथवा अनुवांश्कीय) विचारधारा। पूर्व में सभी ऊष्णकटिबन्धीय पक्षी ठण्डे उत्तरी क्षेत्रों में दूर – दूर तक फैले हुए थे क्योंकि वहाँ पर भोजन प्रचुर मात्रा में उप्लब्ध था ए परन्तु शीतकाल में वे दक्षिण की ओर चले जाने के लिए बाध्य हो जाते थे । क्योंकि यह क्रम करोड़ों वर्षों तक निरन्तर अपनाया जाता रहा तो प्रवास करना उनका एक जन्मजात (नैसर्गिक अथवा इंन्सटिंक्टिव) स्वभाव बन गया । अर्थात्, यूं कहें कि पक्षियों में प्रवास का गुण उनके गुण सूत्रों में स्थित जीनों में निहित हो गया । इसीलिए तो ऐसे पक्षी भी लम्बी यात्रा पर निकल जाते हैं जिन्होंने अपने माता . पिता के साथ कभी प्रवास यात्रा की ही नहीं थी।

बर्ड वाचिंग (पक्षी – अवलोकन)

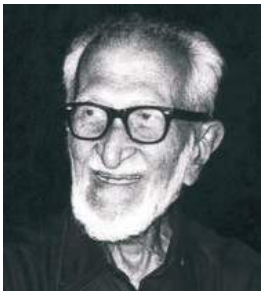

पक्षियों को उनके आवासों, क्रीड़ा – स्थलों, घोंसलों आदि में निहारने अथवा अवलोकन करने से मानव को न केवल एक मनोरंजन का क्षेत्र मिला बल्कि वैज्ञानिक अध्ययनों की एक विधा विकसित हुई। आधुनिक उपकरणों जैसे दूरबीन, टेलीकैमरा, टेपरिकार्डर आदि ने पक्षी अवलोकन को और भी सुगम बना दिया।

क्या आप जानते हैं कि पक्षी वैज्ञानिकों में एक अहम स्थान रखने वाले व्यक्ति हमारे देश में ही जन्मे थे? उनका जन्म मुम्बई में 12, नवम्बर, 1896 को हुआ था। वे थे, सालिम मोईजुद्दीन अब्दुल अली (डा. सलिम अली नाम से प्रसिद्ध)। डा. अली ने एक पक्षी अवलोकनकर्ता की लम्बी यात्रा 11 वर्ष की आयु में प्रारंभ की थी। एक बार वे चिड़ीमार के शौक को पूरा करने के लिये बाहर निकले और उन्होंने गले पर पीले रंग के धब्बे वाली एक गौरय्या को मार गिराया। उन्हें वह पक्षी कुछ भिन्न सा लगा और वे उस पक्षी को मुम्बई स्थित ''बाम्बे नैचुरल हिस्टरी सोसायटी'' ले गए जहाँपर उन्होंने न केवल उस पक्षी की पहचान कराई बल्कि वहाँ पर कार्यरत एक वैज्ञानिक ने उनसे कहा, ''क्यों नहीं तुम स्वयं पक्षियों का एक अपना संग्रह बनाते हो? तब तुम प्रत्येक पक्षी के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त कर पाओगे''। पक्षी अवलोकन में उनकी अभिरूचि इतनी प्रबल थी कि वे देश . विदेश घूम कर पक्षी अवलोकन में ही पूरे जीवनभर व्यस्त रहे। परिणाम यह हुआ कि आज उनके भारत एवम् पाकिस्तान के पक्षियों की पहचान सम्बन्धी पुस्तकों के 10 खण्ड उपलब्ध हैं। डा. अली ने कहा था, 'बर्ड वाचिंग एक सस्ता एवम मनोरंजनकारी शौक है, इससे आपको आत्मिक सुखानुभूति तो होती ही है, आप बाहर जाते हो और सुंदर आकृतियों, रंगों और ध्वनियों की खोज में लग जाते हो। आप न केवल पक्षी, बल्कि अन्य वस्तुएँ भी देखते हो। एक यदा कदा पक्षी अवलोकनकारी से तब तुम प्रकृतिवादी बन जाते हो'।

बर्ड रिंगिंग

पक्षियों के पैरों में छल्ला पहनाने की प्रचलित विधि को ' बर्ड रिंगिंग ' कहते हैं । बर्ड रिंगिंग अभियान ने प्रवासी पक्षियों से संबंधित आंकड़े एकत्र करने की दिशा में क्रांति ला दी है । बर्ड

रिंगिंग जैसी वैज्ञानिक तकनीक को आरंभ करने का श्रेय डेनमार्क के पक्षी वैज्ञानिक एच. सी. सी. मार्टेनसन (1890) को जाता है । भारत में बर्ड रिंगिंग कार्यक्रम को मूर्त रूप देने का श्रेय बाम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसायटी , मुम्बई और सालिम अली जैसे समर्पित वैज्ञानिकों को जाता है । बाम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसायटी ने देश की आजादी से पहले ही वर्ष 1926 में बर्ड रिंगिंग और अन्य

आधुनिक तकनीकों की मदद से प्रवासी पक्षियों का अध्ययन करना प्रारंभ कर दिया था । पक्षियों के पैरों में छल्ले फंसाकर संदेश भेजने की विधि पुराने समय में भी मौजूद रही है । भारत में भी कबूतरों की मदद से दूर स्थानों पर रहने वाले व्यक्तियों को संदेश भेजे जाते थे । बाज़ , लगलग 38, आदि पक्षियों को भी इस काम के लिए उपयोग में लाया जाता रहा है । एल्यूमिनियम धातु के छल्लों को प्रवासी पक्षी के पैर में पहनाकर व छल्ले पर पक्षी विशेष का नाम , स्थान , पता और तिथि जैसी कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएँ दर्ज कर उन्हें खुले आकाश में छोड़ देने के बाद जो भी व्यक्ति जहाँ भी इन्हें पाता है , वह इसके प्रवास से संबंधित आँकड़े दर्ज कर लेता है और संभव होने पर छल्ला पहनाने वाले को सूचित करता है । एक अनुमान के अनुसार वर्तमान समय में पूरे विश्व में प्रति वर्ष करीब 15 लाख पक्षियों को छल्ले पहनाए जाते हैं । इन छल्लों की विशिष्ट संरचना होती है । प्रत्येक छल्ले पर अंग्रेज़ी भाषा में छल्ले पहनाने वाली

संस्था / व्यक्ति का नाम और पता , एक क्रम संख्या और पक्षी विशेष के लिए एक अंक लिखा होता है । इसके अलावा छल्ले पर संबंधित संस्था / व्यक्ति को सूचना देने का अनुरोध भी होता है।

3. गमन प्रारंभ करने के लिए उद्दीपन क्या है?

ऐसे कौन से आंतरिक अथवा वाह्य उद्दीपन रहे होंगे जिन्होंने वर्ष के निश्चित समय पर ही पक्षियों को प्रवासीय यात्रा के लिए प्रेरित किया। ऐसे पक्षी जो शीतकाल में गमन करते हैं, उनके गमनकारी जन्मजात स्वभाव को प्रदर्शित होने के त्वरित कारणों में – भोजन की कमी ए दिनों का छोटा होना तथा ठण्ड में वृद्धि होना आदि प्रमुख रहे होंगे। सामान्यतः प्रवास, जननचक्र का एक अंग है। जब पक्षियों के जनद विकसित होने लगते हैं तो वे उत्तर की ओर गमन करते हैं और जब तक वे अपने प्रजनन स्थलों तक पहुँचते हैं तो उनके प्रजनन अंग पूर्ण रूप से सक्रिय हो चुके होते हैं। दिन के छोटा अथवा बड़े होने से मस्तिष्क में स्थित पीयूष ग्रंथी (जो हारमोन बनाती है) सक्रिय हो जाती है जिस कारण जनदों एवम तंत्रिका तंत्र को ऐसे उद्दीपन मिलते हैं कि पक्षियों में प्रवास करने की एक प्रबल इच्छा जाग्रत होने लगती है। ऐसा भी देखा गया है कि प्रवास से पूर्व बहुत सी पक्षी जातियों में एक अजीब सी बेचैनी होती है तथा शरीर में चर्बी का जमाव (लम्बी दूरी की उड़ान के लिए संचित ईंधन) हो जाता है।

4. गमन के उद्देश्य एवम लाभ?

प्रवासी यात्रा से न सिर्फ पक्षी बल्कि मानव भी लाभान्वित होता है। गमन द्वारा बदलते मौसम के तीखे मिजाजों से पक्षी अपने आप को सुरक्षित कर लेते हैं और प्रवासीय कार्यक्रम को ऐसे व्यवस्थित करते हैं कि उन्हें समुचित भोजन एवम घोंसलें बनाने के स्थान उपलब्ध होते रहें। प्रवासी पक्षी हमारे लिए भी लाभदायक होते हैं। फल खाने वाले पक्षी फलों को बीज सहित खा जाते हैं और वे बीज पक्षियों की बी के साथ जगह – जगह बिखर जाते हैं। इस प्रकार ये पक्षी फलों और बीजों के विकिरण में सहायक होते हैं। 'हाजी लगलग' नामक पक्षी सर्दी की शुरुआत होते ही यूरोप से हमारे देश में आता है और वसंत के आगमन पर अपने देश वापस चला जाता है। कीड़े, चूहे, मेंढक, मछलियाँ और टिड्डे इसके आहार होते हैं। टिड्डी के अंडे और लार्वा इसके प्रिय भोजन होते हैं और ये टिड्डे हम मनुष्यों के दुश्मन हैं। हर वर्ष हमारी फसलों को टिड्डियों के दल मिनटों में चट कर जाते हैं। केवल 'हाजी लगलग' ही नहीं बल्कि लगभग सभी प्रजातियों के पक्षी कीट भक्षी होते हैं और इस प्रकार ये पक्षी हम मनुष्यों के लिए बहुत लाभदायक साबित होते हैं।

5. लम्बी दूरी की उड़ान ये पक्षी कैसे बनाए रखते हैं?

प्रवास से पूर्व पक्षियों में चर्बी की अधिक मात्रा संचित हो जाती है। चर्बी ऊर्जा का एक उत्तम स्रोत है। चर्बी के 1 ग्राम जारण से, शक्रा की तुलना में, न केवल दो गुने से भी अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है बल्कि अधिक जल भी उत्पन्न होता है। इसीलिए तो लम्बी दूरी प्रवास यात्रा करने वाले पक्षी बिना भोजन एवम जल ग्रहण किए सैंकड़ों मील दूर चले जाते हैं।

भारत में प्रवासी पक्षी

विश्व में लगभग 10,000 पक्षी प्रवासी हैं। भारत में आने वाले प्रवासी पक्षी मुख्यतः शरद आगंतुक (विंटर विज़िटर्स) होते हैं अर्थात्, ये पक्षी शरद ऋतु (सितम्बर से नवम्बर) में उत्तरी गोलार्ध से दक्षिण की ओर भारत एवम् समीपस्थ देशों के जलीय आवासों की ओर गमन कर जाते हैं। वहाँ आकर प्रवासी पक्षी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भोजन पर निर्भर करते हैं एवम् प्रजनन पश्चात् पूर्ण शरदीय काल व्यतीत हो जाने के बाद वसन्त ऋतु (फरवरी – मार्च) के आगमन पर पुनः उत्तर की ओर अपने मूल आवासों को लौट जाते हैं। आइए ! ऐसे कुछ विदेशी मेहमानों का परिचय प्राप्त करें, जो दून घाटी के आसन बैराज, भीमगो.डा बैराज, गोलतप्पर, लालतप्पर, मोंथरोंवाला स्वैम्प (दलदली क्षेत्र) ; यमुना, गंगा, सौंग, सुसवा, टौंस से लगे दलदली क्षेत्रों आदि में सामान्यतः देखे जा सकते हैं :

1. शिव – हंस (46 – 51 सेमी.) ग्रेट केस्टेड ग्रीब; पोडिसेप्स क्रिस्टेटस[39]

तटीय क्षेत्रों में सामान्य रूप से पाई जाने वाली ये छोटी बत्तखें उत्तरी भारत में अक्टूबर से अप्रैल तक पाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त ये यूरोप से चीन व जापान तक भी वितरित रहती हैं। 4700 – 5200 मीटर की उँचाईयों तक लद्दाख में ये जून से अगस्त तक प्रजनन करती हैं। मछली, मेंढ़क, टेडपोल, जलीय कीटों, आदि पर पोषण करने वाले इन पक्षियों के नर तथा मादा में अधिक भिन्नता नहीं होती। पूँछविहीन इन जलीय पक्षियों की गर्दन सफेद एवम् पतली, चोंच सीधी एवम् नुकीली, कान के समीप पीछे की ओर मुड़े हुए परों के दो गुच्छे स्पष्टतः दिखाई देते हैं। शरद ऋतु में (प्रजनन काल नहीं) कान जैसे मुड़े हुए परों के गुच्छे अस्पष्ट होते हैं। इन पक्षियों में जोड़े बनाकर तैरने का स्वभाव अति विकसित होता है।

2. सुर्खाब (61 – 67 सेमी.) रड्डी शेलडक या ब्रहमिनी डक; टेडोरना फेर्रूजीनिया[40]

'सुर्खाब के पर 'लग जाना तथा 'चकवा – चकवी 'जैसे प्रचलित पारंपरिक मुहावरे / शब्द इस बत्तख समान पक्षी पर आधारित है जो मोरक्को, मध्य साइबेरिया, तथा उत्तरी चीन के विस्तृत भाग में जनन करता है। इसके अतिरिक्त 4000 मीटर से भी ऊँची लद्दाख की झीलों में भी इन्हें देखा जा सकता है। उत्तरी भारत में यह अक्टूबर – नवम्बर में पहुँचता है। दून घाटी के आसन बैराज जैसे प्रसिद्ध जलाशय में गहरे बसन्ती रंग के ये बत्तख समान पक्षी झु.ड़ों में देखे जा सकते हैं। काली चोंच, पैर तथा पूँछ वाले इन पक्षियों के पंखों को ढ़कने वाले पर सफेद तथा धातुई हरे रंग की चमक लिए हुए होते हैं। प्रजनन काल में नरों की गर्दन पर एक काली पट्टी स्पष्ट दिखाई देती है। नर, मादा सामान्यतः जोड़ों में पाए जाते हैं। ये सर्वहारी होते हैं और प्रमुखतः जलीय पौधों, काई, अनाज के दानों तथा कीड़े – मकौड़ों को खाते हैं।

3. सींखपर (56 – 75 सेमी.) पिनटेल; अनास एक्यूटा[41]

यूरोप, एशिया तथा उत्तरी अमेरिका इनके मूल आवास हैं जहाँ से ये दक्षिण की ओर उत्तरी अफ्रीका, मध्य पूर्व तथा दक्षि.ा पूर्व एशिया में अक्टूबर के प्रारंभ में प्रवास करने पहुँचते हैं। इन पक्षियों का सबसे महत्वपूर्ण भाग नरों की लम्बी, नुकीली पूँछ होती है जो तैरते एवम् जल में डुबकी लगाकर भोजन करते हुए ऊपर को निकली होती है 41अ। नरों के सिर, चेहरे तथा चाकलेटी भूरे रंग की, गर्दन काली, चोंच सीसे जैसी सलेटी होती है। गर्दन के दोनों ओर एक सफेद पट्टी होती है जो सफेद गर्दन तथा छाती पर आकर मिल जाती है। पूँछ को ढ़कने वाले पर सलेटी, काले सिरों वाले होते हैं। मादाओं की पूँछ नुकीली नहीं होती और उनके शरीर पर गहरे भूरे रंग के चकत्ते देखे जा सकते हैं। जलाशयों में इन्हें सैकड़ों के झुंड में देखा जा सकता है। दिन में विश्राम कर रात्रि में सक्रिय रूप से शाकाहार करते हैं। इसके अतिरिक्त घोंघे आदि भी ये खा लेते हैं।

भारत के प्रमुख पक्षी विहार

भारत में बहुत से पक्षी विहार हैं जहाँपर प्रवासी पक्षी शीतकाल व्यतीत करने आते हैं। इन पक्षियों का अवलोकन अत्यंत मनोहारी होता है। कुछ प्रमुख पक्षी विहार निम्नलिखित हैं :

1. आसन बैराज (उत्तराखण्ड) : ढ़ालीपुर झील नाम से प्रसिद्ध, सन् 1967 में स्थापित, देहरादून – पाँवटा राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित।

2. भरतपुर पक्षी विहार (राजस्थान) : केवलादेव घाना राष्ट्रीय उद्यान नाम से विश्व प्रसिद्ध, एशिया का सबसे बड़ा पक्षी विहार, सन् 1956 में स्थापित।

3. सुलतानपुर पक्षी विहार : दिल्ली – जयपुर राष्ट्रीय राजमार्ग पर सुलतानपुर (हरियाणा) में, दिल्ली से 46 किमीण दक्षिण – पश्चिम में स्थित।सालिम अली द्वारा स्थापित इस पक्षी विहार को पक्षी अवलोकनकर्ताओं तथा पक्षियों, दोनों का स्वर्ग कहा जाता है।

4. नवाबगंज पक्षी विहार : उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के नवाबगंज में, लखनऊ – कानपुर राष्ट्रीय राजमार्ग पर 45 किमी की दूरी पर स्थित।

5. विजय सागर पक्षी विहार : उत्तर प्रदेश के महोबा जिले में, विजय सागर बाँध के समीप स्थित 11वीं शताब्दी में विजय पाल चंदेल द्वारा निर्मित यह सुन्दर झील तैराकी एवम् अन्य जल क्रीड़ाओं के लिए भी उपयुक्त है।

6. चिल्का झील : एशिया की खारे पानी की सबसे बड़ी झीलों में से यह झील उड़ीसा राज्य में पुरी ज़िले के पूर्वी तट पर स्थित है।इसमें छोटे – छोटे द्वीपों का समूह है।

7. कुमाराकोम पक्षी विहार : पक्षी अवलोकनकर्ताओं का स्वर्ग कहा जाने वाला विश्व प्रसिद्ध यह विहार केरल में कोट्टायम से 16 किमी दूर, 14 एकड़ में फैला हुआ वेंम्बड़ झील के किनारे स्थित है।

8. नालसरोवर पक्षी विहार : गुजरात राज्य का विश्व प्रसिद्ध यह पक्षी विहार, अहमदाबाद से 60 किमी दक्षिण–पश्चिम में स्थित है।इसका श्रेत्रफल 115 वर्ग

किमी है।

9. परम्बिकुलम प्राणी एवम् पक्षी विहार : भारत के पश्चिम में अनामला तथा नेलियमपैथी पर्वत श्रृँखलाओं के मध्य स्थित यह पक्षी विहार केरल राज्य में है।

10. थट्टेकड़ पक्षी विहार या डा. सालिम अली पक्षी विहार : यह पक्षी विहार भी केरल के इम्माकुल्लम राज्य में, कोटमंगलम से 13 किमी उत्तरपूर्व में पुय्यमकुट्टी रोड पर स्थित यह पक्षी विहार सन् 1983 में निर्मित हुआ था।

11. रंगानाथिट्टू पक्षी विहार : कर्नाटक राज्य में कावेरी नदी के तटपर स्थित इस पक्षी विहार में 6 टापू सम्मिलित हैं।

12. सालिम अली पक्षी विहार : गोवा में माँडवी नदी के समीप, फेर्री घाट पर स्थित इस पक्षी विहार में आसानी से पहुँचा जा सकता है। इस नदी के पश्चिमी छोर पर रंग – बिरंगे पक्षियों तथा प्राकृतिक दृश्यों को निहारना अत्यंत मनोहारी है।

4. नीलसिर (50 – 65 सेमी.) मल्लार्ड ; अनास प्लैटिरिंकोस[42]

मूलतः उत्तरी धुव से दक्षिण की ओर भूमध्यसागरीय (मेडीटरेनियन) क्षेत्र तक प्रजनन करते हैं परन्तु प्रजनन क्षेत्र के दक्षिणी अर्ध भाग में (उत्तरी अफ्रीका, मध्य पूर्व, दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व एशिया) शरद ऋतु व्यतीत करने चले आते हैं। यद्यपि ये पक्षी असामान्य हैं परन्तु समपूर्ण भारत में प्रवास करते हैं। 50 से भी अधिक के झुण्डों में रहने एवम् जल को छपछपा कर ध्वनी करने वाले, बत्तख समान, धातुई गहरे हरे रंग के ये पक्षी रात्रि मे भोजन करते हैं। शाकाहार, मछली, घोंघों, टेडपोलों आदि पर भोजन करने वाले इन पक्षियों की छाती गहरे भूरे रंग तथा गर्दन पर एक सफेद पट्टी होती है। चोंच मटमैले पीले रंग की होती है। नर में पूँछ की ओर दो काले पंख बाहर ऊपर की ओर मुड़े हुए दिखाई देते हैं। मादा भूरे रंग की तथा काली एवम् धब्बेदार होती है।

5. भूआर (45 – 51 सेमी.) गडवॉल ;अनास स्ट्रेपेरा[43]

यूरेशिया तथा उत्तरी अमरीका के निवासी, ये बत्तख समान पक्षी शरद ऋतु में दक्षिण की ओर उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी एशिया तथा दक्षिणी चीन की ओर प्रवास करते है। यघपि में सम्पूर्ण भारत में समान रूप से वितरित पाए जाते हैं, परन्तु दक्षिणी भारत में ये अधिक संख्या में दृष्टिगत होते हैं। 10 से 30 पक्षियों के छोटे–छोटे झुंण्ड बनाकर रहने वाले इन पक्षियों के नर गहरे भूरे तथा सलेटी रंग के होते है जिनका उदर भाग सफेद, पूंछ मखमली काली, छाती पर अर्धचंद्रकार चिन्ह होते हैं। मादा मलार्ड (नीलसिर) के समान इनकी मादाएँ छोटी तथा हल्के रंगों वाली होती हैं, जिनके पंख चेस्टनट–भूरे तथा पैर नारंगी–पीले होते हैं। ये जलाशयों तथा नदियों के तटों पर जलीय पौधों की झाड़ियों में छुपकर रहते हैं और समय–समय पर जल की सतह से शाकाहार करते हैं।

6. छोटा लालसिर (45 – 51 सेमी.) विजिऑन ; अनास पेनिलोप[44]

आह्वटिक क्षेत्र के उत्तर में स्थित यूरेशिया के समशीतोष्ण भागों में प्रजनन करने वाले बत्तख जैसे ये पक्षी शरद ऋतु में ब्रिटे, मध्य पूर्व, दक्षिणी एशिया, दक्षिणी चीन तथा जापान की ओर गमन कर जाते हैं। भारत में सभी जलीय परिक्षेत्रों में देखे जा सकने वाली इन बत्तखों के नरों के माथे पर हल्के सफेद रंग का टीके समान एक धब्बा होता है, जो ईंट जैसे लाल रंग के सिर तथा गर्दन पर अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। नीले – सलेटी रंग की चोंच सिरों पर काली होती है। छाती के पर शराबी – लाल रंग के होते हैं तथा उदर भाग के पर अधिक सफेद एवम् पूँछ के पर काले होते हैं। मादाएँ भूरी तथा हल्के लाल भूरे रंग की होती हैं। ये भी मुख्यतः शाकाहारी होते हैं परन्तु आवश्यकता पड़ने पर ये जलीय जन्तुओं का भी सेवन कर लेते हैं।

7. टोकरवाला (44 – 52 सेमी,) शोवेल्लर ; अनास क्लीपिएटा[45]

यूरोप, उत्तरी एशिया तथा उत्तरी अमेरिका के ये प्रवासी पक्षी भी बत्तख समान होते हैं और शरद ऋतु में उत्तरी अफ्रीका, दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व एशिया तथा दक्षिणी अमेरिका की ओर प्रवास कर जाते हैं। भारत में तो इन पक्षियों को 1300 मीटर उँचाई वाले क्षेत्रों में दूर – दूर तक वितरित पाया जाता है। सलेटी – काली, चपटी एवम् बड़ी चोंच व पीली आँखों वाले नरों के सिर तथा गर्दन चमकीले हरे रंग के होते हैं। छाती का क्षेत्र सफेद, उदर एवम् पार्श्व गहरे भूरे होते हैं। मादाएँ गहरी भूरी, धब्बेदार होती हैं जिनके कंधे पर सलेटी नीले–रंग का एक चकत्ता होता है। मादाओं की चोंच हरी–भूरी और नारंगी रंग लिए होती हैं। घोंघे, झींगे, कीट आदि इनके प्रिय भोजन हैं। आवश्यकता पड़ने पर ये जलीय पौधे भी खा लेते हैं।

8. लालसिर, लालचोंच (53 – 57 सेमी,) रेडकेस्टेड पोचार्ड ; नेट्टा रयूफीना[46]

मुख्य रूप से दक्षिणी यूरोप एवम् मध्य एशिया में प्रजनन करने वाले ये पक्षी भी बत्तख जाति के हैं और मध्य पूर्व एवम् दक्षिणी एशिया में शरदीय प्रवास करते हैं। डुबकी लगाने वाली ये शाकाहारी बत्तखें गहरे जल को वरीयता देती हैं और छोटे से बड़े समूहों में देखी जा सकती हैं। नरों के सिर सुनहरे नारंगी तथा रेशमी–भूरी कलगी वाले होते हैं। चोंच गहरे लाल रंग की, गर्दन, पीठ, पूँछ काली भूरी होती है। कंधे के पीछे की ओर के परों पर सफेद पट्टी तथा पैर माँसीय–लाल रंग के होते हैं। मादाएँ ऊपर की ओर पीलापन लिए, सलेटी – भूरी होती हैं और इनकी काली चोंच के सिरे लाल रंग के होते हैं।

9. लालसिर (42 – 49 सेमी.) कॉमन पोचार्ड ; एथिया फेरिना[47]

पश्चिमी यूरोप से पूर्वी साइबेरिया तक प्रजनन करने वाले ये बत्तख जैसे पक्षी शरद ऋतु में मध्य पूर्व, दक्षिणी एशिया व दक्षिणी चीन की ओर प्रवास करते हैं। उत्तरी पश्चिमी भारत के ये अतिसामान्य प्रवासी पक्षी 5000 मीटर की उँचाईयों तक पाए जाते हैं। दक्षिण में कर्नाटका, केरला तथा तमिलनाडु में भी इन्हें देखा जा सकता है। मुख्य रूप से शाकाहार पर निर्भर करने वाले ये पक्षी कभी–कभी घोंघे, कीट, मछली, टेडपोल आदि भी खा लेते हैं। डुबकियाँ लगाने वाली ये बत्तखें

सैकड़ों से हजारों के झुण्डों में रहती हैं। जल की गहराइयों में जाकर रात्रि में भोजन करते हैं। इनके नरों के सिर एवम् गर्दन गहरे लाल भूरे, चोंच सिरों पर पीली एवम् काली, ऊपरी सतह काली सलेटी, छाती काली तथा पैर सलेटी नीले होते हैं। दूसरी ओर मादाओं के सिर, गर्दन, पीठ तथा छाती के क्षेत्र भद्दे भूरे रंग के होते हैं।

10. डुबारू (40 – 47 सेमी.) टटेड डक या टटेड पोचार्ड ; एथिया यूलिग्यूला[48]

सम्पूर्ण साइबेरिया से मध्य यूरोप तक पाए जाने वाले ये पक्षी मध्य पूर्व, दक्षिणी एशिया तथा दक्षिणी चीन जैसे प्रजनन क्षेत्रों की ओर शरदीय गमन करते हैं। भारत में इन्हें सिक्किम में 5000 मीटर की उँचाईयों तक देखा जा सकता है। प्रमुख रूप से माँसाहारी, डुबकी लगाने वाली ये बत्तखें सैकड़ों के बड़े झुण्डों में रहती हैं और मुख्यतः दिन के समय डुबकियाँ लगाकर भोजन करने में व्यस्त रहती हैं। 'पोचार्ड' कहलाने वाली इन बत्तखों के नरों में ही खोपड़ी के पिछले भाग में परों की एक लम्बी चोटी – सी दिखाई देती है। सामान्यतः इनके पर चटक काले एवम् सफेद रंग के मिश्रण वाले होते हैं, जैसे सिर, गर्दन, छाती, पीठ, पूँछ आदि चटख काले एवम् शरीर की बगलें शुद्ध रूप से सफेद होते हैं। आँखों की पुतली सुनहरी पीली तथा चोंच, टांगे, एवम् पंजे सलेटी – नीले होते हैं। दूसरी ओर मादाएँ गहरी भूरी होती हैं और खोपड़ी के पश्च भाग की चोटी बहुत छोटी होती है।

11. मर्गैन्ज़र (58 – 72 सेमी.) ईस्टर्न मर्गैन्ज़र ; मर्गस मर्गैन्ज़र[49]

सामान्यतः मध्य एशिया में प्रजनन करने वाली ये बत्तखें उत्तरी भारत, मयाँमार तथा दक्षिणी पूर्व चीन में शरदीय प्रवास हेतु आती हैं। यद्यपि उत्तरी भारत में ये कम देखी जाती हैं परन्तु पूर्वी हिमालयी क्षेत्र में इन्हें बहुतायात में देखा जा सकता है। उत्तरी पश्चिमी हिमालय, लद्दाख, सिंधु आदि नदी घाटियों में ये 3000 – 4000 मीटर की उँचाइयों तक प्रजनन करते पाई गई हैं। दिनचर, छोटे झुण्ड़ों में रहने वाले, चतुर तैराक एवम् डुबकी लगाकर खाने वाले इन काले – सफेद (नर) अथवा सलेटी – सफेद (मादा) बत्तखों की गर्दन पतली एवम् संकरी होती है। टांगे एवम् चोंच दोनों ही लाल होती हैं। नरों में सिर, गर्दन का ऊपरी हिस्सा, संकरे परों की लम्बी चोटी धातुई काले– हरे रंग की चमक वाली होती हैं। पूँछ चाँदी जैसी चमकदार एवम् भूरी होती हैं। मादाओं के सिर, चोटी व गर्दन भूरे लाल रंग के तथा ठोढी एवम् गला सफेद होते हैं। इनकी टाँगे एवम् पंजे नारंगी लाल होते हैं।

12. डसरी, कोलूर (36 – 38 सेमी. कूट ; यूलिका अतरा[50]

साइबेरिया, उत्तरी – दक्षिणी यूरोप, तथा आस्ट्रेलियन क्षेत्रों से सलेटी काले रंग के विशाल झुण्ड़ों में रहने वाले ये शाकाहारी पक्षी शरद ऋतु में मध्य पूर्व भारत व दक्षिणी पूर्व एशिया के क्षेत्रों की ओर गमन कर जाते हैं। हिमालय की 2500 मीटर की उँचाईयों वाले क्षेत्रों में तो ये निवासी (रेज़ीडेन्ट) पक्षी के रूप में रहते हैं और शरद ऋतु व्यतीत करने अन्यत्र चले जाते हैं। उत्तरी भारत में मई से सितम्बर तक प्रजनन करने वाले इन सलेटी – काले पक्षियों की चोंच हाथी – दाँत जैसे सफेद रंग की होती है। चोंच के आधार पर एक सफेद चपटी प्लेट तथा टाँगें गहरे हरे रंग की होती हैं।

13. जल – कौवा, नीआर (80 – 100 सेमी.) लार्ज कारमोरैन्ट ; फैलैह्रोकोरैक्स कार्बो[51]

उत्तरी भारत में स्थायी निवासी एवं शरदीय प्रवासी, जल कौओं के नाम से प्रसिद्ध, मछली भक्षण करने वाले, काले रंग के ये पक्षी दक्षिणी यूरोप से मध्य एशिया तक विस्तृत रूप से पाए जाते हैं। हिमालय में 3500 मीटर तक की उँचाईयों पर स्थित झीलों में भी इन्हें देखा जा सकता है। नर, मादा दोनों एक जैसे होते हैं तथा इनकी लम्बी, पतली, सिरे पर हुक के समान चोंच एवम् लम्बी पूँछ विशेष पहचान होती है। प्रजनन काल (सितम्बर से फरवरी) में बड़े समूह बनाकर रहने वाले इन पक्षियों के पर चमकदार काले एवम् धातुई नीली – हरी चमक वाले हो जाते हैं। चोंच के नीचे सफेद गले वाले क्षेत्र में हल्के पीले रंग की एक थैली (गूलर पॉउच) सी लटकी होती है।

14. पान – कौवा (51 सेमी.) लिटल कारमारैंट ;फैलैह्रोकोरैक्स नाइगर[52]

यह स्थायी निवासी जाति का छोटा 'जल कौवा' भारत के मैदानी क्षेत्रों में तथा पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांगलादेश, श्रीलंका, दक्षिणी पूर्वी एशिया के अन्य देशों में दूर–दूर तक वितरित पाया जाता है। मुख्य रूप से मछली, मेंढक एवं झींगों पर पनपने वाला काले रंग का यह पक्षी मिश्रित समूहों में रहकर जुलाई से सितंबर तक प्रजनन करता है। बड़े जल कौवों के समान ही इनकी चोंच दृढ़ एवं सिरों पर हुक के समान होती है, परन्तु आधारों पर नीली– बैंगनी और सिरों पर काली होती हैं। प्रजनन काल में इनका रंग काला, नीला–हरा चमकने वाला हो जाता है तथा खोपड़ी के पीछे वाले हिस्से पर परों का स्पष्ट उभार दिखाई देता है।

15. छोटा जल कौवा (63 सेमी.) इंडियन शैग ;फैलैह्रोकोरैक्स यूसीकोलीस[53]

छोटे जल कौवे के नाम से ही प्रसिद्ध यह स्थायी निवासी पक्षी, उत्तरी पश्चिमी, उत्तर पूर्व तथा हिमालयी क्षेत्रों को

परवा दून की सौंग नदी (रायवाला) में मछली का शिकार करते 'बड़े जल कौवे'

छोड़कर सम्पूर्ण भारत में पाया जाता है। जल उपलब्धता के आधार पर ये पक्षी स्थानीय भ्रमण करते हैं। मछलियों पर पोषण करने वाले ये पक्षी अधिकांशतः झुण्ड बनाकर उत्तर भारत में अगस्त से अक्टूबर तक प्रजनन करते हैं। बड़े एवं छोटे जल कौवों से भिन्न इन काले रंग के पक्षियों की आँखे नीले हरे रंग, चोंच गहरे भूरे रंग, चोंच के नीचे लटकी खाल पीले रंग, गला सफेद चित्तीदार तथा टांगे व पंजे काले होते हैं।

16. अंजन, ब्रैग (90 – 98 सेमी.) ईस्टर्न ग्रे हेरोन ; आरडिया सिनेरिया[54]

सम्पूर्ण भारत में असामान्य रूप से पाए जाने वाला यह पक्षी प्रायः एकल में विचरण करता है परंतु शीतकाल में जुलाई से अक्टूबर माह में मध्य उत्तरी भारत में यह समूह बनाकर प्रजनन करते हैं। मार्च से जून के महीनों में समुद्र तल से 1750 मीटर तक उँचाई तक प्रजनन करता है। लद्दाख में 4500 मीटर की उँचाई तक भी पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांगलादेश, श्रीलंका, मालदीव तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया में भी यह पाए जाते हैं। झाड़ियों में घोंसलें बनाते हैं। दिनचर। प्रायः सभी तरह के जलीय परितंत्रों में पाए जाते हैं। मछली, मेंढक, जलीय कीट, झींगा, घोंघे, लम्बे पैरों वाले इन पक्षियों के दोनों लिंग एक समान होते हैं परंतु मादा थोड़ी छोटी होती है। नर की गर्दन सलेटी ग्रे, कलगी सफेद, खोपड़ी के पीछे का भाग काला, छाती पर काली धारी वाले सफेद पर, तथा उदर भार सलेटी सफेद होता है। मादा की खोपड़ी के पीछे के पर कम विकसित होते हैं। शिशु भूरे तथा गहरे सलेटी रंग के होते हैं।

17. गुगरैल (58 – 63 सेमी.) स्पॉट – बिल डक ; अनास पोइसिलोरिंकिया[55]

भारत में 1800 मीटर की उँचाईयों वाली कश्मीर की घाटी तक पाए जाने वाले ये निवासी पक्षी हैं जो शरद ऋतु में पहाड़ों की उँचाई से नीचे की ओर गमन कर जाते हैं और उत्तरी भारत में जुलाई से अक्टूबर तक प्रजनन करते हैं। सामान्यतः जोड़ों में पाए जाने वाले ये सामाजिक बत्तख जैसे पक्षी दलदली झाड़ियों में विचरण करते हैं। मुख्य रूप से शाकाहारी इन काले – भूरे पक्षियों के नरों की चोंच के एक–तिहाई सिरे काले पीले होते हैं तथा चोंच के आधर एवं सिर के दोनों ओर नारंगी लाल रंग के उभरे हुए चकत्ते होते हैं (मादा में ये चकत्ते कम स्पष्ट होतें हैं)। माथे से लेकर सिर के पीछे तक के पर गहरे भूरे तथा गर्दन भद्दे रंग की होती है।

18. नक्टा (58 – 63 सेमी.) नक्टा, कोम्ब डक ; सारकीडिऑरनिस मेलानोटोस[56]

स्थायी निवासी, घुमक्कड़ श्रेणी का यह असामान्य रूप से दृष्टिगत बत्तखनुमा शाकाहारी, छोटे झुण्डों में पाया जाने वाला, दलदली एवं नम घासवाली धरती पर विचरण व कभी –कभी पेड़ों की डालियों पर बैठ जाने वाला यह पक्षी सम्पूर्ण भारत, पाकिस्तान, नेपाल, बांगलादेश, श्रीलंका, मयाँमार, दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिण पूर्व चीन आदि क्षेत्रों तक वितरित पाया जाता है। 'नक्टा' नाम से जाने जाने वाले इस पक्षी के नर की चोंच के आधार पर काले रंग की एक फूली हुई, मांसल कलगी जैसी संरचना होती है (मादा में अनुपस्थित)। दोनों लिंगों के सिर तथा गर्दन सफेद व काली चित्तीदार होते हैं।

19. टिंघुर (35 : 40 सेमी.) इंडियन ब्लैकविंग्ड स्टिल्ट ; हिमान्टोपस हिमान्टोपस[57]

हिमालय के 1500 मीटर की उँचाईयों तक समूचे भारत में वितरित ये पक्षी शीतकाल में स्थानीय भ्रमण करते हैं। साथ ही साथ ये पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका, मालदीव्स, भूमध्यसागरीय (मेडीटरेनियन), दक्षिण अफ्रीका, मध्य पूर्व, दक्षिणी रूस, पूर्व से चीन तक भी वितरित पाए जाते हैं। मीठे पानी की झीलों, जलाशयों, तालाबों इत्यादि के समीप यह छोटे – छोटे झुंण्डों में साल भर देखे जा सकते हैं परन्तु प्रजनन काल में (उत्तरी भारत में अप्रैल से अगस्त माह) बड़े झुण्ड (लगभग 100 सदस्य) बना लेते हैं। प्रमुख रूप से माँसाहारी ये पक्षी जलीय कीट, घोंघे, जलीय पौधे, बीज आदि खाते हैं। यह एक काले – सफेद रंग का पक्षी होता है, जिसके पंख धब्बेदार, चोंच काली तथा पैर गहरे लाल होते हैं। नरों का सिर काले धब्बे लिए हुए सफेद होता है, पंख ऊपर की ओर चमकदार तथा नीचे की तरफ काले होते हैं। पूँछ हल्की सलेटी – भूरी तथा शरीर सफेद होता है। मादा का शरीर, नीचे की गर्दन सफेद तथा सलेटी – भूरे धब्बे लिए हुए होती है, जबकि ऊपर के पंख भूरे होते हैं। नर शिशुओं के सिर के ऊपर एक भूरे रंग की कलगी तथा गर्दन पर एक काली लकीर होती है।

एसोशिसिएट प्रोफेसर (अवकाश प्राप्त)

प्राणी विज्ञान विभाग,
डी.बी.एस. (पीजी) कालेज,
देहरादून – 248001,
उत्तराखण्ड

दून घाटी की सुसवा नदी में काले पंखों वाली 'भारतीय स्टिल्ट' का झुंण्ड जो श्शरद ऋतु में स्थानीय भ्रमण करते हैं

विज्ञान परिचर्चा हेतु पहल के समाचार

विज्ञान परिचर्चा का विमोचन

यू–कास्ट द्वारा 'विकास के लिये विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी' थीम पर आधारित तीन दिवसीय राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस के प्रथम दिन दिनांक 10 नवम्बर 2010 को उद्घाटन के अवसर पर मुख्यमंत्री डा0 रमेश पोखरियाल निःशंक द्वारा पीपुल्स एसोसियेशन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) यूकास्ट तथा इस्वा के प्रयास से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका – 'विज्ञान परिचर्चा' का लोकार्पण किया गया। छात्रों, शिक्षकों, शोधार्थियों तथा आमजन में वैज्ञानिक सोच के विकास तथा विज्ञान के संवेदीकरण एवं लोकप्रियकरण के उद्देश्य से प्रकाशित विज्ञान परिचर्चा का यह प्रवेशांक था। इस अवसर पर डा0 राजेन्द्र डोभाल निदेषक यूकास्ट, डा० वी. के. अरोड़ा पूर्व निदेषक वाडिया इंस्टीटयू ऑफ हिमालयन जियोलौजी, मुख्य वन संरक्षक श्री जयराज, पद्मभूषण श्री चण्डी प्रसाद भट्ट, पद्मश्री डा0 अनिल जोषी, गढ़वाल विष्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो ए.एन. पुरोहित, कुमांऊ विष्वविद्यालय के कुलपति डा बी पी एस अरोड़ा, पन्तनगर विष्वविद्यालय के कुलपति डा0 बी.एस. बिष्ट, डा0 डी.एस. भाकुनी, प्रौ0 वी.पी. डिमरी व डा0 वी. के. गैरोला संयुक्त विज्ञान परिचर्चा की प्रबन्ध सम्पादक श्रीमती कमला पन्त व प्रधान सम्पादक डा मुकुन्द नीलकंठ जोषी सहित कई वरिष्ठ वैज्ञानिक, षोधछात्र व विज्ञान के षिक्षक व विद्यार्थी उपस्थित थे। डा0 डोभाल ने कहा कि यूकास्ट की ओर से जन–जन तक विज्ञान पहुँचाने और इसे लोकप्रिय बनाने की कोषिष की जा रही है। विज्ञान परिचर्चा इसी कोशिश का एक आयाम है।

भूमि संसाधनों के सरंक्षण को जुटे बाल वैज्ञानिक

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार द्वारा 10 से 17 वर्ष तक के बच्चों में वैज्ञानिक सोच एवं शोधवृत्ति जागृत करने के उद्देष्य से देष की सबसे बड़ी वैज्ञानिक गतिविधि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस प्रतिवर्ष एनसीएसटीसी नेटवर्क द्वारा नेटवर्क की सदस्य संस्थाओं के सहयोग से आयोजित की जाती है। उत्तराखण्ड में इस गतिविधि के आयोजन का दायित्व पीपुल्स एसोसियेषन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) पंजीकृत कार्यालय मानस मन्दिर कैण्ट रोड पिथौरागढ़ तथा प्रधान कार्यालय मृत्युंजय धाम, 18, शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून को सौंपा गया है। पहल के तत्वावधान में इस वर्ष का राज्य स्तरीय आयोजन राजकीय बालिका इण्टर कालेज कोटद्वार जनपद पौड़ी में दिनांक 26 व 27 नवम्बर 2010 को भव्य समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ।

समारोह का उद्घाटन डा0 राजेन्द्र डोभाल, निदेषक यूकॉस्ट द्वारा किया गया तथा अध्यक्षता प्रो0 आर0सी0 पाण्डेय द्वारा की गई। विषिष्ट अतिथि डा0 डी0के0 पाण्डेय वरिष्ठ वैज्ञानिक भारत सरकार तथा जी0के0 शर्मा अध्यक्ष राज्य अकादमिक समिति थे। कार्यक्रम की आख्या प्रस्तुत करते हुये राज्य समन्वयक डा0 अषोक कुमार पन्त ने बताया कि इस वर्ष राज्य के 95 में से 92 विकास खण्डों में विकास खण्ड स्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस का आयोजन हुआ जिनमें 1721 परियोजनायें प्रस्तुत की गई। कुल 1590 विद्यालयों द्वारा प्रतिभाग किया गया, 8411 बच्चों में से 4101 बालिकायें व 4310 बालक थे। 1166 मार्गदर्षक षिक्षकों, 130 मूल्यांकनकर्ताओं सहित अकादमिक समिति के समन्वयकों, पर्यवेक्षकों, ब्लॉक समन्वयकों तथा जिला

समन्वयकों के स्वैच्छिक प्रयासों से इस गतिविधि को ब्लॉक स्तर से विद्यालय स्तर पर ले जाने के प्रयास किये गये। कई विद्यालयों ने विद्यालय स्तर पर भी इस गतिविधि को कराने के प्रयास किये जिनमें रक्षा अनुसंधान विद्यालय रायपुर का नाम उल्लेखनीय है। इस विद्यालय द्वारा विद्यालय स्तर पर कुल 38 परियोजनायें तैयार कराई गई थी जिनमें से ब्लाक स्तर के लिये 4 परियोजनायें चयनित हुई। इनमें से जिला स्तर के लिये 3 व राज्य स्तर के लिये दो परियोजनायें चयनित की गई थीं। इन परियोजनाओं की मौलिकता व गुणवत्ता इसी से सिद्ध होती है कि दोनों परियोजनाओं का चयन राष्ट्रीय स्तर के लिये हुआ है। इस गतिविधि को इतना व्यापक स्वरूप देने का श्रेय विद्यालय की षिक्षिका श्रीमती अंजनी राजदान को जाता है।

13 जनपदों से चयनित कुल 142 परियोजनायें राज्य स्तर पर प्रस्तुत की गई थी जिनमें से 16 परियोजनायें राष्ट्रीय स्तर के लिये चयनित की गई। चयनित बच्चों में उत्तरकाषी के जी0आइ0सी0 बड़ेथी से श्रीमती पूनम बछेर के मार्गदर्षन में कुमारी नीता व जी0आइ0सी0 गंगोरी से रचना असवाल, नैनीताल जनपद के जी0आइ0सी0 प्यूड़ा से अमित, बागेष्वर के विवेकानन्द विद्या मन्दिर गरुड़ से पंकज पाण्डेय, चमोली के जी0आइ0सी0 गोपेष्वर से मनीषा जोषी, देहरादून रक्षा अनुसांधन विद्यालय से विदिषा रावत व सरिता पाण्डेय, टिहरी के जी0आई0सी धारकोट से शालिनी रावत, पिथौरागढ़, के रा0उ0मा0वि0 चमाली से दीपक सावंत, रा0इ0का0 पिथौरागढ़ से निषान्त खर्कवाल, विवेकान्द इण्टर कालेज से पीयूष नयाल, चम्पावत के पुल हिडोला से मनीष पन्त, पौड़ी गढ़वाल के एस0वी0एम0सी0 जानकीनगर कोटद्वार से आकाष रावत, रुद्रप्रयाग के जी0आइ0सी0 फाटा से उमेष सिंह तथा ऊधम सिंह नगर के उद्य राय हिन्दू इण्टर कालेज काषीपुर से सार्थक सक्सेना राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिभाग हेतु चयनित हुये।

ज्ञातव्य है कि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस का मुख्य विषय थाः भूमि संसाधन – सम्पन्नता के लिये उपयोग करें, भविष्य के लिये बचायें। इसके 6 उपविषयों यथा – अपनी भूमि को जानो, भूमि के कार्य, भूमि के गुण, भूमि पर मानव हस्तक्षेप, भूमि संसाधनों का दीर्घकालिक उपयोग तथा भूमि प्रयोग हेतु सामुदायिक ज्ञान पर देष के सभी बाल वैज्ञानिकों द्वारा परियोजनायें तैयार कर भूमि संसाधनों को समझने और उनके संरक्षण हेतु उपाय सुझाने, जागरुकता लाने और पहल करने की मुहिम चलाई गयी।

राज्यस्तर पर चयनित उत्तराखण्ड के 16 बाल वैज्ञानिकों व 6 मार्ग दर्षक षिक्षकों की टीम द्वारा राज्य समन्वयक संस्था पहल की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त के नेतृत्व में 27 से 31 दिसम्बर 2010 तक वेल्स यूनिवर्सिटी चेन्नई में आयोजित राष्ट्रीय स्तर के आयोजन में प्रतिभाग किया गया।

इनके अतिरिक्त दो सर्वश्रेष्ठ परियोजनाओं के बाल वैज्ञानिकों की टीम में से एक–एक बाल वैज्ञानिक द्वारा आर0एम0 यूनिवर्सिटी चेन्नई में दिनांक 03 जनवरी 07 जनवरी 2011 तक आयोजित भारतीय विज्ञान कांग्रेस में प्रतिभाग गया। देहरादून से रक्षा अनुंसधान विद्यालय के निखिल शर्मा अपने जिला समन्वयक श्री निर्मल रावत के साथ तथा पिथौरागढ़ के विवेकानन्द विद्या मन्दिर के धीरज कुमार ने अपने मार्गदर्षक षिक्षक सुनील उप्रेती के साथ इस वर्ष के भारतीय विज्ञान कांग्रेस में देष के ख्यातिलब्ध वैज्ञानिकों के साथ प्रतिभाग करने का सुअवसर प्राप्त किया।

भारत ही नहीं विदेषों में भी राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस को इतनी लोकप्रियता हासिल हुई है कि अब 9 सार्क देषों के बाल वैज्ञानिक भी इस गतिविधि में प्रतिभाग करते हैं। निःसन्देह राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस विज्ञान के लोकव्यापीकरण व विज्ञान संचार के लिये अत्यधिक उपयोगी गतिविधि सिद्ध हुई है। इसी कारण उत्तराखण्ड राज्य के मुख्यमंत्री डा0 रमेष पोखरियाल 'निषंक' द्वारा इसे अपने वैज्ञानिक कार्यक्रमों में शामिल कर लिया गया है और विद्यालयी षिक्षा के अन्तर्गत आयोजित अन्य वैज्ञानिक गतिविधियों के साथ इस गतिविधि में चयनित 3 सीनियर व 3 जूनियर सर्वश्रेष्ठ बाल वैज्ञानिकों को 28 फरवरी 2011 को विज्ञान दिवस के दिन राज्य स्तर पर सम्मानित किया जायेगा।

९८वीं राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस में उत्तराखण्ड के षिक्षकों व बच्चों का प्रतिभाग

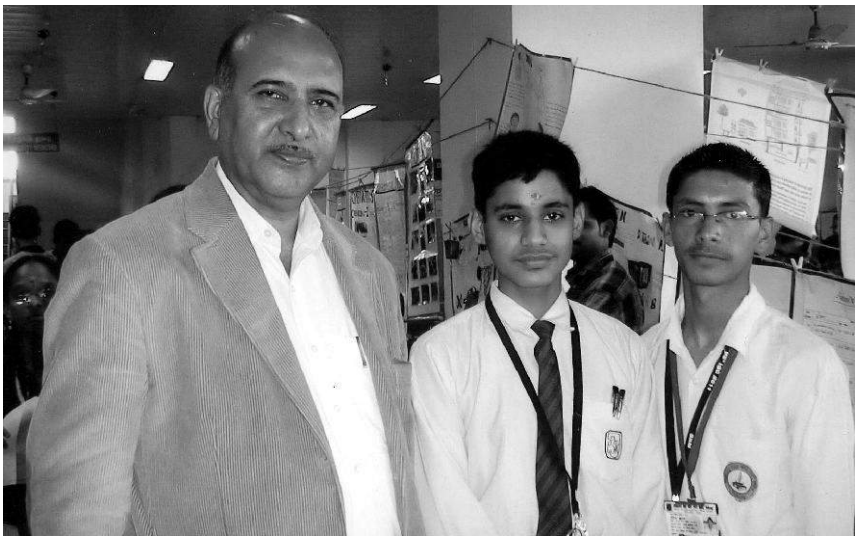

आज का युग विज्ञान के चमत्कारों का युग है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान ने क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। इस युग में विज्ञान की उन्नति ने सम्पूर्ण संसार को विस्मित कर दिया है। विज्ञान की उन्नति को सत्यापित करने हेतु 98वीं राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस एक उदाहरण है। जो कि 3 जनवरी से 7 जनवरी 2011 तक एस0आर0एम0 विष्वविद्यालय चेन्नई में सम्पन्न हुई। इस समारोह में मुख्य अतिथि प्रधानमंत्री भारत सरकार डा0 मनमोहन सिंह सहित मानव संसाधन मंत्री भारत सरकार श्री कपिल सिब्बल, जहाज रानी मंत्री श्री एस0के0वासन, राज्यमंत्री मानव संसाधन सुश्री पुरेन्देष्वरी, मुख्यमंत्री तमिलनाडु राज्य श्री करुणानिधि, उपमुख्यमंत्री श्री एम0के0स्टेलेन सहित 6 नोबेल पुरुस्कार प्राप्त वैज्ञानिकों ने समारोह की गरीमा बढाई। राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस के संयोजक डा० डी० के० पाण्डे ने बताया कि यह पहली बार है कि भारत सहित बारह देषों के लगभग 5 हजार वैज्ञानिक, 6 नोबेल पुरुस्कार विजेता वैज्ञानिक व भारत के सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेषों से लगभग 100 बाल वैज्ञानिक इस समारोह में प्रतिभाग कर रहे है। भारतीयों के लिये यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि विष्व में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हमारा तीसरा स्थान है। हमारे देष में 162 विष्वविद्यालयों से लगभाग 4000 डॉक्ट्रेट के उपाधि धारक प्राप्त करते है। देष में लगभग 40 वैज्ञानिक शोध संस्थान है। मिसाइल प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हमारा स्थान विष्व में पांचवा है। विशिष्ट अतिथि श्री कपिल सिब्बल ने कहा कि हमारे देष में 140 शोध प्रति 10 लाख व्यक्तियों की तुलना में होते है। जोकि विष्व के विकसित देषों के मानकों के अनुसार काफी कम है। श्री आई0सी0जेम्स डिपार्टमेन्ट ऑफ इंडस्ट्रीयल पालिसी स्टेटस्, भारत सरकार ने कहा कि अमरीकी विष्वविद्यालय प्रतिवर्ष 4 हजार पेटेन्ट करवाते है। जबकि भारत में यह आंकड़ा 100 को भी पार नही कर पाता। हम विकसित देषों के समकक्ष तभी आ सकते है जब हम छात्र–छात्राओं में बचपन से ही वैज्ञानिक अभिरुचि पैदा करें। इसी सन्दर्भ में भारतीय विज्ञान कांग्रेस में 100 सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस से चयनित बाल वैज्ञानिकों को अपने–अपने शोध पत्रों, कार्ययोजनाओं व परियोजनाओं को प्रदर्षित करने व नोबेल पुरुस्कार प्राप्त वैज्ञानिकों व देष विदेष से आये अन्य वैज्ञानिकों से वार्तालाप व अनुभव बांटने का सुअवसर प्रदान किया गया है। उत्तराखण्ड से नलिन शर्मा रक्षा अनुसांधन विद्यालय, रायपुर, देहरादून, धीरेष कुमार राजकीय इंटर कालेज पिथौरागढ़ सहित निर्मल रावत जिला समन्वयक राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस देहरादून व श्री सुनील उप्रेती को प्रतिभाग करने का सुअवसर प्रदान किया गया। निदेषक आई आर डी ई, डा0 वी0 के0 सारस्वत, निदेषक, डी.आर.डी.ओ, डा0 पी0 एल0 गौतम, चैयरमैन, आर.आर.आई, डा0 बी0 प्रसाद राव, आई.एम.डी., बी.एच.ई.एल ने कार्यक्रम को सहयोग प्रदान किया।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की गतिविधि को उत्तराखण्ड राज्य में माननीय मुख्यमंत्री डा० रमेश पोखरियाल नि:शंक द्वारा अपने कार्यक्रमों की प्राथमिकता में शामिल कर लिया गया है। रा०बा०बि०का० के प्रथम तीन सीनियर प्रथम तीन जूनियर बाल वैज्ञानिकों को २८ फरवरी २०११ को विज्ञान दिवस के अवसर पर देहरादून में सम्मानित किया जायेगा।

रसायन विज्ञान में नोबेल पुरुस्कार प्राप्त डा0 रामाकृष्णन वेंकटरमन, ने समारोह में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की प्रदर्षनी का उदघाटन करते हुये कहा कि जल एवं पर्यावरण विषय विज्ञान के विष्वास की चाबी के समान है। आप में ही लगनषील बाल वैज्ञानिक कल हमारी तरह ही विष्व मानचित्र में अपना नाम रोषन करेगें। उन्होंने बाल वैज्ञानिकों द्वारा प्रदर्षित कार्य योजनाओं को खूब सराहा। डा0 मार्टिन चैफे, डा0 अदायोनाथन, डा0 थॉमस व डा0 अमर्त्य सेन सभी नोबेल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिकों ने अपने–अपने अनुभवों से बाल वैज्ञानिकों को लाभान्वित किया। उन्होंने कहा कि इस आयोजन का मुख्य उद्देष्य भारतीय विष्वविद्यालयों का योग्य एवं सर्वश्रेष्ठ विज्ञान षिक्षा की ओर ध्यान आकर्षित करना है। एस0आर0एम0 विष्वविद्यालय की प्रोफेसर टी0मैथिली के अनुसार चेन्नई तथा कांचीपुरम के प्रतिष्ठित विद्यालयों के लगभग 5 हजार छात्र–छात्राओं ने इस

प्रदर्षनी में प्रदर्षित बाल वैज्ञानिकों के कार्यों एवं परियोजनाओं को समझा व जाना। इजराइल की नोबेल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक डा0 अदायोनाथन ने बाल वैज्ञानिकों को बताया कि जब मैं छात्रा थी तब मुझे अपनी प्रयोगषाला में एक पैप्टाईड बॉण्ड बनाने में दो दिन का वक्त लगता था। लेकिन हमारे शरीर में उपस्थित राइबोजोम एक सेकेण्ड में 15 पैप्टाईड बॉण्ड बनाते है। यह कैसे सम्भव हो पाता है इसी जिज्ञासा ने मुझे आज नोबेल पुरस्कार दिलवाया है। इस समारोह में एन0सी0ई0आर0टी0 के 25 छात्र–छात्राओं ने अपने–अपने मॉडल भी प्रदर्षित किये। समारोह में मुख्य अतिथि के रुप में बोलते हुये प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिंह ने कहा कि सन् 2012–13 का वर्ष सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एस0 चन्द्रषेखर का जन्मषताब्दी वर्ष है जोकि सम्पूर्ण भारतवर्ष में विज्ञान वर्ष के रुप में मनाया जायेगा। यह आयोजन हम सभी के लिये एक अविस्मरणीय आयोजन है। इस समारोह में जो ज्ञान व जानकारियाँ हमारे छात्रों ने प्राप्त की वह अपने–अपने विद्यालय जाकर विद्यार्थियों में बाटेंगें और निष्चित तौर पर आने वाले समय में इन्हीं में से कोई रमन और रामानुजन जैसे वैज्ञानिक पैदा होगें।

भौतिकी के गुर समझाए

नेषनल साइंस फॉर सेंटर म्यूजियम के पूर्व अध्यक्ष डा. समर बागची ने स्कूली बच्चों को भौतिकी समझने के सरल गुर बताए। यूकॉस्ट, कुमाऊं विष्वविद्यालय व पहल संस्था के निमंत्रण पर उत्तराखण्ड आए प्रख्यात भौतिकविद् ने सरल तरीके से 10 से 14 दिसंबर तक न्यूटन, आरकिमिडीज, बरानौली, मैगनेटिक थ्योरी आदि सिद्धांतों को व्यवहार के माध्यम से समझाया। बागची ने कहा, सापेक्षता का सिद्धांत विज्ञान के क्षेत्र में बड़ी घटना है। मंगलवार को जसवंत मॉडर्न स्कूल में संपन्न भौतिकी कार्यषाला का शुभारंभ यूकॉस्ट के निदेषक डॉ. राजेन्द्र डोभाल ने किया। इसमें छह विकास खंडों व स्थानीय विद्यालयों से 60 विज्ञान षिक्षकों तथा 700 विद्यार्थियों ने प्रतिभाग किया। इस मौके पर डा. डीपी उनियाल डा. सरिता खंडका आदि मौजूद थे।

प्रयोगों से भौतिक विज्ञान को बनाया रोचक

उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए रोचक ढंग से विज्ञान को छात्रों तक पहुंचाने के लिए प्रयासरत है। इसी क्रम में दून व नैनीताल जनपद के विभिन्न स्कूलों में 'लेसन बेस्ट फिजिक्स एक्सीपेरिमेंट' कार्यषाला का आयोजन किया गया।

यूकॉस्ट की ओर से 10 से 14 दिसम्बर, 2010 तक विभिन्न जनपदों तथा विद्यालयों में पाठ आधारित भौतिकी प्रयोगों 'लेसन बेस्ड फिजिक्स एक्सीपेरिमेंट' विषय पर कार्यषालाओं की श्रृंखला आयोजित की गई। इसमें यूकॉस्ट द्वारा बच्चों और षिक्षकों को घरों और कार्यालयों में यू ही फेंक दी जाने वाली छोटी–छोटी फालतू चीजों से भौतिक विज्ञान के कठिन से कठिन सिद्धांतों जैस कि न्यूटन के सिद्धांत, आर्कमिडीज सिद्धांत, बरनौली थियोरम, मैगनेटिक थ्योरी आदि सिद्धांतों को समझाने की प्रक्रिया के प्रयोग करके विज्ञान को रोचक और सरल तरीके से पढ़ने और समझने के तरीके बताए गए। ये प्रयोग इतने सरल और रुचिकर हैं कि भौतिक के सिद्धांत अनायास ही स्पष्ट और ग्राहय हो रहे हैं। यू–कॉस्ट के निदेषक डॉ. राजेंद्र डोभाल ने बताया कि नैनीताल में कुमांऊ विष्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. गिरिजा पांडे द्वारा और देहरादून में पीपुल्स एसोसिएषन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) द्वारा किया जा रहा है। पूर्व अध्यक्ष एनसीएसएम तथा एनसीएसटीसी नेटवर्क डॉ. समर कुमार बागची, तथा साइंस कम्यूनिकेषन फोरम कलकत्ता के उपाध्यक्ष प्रो. बीएन दास ने षिक्षकों और छात्रों को रोचक से ढंग से भौतिक विज्ञान के पठन–पाठन की जानकारी दी। कार्यषाला में राजीव गांधी नवोदय विद्यालय, राइका नालापानी, राबाइका राजपुर रोड, राबाइका लक्खीबाग तथा सभी छह विकासखंडों, ने भाग लिया। जसवन्त माडर्न स्कूल देहरादून में आयोजित कार्यक्रम में देहरादून जनपद के सभी विकासखंडो से 60 शिक्षकों तथा 700 बच्चों ने प्रतिभाग किया। कार्यषाला में यूकॉस्ट के डॉ. डी पी उनियाल, डॉ सरिता खंडका एवं पहल की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त आदि उपस्थित थे।

विज्ञान के नये आयाम
रोजगार के नये अवसर

पिछले अंक में हमने ' विज्ञान के नए आयाम ' लेख के अंतर्गत विज्ञान सम्बन्धित कुछ रोज़गारपरक विषयों की चर्चा की थी। उसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए इस अंक में भी विज्ञान विषयों से सम्बन्धित कुछ रोज़गारपरक पाठ्यक्रम प्रस्तुत किए जा रहे हैं। विज्ञान विषयों के अतिरिक्त कला वर्ग के छात्र - छात्राओं के समक्ष भी कई विकल्प मौजूद हैं, जैसे कि फुटवियर डिज़ाइन, टेलीकम्यूनिकेशन आदि । आइए, इन सभी पर विस्तारपूर्वक चर्चा करते हैं -

दीपाली राणा

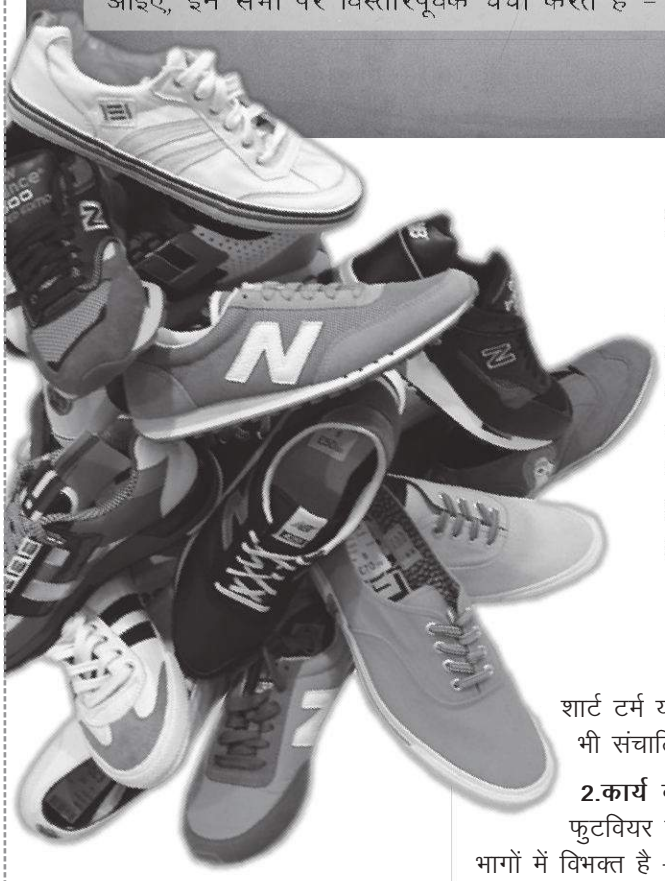

फुटवियर ड़िज़ाइन

भारत विश्व के प्रमुख फुटवियर निर्माता देशों में से एक है। आधुनिकता के इस युग में जैसे-जैसे पोशाकों में वैरायटी और डिज़ाइन आएँ हैं, उसी प्रकार फुटवियर डिज़ाइनों में भी इसी प्रकार का विस्तार देखने को मिला है। इसी कारण फुटवियर डिजाइनिंग एक बेहतर करियर विकल्प के रुप में उभर रहा है। यह क्षेत्र बहुत ही सुव्यवस्थित है तथा इसमें अवसरों में निरंतर वृद्धि हुई है ।

1. कोर्स एवम् योग्यता – इस क्षेत्र में करियर बनाने के इच्छुक छात्र–छात्रओं को जरूरी है कि वे 12वीं, किसी भी संकाय में उत्तीर्ण हों। इसी क्षेत्र से संबंधित पोस्ट ग्रेजुएशन कोर्स में प्रवेश पाने वाले अभ्यर्थी के पास डिग्री होना ज़रूरी है। 10वीं पास छात्रों के लिए कुछ शार्ट टर्म या सर्टिफिकेट कोर्स भी संचालित किए जाते हैं ।

2.कार्य का स्वरूप –

फुटवियर इंडस्ट्री मुख्यतः तीन भागों में विभक्त है – फुटवियर डिजाइनिंग, फुटवियर मैन्यूफैक्चरिंग एवम् मार्केटिंग। डिज़ाइनिंग तथा मैन्यूफैक्चरिंग में रचनात्मकता अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्तमान ट्रेंड को ध्यान में रखते हुए, पुरूषों, महिलाओं तथा बच्चों की रूचियों एवम् आवश्यक्ताओं के अनुरूप डिजाइनिंग की जाती है।

3. रोज़गार – तमाम छोटी – बड़ी कंपनियों में रोज़गार के अवसर मौजूद हैं। इस क्षेत्र में बडे ब्रांड्स के आ जाने से भी यह क्षेत्र लोकप्रिय हुआ है । इस क्षेत्र में अपना व्यवसाय भी शुरु किया जा सकता है बशर्ते आप किसी कंपनी के साथ काम करके अनुभव प्राप्त कर लें ।

4. प्रमुख संस्थान

1. सेंट्रल फुटवियर ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट, आगरा ।
2. फुटवियर डिजाइन एंड डेवलपमेंट, नोएडा ।
3. सेंट्रल फुटवियर ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट, चेन्नई; वेबसाइट–www.cftichennai.com

टेलीकम्यूनिकेशन

भारत तेज़ी से तरक्की कर रहा टेलीकाम मार्केट है । यहाँपर हर माह लगभग ६० लाख नए कनेक्शन बढ़ जाते हैं । आँकड़ों के अनुसार, सन् २००१ से २००६ के बीच वायरलेस उपभोकताओं की संख्या में ७५% की वृद्धि देखी गई। भारत में तेज़ी से तरक्की कर रहे सूचना प्रौद्योगिकी, बीपीओ तथा पर्यटन क्षेत्रों का पूरा दारोमदार टेलीकम्यूनिकेशन पर ही है। छोटी बड़ी सभी कंपनियों को बेहतर संचार माध्यमों की आवश्यकता पड़ती है। इस क्षेत्र में रोज़गार की अपार संभावनाएँ है। भारत सरकार इस क्षेत्र में नवीनतम तकनीकों को विकसित करने के लिए लगातार निवेश कर रही है। इस क्षेत्र में, आने वाले दिनों में, आपरेटर स्तरीय कर्मचारियों, तकनीकी विशेषज्ञों तथा मार्केटिंग प्रोफेशनल्स की डिमांड बढ़ती ही जाएँगी ।

1. रोज़गार

बीएसएनएल, एमटीएनएल जैसी सरकारी कंपनियों तथा रिलायंस, टाटा इंडीकाम, एयरटेल, वोडाफोन, आइडिया जैसी निजी कंपनियों में रोज़गार की अच्छी संभावनाएँ हैं । आने वाले दिनों में टेलीकाम इंडस्ट्री में नेटवर्क इंजीनियर्स, नेटवर्क प्लानर्स, मार्केटिंग विशेषज्ञ, उपभोक्ता केयर संबंधी मैनेजर्स तथा एएए (ऑथोराइजेशन, ऑथेन्टिकेशन एवं ऑडिट एक्सपर्ट) की माँग बढ़ेगी। टेलीकम्यूनिकेशन उद्योग को तीन विभागों में विभाजित किया जा सकता है । इन्ही में से किसी एक विभाग को करियर विकल्प के रूप में चयनित किया जा सकता है –

(क) प्रबंधन – इस विभाग में कार्य करने वाले विशेषज्ञ मानव संसाधनों का प्रबंधन, वित्तीय योजनाएँ तथा मार्केटिंग का कार्य देखते हैं। रिटेल एवं बैंकिंग जैसे क्षेत्रों में भी लगातार माँग बढ़ती जा रही है। मैनेजमेंट विशेषज्ञों को 4 लाख से लेकर 8 लाख रूपये तक का विशेष पैकेज मिल सकता है ।

(ख) सॉटवेयर – मोबाइल फोन जैसी आधुनिकतम सुविधाओं वाले संचार माध्यमों तथा गूगल टॉक, जैक्सटर जैसी नवीनतम इंटरनेट टेलीफोनी की वजह से नए – नए साटवेयर एपलीकेशन बनाने की आवश्यकता पड़ती है । इसके अलावा नेटवर्क सुरक्षा तथा डाटा कम्यूनिकेशन एनॉलिसिस का भी कार्य प्रमुख हैं ।

(ग) उपभोक्ता सेवा – इस विभाग में टेलीफोन आपरेटर, बिल एवम् एकाउंट कलेक्टर्स तथा उपभोक्ता सेवाओं संबंधी प्रतिनिधियों की जरुरत पड़ती है । इनका मुख्य कार्य उपभोक्ताओं से संपर्क करना होता है । कस्टमर केयर सेंवाएँ इसी विभाग में आती हैं ।

2. कोर्स एवम् योग्यता

प्रबंधन क्षेत्र में प्रबंधक के तौर पर कार्य करने के लिए टेलीकाम मैनेजमेंट / एचआर मैनेजमेंट में एमबीए डिग्री, इकोनॉमिक्स में एमए अथवा फाइनैंस बैकग्राउंड के साथ – साथ अनुभव जरुरी है। सॉटवेयर विशेषज्ञ के लिए इलेक्ट्रॉनिक तथा इलेक्ट्रीकल / सॉटवेयर में बीटेक अथवा टेलीकॉम इंजीनियरिंग स्नातक की ज़रुरत होती है । कस्टमर केयर सेवाओं के लिए आवश्यकतानुसार कमप्यूटर की जानकारी के साथ – साथ किसी भी संकाय में स्नातक की आवश्यकता होती है ।

3. संस्थान

टेलीकम्यूनिकेशन में इंजीनियरिंग के लिए बेहतर इंस्टीट्यूट :

1. भारतीय स्कूल ऑफ टेलीकम्यूनिकेशन टेक्नोलॉजी एण्ड मैनेजमेंट, आईआईटी, नई दिल्ली ।
2. कोचीन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, कोचीन ।
3. बिड़ला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइंस, पिलानी ।
4. डिपार्टमेंट ऑफ इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड इलेक्ट्रीकल कम्यूनिकेशन, आईआईटी, खडगपुर ।
5. डा. बाबा साहेब अंबेडकर टेक्नोलॉजिकल युनिवर्सिटी, लोनेरे, महाराष्ट्र ।

लीकम्यूनिकेशन में मैनेजमेंट की डिग्री प्रदान करने वाले इंस्टीट्यूट :

1. सिमबायोसिस इंस्टीट्यूट ऑफ टेलीकॉम मैनेजमेंट, पुणे ।
2. इंडियन सेंटर फॉर टेलीकॉम मैनेजमेंट (आईसीटीएम), पुणे ।
3. एजीस स्कूल ऑफ टेलीकम्यूनिकेशन मैनेजमेंट, नवी मुंबई ।
4. एमेटी इंस्टीट्यूट ऑफ टेलीकॉम टेक्नोलॉजी एण्ड मैनेजमेंट, नोएडा।

पशु चिकित्सा विज्ञान

पशुचिकित्सक या पशुचिकित्सा सर्जन पशुओं के लिए फिजिशियन और पशुचिकित्सा औषधि का प्रैक्टिशनर होता है। पशुचिकित्सा शिक्षा से तात्पर्य पशु चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन तथा व्यावसायिक प्रैक्टिस में इसका अनुप्रयोग है।

पशुचिकित्सा शिक्षा का उद्देश्य

पशुचिकित्सा शिक्षा का उद्देश्य है ऐसे पशु चिकित्सक देना जो पशुओं को कष्टों तथा बीमारी से मुक्त रखकर मनुष्यों तथा पशुओं के संबंध (निकटता) सुधारने में अपने कौशल का उपयोग करने में सक्षम हों। वह व्यक्ति जो पालतू पशुओं जैसे कुत्ते, बिल्ली, पक्षियों आदि के स्वास्थ्य का ध्यान रखता है ।

किसी पशुचिकित्सक की भूमिका न केवल पशुओं में रोगों की रोकथाम करने की बल्कि रोगों को पशुओं से मनुष्यों में तथा मनुष्यों से पशुओं में फैलने से रोकने की भी होती है। पशुचिकित्सक निम्नलिखित उपायों द्वारा पर्यावरणीय स्वास्थ्य विज्ञान में भी सहायता करता है।

1. उपयुक्त एवं संतुलित आहार का परामर्श देकर पशुधन (मिथेन का सबसे बड़ा दूसरा स्रोत) से मिथेन उत्सर्जन घटा कर।

2. पाचन क्रिया सुधारने में सहायता करके और खनिज/कार्बनिक पदार्थ उत्सर्जन घटा कर।

3. बायोगैस, फार्मयार्ड खाद के उपयोग तथा चारागाह में रोटेशनल ग्रेजिंग का समर्थन करके, जो पर्यावरण को हरा–भरा तथा साफ रखने में सहायता करते हैं।

संक्षेप में पशुचिकित्सक जो भी करते हैं उसका प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप में मानव स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

पात्रता : बीवीएससी एवं एएच (पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन में स्नातक) पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के लिए न्यूनतम अपेक्षित योग्यता भौतिकी, रसायन विज्ञान एवं जीव विज्ञान (पीसीबी) के साथ 10़2 उत्तीर्णता है। अंकों तथा आयु के मानादण्ड राज्य एवं विश्वविद्यालयों के अनुसार अलग–अलग हैं। इस पांच वर्षीय बीवीएससी एवं एएच पाठ्यक्रम के लिए उम्मीदवारों का चयन राज्य स्तर पर राज्य पशुचिकित्सा/कृषधि विश्वविद्यालयों द्वारा भारतीय पशुचिकित्सा परिषद की सिफारिश के अनुसार तथा राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय कृषधि अनुसांान परिषद (आईसीएआर) द्वारा ली जाने वाली प्रवेश–परीक्षा के आधार पर किया जाता है।

पशुचिकित्सा विज्ञान में कॅरिअर के अवसर

अध्यापन में करिअर बनाने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति को स्नातकोत्तर (एमवीएससी) पाठ्यक्रम करना होगा, जो कि सहायक प्रोफेसर के पद के लिए, न्यूनतम योग्यता है। एमवीएससी करने के लिए, बीवीएससी तथा एएच स्नातकों के लिए एक राज्य स्तर की तथा एक राष्ट्र स्तर की परीक्षा होती है। पशुचिकित्सा कॉलेजों के अतिरिक्त, भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली, उ.प्र. विभिन्न विषयों में मास्टर तथा पी–एच.डी कार्यक्रम चलाते हैं। राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान (एनडीआरआई) और पशु–विज्ञान कॉलेज, सीसीएसएचएयू, हिसार केवल पशु विज्ञान (प्रबंधन, पोषण, प्रजनन एवं डेयरी विज्ञान) में मास्टर तथा पी–एच.डी डिग्री प्रदान करते हैं। इनमें से कुछ कॉलेज वन्य–जीव में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम भी चलाते हैं।

विशाल पशुधन संख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पोषण, भेषज, दुग्ध/मांस प्रसंस्करण केन्द्रों, नैदानिक तथा वैक्सीन उत्पादन के क्षेत्रों में कई राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कंपनियां भी उभर कर समाने आ रही हैं। इन क्षेत्रों में तकनीकी व्यक्तियों की मांग फिर बढ़ रही है। पशु प्रेमी पशु कल्याण बोर्डों/ क्लबों, निजी एजेंसियों द्वारा चालित कई गैर–सरकारी संगठन भी पशु–सहायता के लिए आगे आ रहे हैं और वे पशुचिकित्सकों को रोज़गार पर रख रहे हैं। इसी तरह प्राणि–उद्यान, राष्ट्रीय उद्यान तथा मृग–वन इन पशुओं की देखभाल करने के लिए पशु चिकित्सकों को भर्ती कर रहे हैं। महंगे तथा विशुद्ध प्रजनित कुत्तों/बिल्लियों को पालने की बदल रही प्रवृत्ति ने इस व्यवसाय को विशेष रूप से छोटे पशु प्रैक्टिशनरों के लिए अत्यधिक अर्जक बना दिया है। बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए महानगरों में प्रति दिन कईं नए डॉग क्लीनिक, कुत्ता प्रशिक्षण केन्द्र, डॉग ब्यूटी पार्लर/सैलून खुल रहे हैं। इसके साथ–साथ पशुचिकित्सकों के लिए सेना (आरवीसी), एसएसबी, बीएसएफ, निजी फार्मों में कई और अवसर हैं और वे सेवा एमबीए (प्रबंधकीय सेवाओं) में भी जा सकते हैं। उच्च अध्ययन के लिए विदेशों में अच्छे अवसर हैं। इसके लिए मूल आवश्यकता एक अच्छे व्यावसायिक रिकॉर्ड के साथ जीआरई/टॉफेल अंकों की है। कोई भी पशुचिकित्सक अपना निजी क्लीनिक भी खोल सकता है।

पशुचिकित्सा विज्ञान (वेटेरिनरी साइंस) अध्ययन के प्रमुख संस्थान

1. पशुचिकित्सा विज्ञान कॉलेज (जीबीपीयू एटी), पंतनगर–263145।
2. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन कॉलेज, (एनडीयूएटी), नरेन्द्र नगर, कुमारगंज फैजाबाद – 224229।
3. पशुचिकित्सा विज्ञान कॉलेज (यूपीपी डीडीयूपीसीवीवीईजीएएस) मथुरा–281001, उ.प्र.।
4. एसएम, पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशु अनुसंधान कॉलेज, पालीडूंगरा, सोंख रोड, मथुरा।
5. तमिलनाडु पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय (टीएएनयूवीएएस) चैन्ने–600051, तमिलनाडु **ूएजंदनअेंएजदएदपबएपदए** फोन : 044–25551584।
6. पश्चिम बंगाल पशु एवं मात्स्यिकी विज्ञान विश्वविद्यालय (डब्ल्यूबीयूएएफएस सी) 68, केबी सरणि, कोलकाता–700037, पश्चिम बंगाल, **ूएइनेंबिपएंबएपदए** फोन : 033–25569234।
7. महाराष्ट्र पशुविज्ञान एवं मात्स्यिकी विश्वविद्यालय (एमएएफएसयू), सेमीनरी हिल्स, नागपुर–440006, महाराष्ट्र, **ूएअेंनिएपदए** फोन : 0712– 2511273।
8. उ.प्र. पंडित दीनदयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विश्वविद्यालय एवं पशु अनुसंधान संस्थान (यूपीडीडीयूवीयू एंड सीआरआई), मथुरा–281001, उत्तर प्रदेश, **ूएनचअमजनदपअएमकनएपदए** फोन : 0565–2411178।
9. श्री वेंकटेश्वर पशुचिकित्सा विश्वविद्यालय (एसवीवीयू), प्रशासनिक कार्यालय, क्षेत्रीय पुस्तकालय भवन, तिरुपति– 517502, आंध्र प्रदेश, **ूएअमजअमतेपजलजपतनचंजपएहवअएपदए** फोन : 0877–2248894।
10. कर्नाटक पशुचिकित्सा पशु एवं मात्स्यिकी विज्ञान विश्वविद्यालय (केवीएएफ एसयू), बीदर–585401, कर्नाटक, **ूएअेंनिएमकनएपदए** फोन : 08482–245241।
11. गुरु अंगद देव पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, (जीएडीवीएएसयू), लुधियाना–141004, पंजाब, **ूएहंकअेंनएपदए** फोन : 0161– 2553442, 2553443।
12. मध्य प्रदेश पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय, जबलपुर–482001, मध्य प्रदेश, फोन : 0761–2621302।
13. राजस्थान पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर–334001, राजस्थान फोन : 0151–2543429।
14. पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज, तिरुपति– 517502।
15. पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज, चित्तूर, आंध्र प्रदेश।
16. पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज, राजेन्द्र नगर, हैदराबाद–500030।
17. पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज (एएयू), खानापाड़ा, गुवाहाटी–781022।
18. बिहार पशुचिकित्सा कॉलेज (आरएयूपी) पटना–800014।
19. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन कॉलेज (आईजीकेवीवी), अंजोरा, दुर्ग–491001।
20. पशुचिकित्सा विज्ञान कॉलेज (सीसीएस एचएयू) हिसार–125004।
21. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन कॉलेज (सीएसकेएचपीकेवी), पालमपुर– 176062।
22. पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन संकाय (एसकेयूएएसटीके), श्रीनगर।
23. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन, (एसकेयूएएसटी–जे), आरएस पुरा, जम्मू।
24. रांची पशुचिकित्सा कॉलेज (बीएयू), रांची–834006।
25. पशुचिकित्सा विज्ञान कॉलेज (केवीएएफ एसयू) हेब्बल, बैंगलोर–560024।
26. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन कॉलेज, (जेएनकेवीवी) मऊ–453446।
27. पशुचिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन कॉलेज (जेएनकेवीवी), रीवा–486006।
28. बंबई पशुचिकित्सा कॉलेज (एमएएसएफ यूएल) परेल–400012, मुंबई।
29. केएनपी पशुचिकित्सा विज्ञान कॉलेज (एमएएसएफयू), शिरवाल, सतारा–412801।
30. नागपुर पशुचिकित्सा कॉलेज (एमएएस एफयू) सेमिनरी हिल्स, नागपुर–440006।

बायोमेडिकल अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग)

बायोमेडिकल अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग) वास्तव में एक ऐसा क्षेत्र है, जो विज्ञान, चिकित्सा और गणित को एकीकृत करके बायोलॉजिकल और मेडिकल समस्याओं का समाधान करता है और इस तरह यह विषय विश्व को एक रहने लायक स्थान बनाने में योगदान करता है। जीवन प्रणालियों की विविधता और जटिलताओं से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने के लिए ऐसे रचनाशील, ज्ञानवान और कल्पनाशील व्यक्तियों की आवश्यकता है जो चिकित्सकों, वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और यहां तक कि व्यापारियों की जो एक टीम के रूप में काम करें ताकि सामान्य बॉडी फंक्शन पर निगरानी रख सकें ।

अध्ययन पाठ्यक्रम

बायोमेडिकल इंजीनियर बनने के लिए अधिक परम्परागत इंजीनियरी विषयों में, जैसे इलेक्ट्रिकल, मैकेनिकल या कैमिकल इंजीनियरी में ठोस फाउंडेशन अपेक्षित है । अधिकतर स्नातक–पूर्व बायोमेडिकल इंजीनियरी पाठ्यक्रमों के लिए विद्यार्थियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे परम्परगत इंजीनियरी पाठ्यक्रमों का कोर कैरिक्यूलम (आधार भूत पाठ्यचर्चा) अपनांए। किन्तु, बायोमेडिकल इंजीनियरों से यह अपेक्षा की जाएगी कि वे अपने इंजीनियरी कौशल को

बायोलॉजिकल प्रणालियों की जटिलता के साथ एकीकृत करें ताकि चिकित्सा पद्धति में सुधार लाया जा सके। इस प्रकार बायोमेडिकल इंजीनियरों को जीव विज्ञान में अवश्य प्रशिक्षित किया जाता है ।

बायोमेडिकल इंजीनियरी में स्नातक पूर्व और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम तथा डॉक्टरेट डिग्री

बायोमेडिकल इंजीनियरी में कॉलेज पाठ्यक्रम की उत्कृष्ट तैयारी के लिए बी. टैक पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने हेतु यह अनिवार्य है कि हाई स्कूल में समन्वित पाठ्यक्रम का अध्ययन किया जाये। ऐसे अध्ययन की न्यूनतम अपेक्षा यह है कि उसमें जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान और भौतिक विज्ञान में, प्रत्येक में एक वर्ष का अध्ययन शामिल हो। हाई स्कूल स्तर के बीजगणित, ज्यामिति, अत्याधुनिक बीजगणित, ट्रिग्नोमैटरी, प्री–कैल्कुलस और विषयों के अलावा कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग से विद्यार्थियों को निश्चित रूप से उनके पाठ्यक्रम में सहायता मिलती है। बायोमेडिकल इंजीनियर विश्वभर में स्वास्थ्य देखभाल में सुधार लाने के लिए काम करते हैं, अतः अन्य भाषा की जानकारी होना उनके लिए एक बहुमूल्य कौशल सिद्ध होगा।

पाठ्यक्रम एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय में भिन्न पाया जाता है। अधिकतर पाठ्यक्रमों के लिए बायोलॉजी, फिजियोलॉजी, बायो–कैमिस्ट्री, इनआर्गेनिक और आर्गेनिक कैमिस्ट्री, सामान्य भौतिक विज्ञान, इलेक्ट्रोनिक्स, सर्किट्स एंड इंस्ट्रूमेंटेशन डिजाइन, स्टैटिक्स और डायनामिक्स, सिग्नल्स एंड सिस्टम्स, बायोमैटिरियल्स, थर्मोडायनामिक्स और ट्रांसपोर्ट फिनॉमिना तथा इंजीनियरी डिजाइन जैसे विषय होते हैं।

व्यावसायिक संभावनाएं

बायोमेडिकल इंजीनियरी के कुछ उभरते हुए क्षेत्रों में बायोमेक्स, जेनोमिक्स, माइक्रो और नैनोटैक्नोलॉजी, प्रोटेओमिक्स, सर्जरी में रोबोटिक्स, टेलीमेडिसिन और ऐसे ही अन्य क्षेत्र शामिल हैं।

भारतीय श्रम सांख्यिकी ब्यूरो के अनुसार आने वाले वर्षों में बायोमेडिकल इंजीनियरों को रोजगार एवं आय अर्जित करने के उत्कृष्ट अवसर मिलेंगे। अधिकतर बायोमेडिकल इंजीनियरों को मेडिकल उपकरण विनिर्माण और उनकी आपूर्ति में रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं। बड़े पैमाने पर रोजगार देने वाले अन्य समूहों में फार्मास्युटिकल और मेडिकल मैन्युफैक्चरिंग, वैज्ञानिक एवं अनुसंधान विकास सेवाएं और सामान्य मेडिकल तथा सर्जिकल अस्पताल शामिल हैं। बायोमेडिकल इंजीनियरों को नियोजित करने वाले संस्थानों में चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, अस्पताल,औद्योगिक प्रतिष्ठान और शिक्षण संस्थान सम्मिलित हैं। अस्पतालों और डाइग्नोस्टिक सेन्टरों या अनुसंधान केन्द्रों में काम आने वाले उपकरण बनाने वाली कम्पनियों और मैन्युफैक्चरिंग, गुणवत्ता नियंत्रण और परीक्षण तथा संस्थापना, रखरखाव या बिक्री और विपणन विभागों द्वारा बायोमेडिकल इंजीनियरों को रोजगार प्रदान किया जाता है। कुछ सरकारी एजेंसियां भी हैं, जिनमें उन्हें उत्पाद परीक्षण, सुरक्षा और उपकरणों के लिए सुरक्षा के मानदंड स्थापित करने के लिए भर्ती किया जा सकता है।

बायोमेडिकल इंजीनियर विश्वविद्यालयों, कालेजों आदि में शिक्षक बन सकते हैं। कालेज शिक्षण के लिए स्नातकोत्तर उपाधि को अधिक वरीयता दी जाती है जबकि डॉक्टरेट उपाधि से रोजगार के अधिक अवसर खुलते हैं।

विदेश में भी बायोमेडिकल इंजीनियरों की भारी मांग है। विदेशों के अस्पतालों में ऐसे क्लिनिकल इंजीनियरों की सर्वाधिक मांग की जाती है जो इंस्ट्रूमेंटेशन के डाटा बेस की देखभाल एवं निगरानी करते हैं और चिकित्सकों तथा अस्पतालों की विशेष जरूरतों के अनुकूल उपकरण प्रदान करने के लिए चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करते हैं। हार्डवेयर तथा सॉटवेयर कम्प्यूटर अनुकूलन विकसित करने वाले पुनर्वास इंजीनियर ऐसे रोगियों की सहायता के लिए संज्ञानात्मक उपकरण प्रदान करते हैं जो स्मृति बाधित हों। आर्थोपीडिक इंजीनियरों के लिए भी सुनहरे अवसर उपलब्ध हैं, जो प्रोस्थेटिक्स, कृत्रिम अंगों, हिप्स और अन्य अंगों का विकास करके रोगियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करते हैं।

बायोमेडिकल इंजीनियरी में पाठ्यक्रम संचालित करने वाले संस्थान

1. अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली।
2. बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय प्रौद्योगिकी संस्थान, वाराणसी।
3. डॉ.बी आर आम्बेडकर सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च, नई दिल्ली।
4. राजकीय महाविद्यालय, होशियारपुर, पंजाब।
5. पीडी मेमोरियल कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, बहादुरगढ़, हरियाणा।
6. जादवपुर विश्वविद्यालय, कोलकाता, पश्चिम बंगाल।
7. द्वारकादास जे. संघवी कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, मुम्बई।
8. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुम्बई।
9. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर।
10. अन्ना यूनिवर्सिटी, चेन्नई, तमिलनाडु।
11. अविनाशलिंगम यूनिवर्सिटी फॉर वूमैन फैकल्टी ऑफ इंजीनियरिंग, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।
12. उस्मानिया यूनिवर्सिटी बायोमेडिकल इंस्ट्रूमेंटेशन सेंटर, आंध्र प्रदेश।
13. कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी, बेलगाम।
14. गुजरात विश्वविद्यालय, गुजरात।
15. मनिपाल प्रौद्योगिकी संस्थान, मनिपाल।
16. मॉडल इंजीनियरिंग कालेज, केरल।
17. करूण्य यूनिवर्सिटी, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।
18. श्रीरामकृष्ण इंजीनियरिंग कॉलेज, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।
19. सत्य भामा यूनिवर्सिटी, चेन्नै, तमिलनाडु।
20. वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, वेल्लोर, तमिलनाडु।
21. एसआरएम यूनिवर्सिटी, चेन्नै, तमिलनाडु।
22. अमृता विश्वविद्यापीठ, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।
23. वेल टेक यूनिवर्सिटी, चेन्नै, तमिलनाडु।
24. शास्त्र यूनिवर्सिटी, तंजावुर, तमिलनाडु।
25. भारत यूनिवर्सिटी, चेन्नई, तमिलनाडु।
26. एम.एस रामैया कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, बंगलौर, कर्नाटक।
27. राजीव गांधी कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग टेक्नोलॉजी, पांडिचेरी।
28. महात्मा गांधी मिशन्स कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी, मुम्बई, महाराष्ट्र।
29. वाटमुल इंस्टीट्यूट ऑफ इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, वोर्ली, मुम्बई, महाराष्ट्र।
30. नेताजी सुभाष इंजीनियरिंग कॉलेज, कोलकाता, पश्चिम बंगाल।

शोध छात्रा
प्राणी विज्ञान विभाग,
डी. बी. एस. (पीजी) कालेज,
देहरादून – 248001
उत्तराखण्ड

परितंत्र की कहानी - २

मानव ने उजाड़ा हरियाला वन

दिनेश चन्द्र शर्मा

हिरण ने अपने शावक को हरे–भरे हरियाला वन के विनाश की कहानी सुनाते हुए कहा, ''हे पुत्र! जब तक इस वन में मानव ने प्रकृति का अंधाधुंध दोहन नही किया अपितु केवल इससे सन्तुलित सहयोग प्राप्त किया तब तक हमारा प्यारा वन जैव संसाधनों से भरपूर रहा। यहाँ के जलस्रोतों – झरनों, जलधाराओं, सरोवरों व नदियों में एकदम पारदर्शी व स्वच्छ जल रहता था। उनके तटों पर रंग बिरंगे पक्षी किलोलें करते थे। पक्षियों की चहचहाट से जंगल गुलजार रहता था। वे दिन भर हरियाली को हानि पहुँचाने वाले कीटों को खाते रहते थे तथा अपनी बीट से मिट्टी को उपजाऊ बनाते थे। इस तरह यहाँ हरियाली में वृद्धि होती रहती थी। उन पक्षियों के कई तरह के घोंसले पेड़ों पर झूलते थे। अनेक तरह के पशु जंगल में मस्ती से बिचरते थे। यहाँ का समूचा दृश्य बड़ा मनमोहक था और परितंत्र था एकदम सुदृढ़। विभिन्न स्थानों पर अनेक भोजन श्रृंखलायें बिखरी पड़ी थीं। उनके बहाने समस्त प्राकृतिक अवयव समृद्ध होते थे। सब कुछ बड़े सुव्यवस्थित ढंग से चल रहा था।'' सुनाते – सुनाते हिरण विगत दिनों की यादों में खो गया और चुप हो गया।

शावक को जैसे उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ। उसने पूछा, ''पापा! क्या आप इसी उजाड़ और रूखे सूखे जंगल की कहानी सुना रहे है जिसमें आज दूर–दूर तक जलस्रोत दिखायी भी नहीं पड़ते? जो हैं भी वे सूखने के कगार पर हैं, कहीं–कहीं कोई उजड़ा सा पेड़ दिखायी पड़ रहा है। कभी कभार ही किसी पक्षी की चहचहाट सुनायी पड़ती है और कोई इक्का दुक्का पशु ही दिखायी पड़ता है, वह भी कुपोषित, कमजोर और भयभीत।''

हिरण ने उसे विश्वास दिलाते हुये कहा, ''हाँ बेटा, मैं इस उजड़े हुये हरियाला वन के अतीत की कहानी ही सुना रहा हूँ। यहीं पर पहले भरपूर प्राकृतिक संसाधन थे।''

शावक ने जिज्ञासा से पूछा, ''फिर ऐसा क्या हुआ जो यह वन एकदम उजड़ गया। जरा, जल्दी बतलाइये, पापा।''

हिरण ने गहरी साँस लेकर छोड़ते हुये कहा, ''हाँ बतला रहा हूँ बेटा, यह कहानी लम्बी है और इसे बड़े धैर्य और समझ के साथ सुनना होगा।'' शावक ने हामी भरी, ''ठीक है, पापा, आप सुनाइये। मैं पूरे धैर्य और समझ के साथ ही इसे सुनूंगा।'' हिरण ने आगे सुनाना आरंभ किया, ''बेटा, दरअसल, हम जीव जन्तुओं के साथ–साथ हरियाला वन के चारों दिशाओं में बसे गाँवों और शहरों में रहने वाले मानव भी अपनी विभिन्न आवश्यकताओं के लिये इसी वन पर तो निर्भर थे। वे भी तो अपने लिये विविध वस्तुयें जैसे–ईंधन, इमारती लकड़ी, मवेशियों के लिये चारा, औषधियां, रसायन, रेशे, खनिज व अन्य वस्तुएँ यहीं से लेकर जाते थे। हमारा हरियाला वन था भी खूब समृद्ध। मानव की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता भी इसमें थी। और सब कुछ ठीक चल रहा था।''

शावक ने फिर पूछा, ''जब सब कुछ ठीक चल रहा था तो गड़बड़ी कैसे हुई, पापा?''

हिरण ने समझाया, ''गड़बड़ दो पहलुओं से आरंभ हुई।''

''कौन–से दो पहलू?'' शावक ने जिशासा से पूछा।

हिरण ने बतलाया, ''एक तो मनुष्यों की संख्या तेजी से बढ़ना हमारे वन के विनाश का एक बड़ा कारण है।''

शावक ने पूछा, ''वह कैसे?''

हिरण ने समझाया, ''अरे भई, जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ी, वैसे–वैसे उनके आवासीय क्षेत्र भी बढ़े। ज्यादा अनाज की जरूरत पड़ी अतः उन्हें अधिक कृषि भूमि की आवश्यकता हुई। हरियाला वन पर उनका अतिक्रमण बढ़ता गया और यह सिकुड़ता गया।''

शावक ने सहमति व्यक्त की, ''हाँ, पापा, मनुष्य तो आज भी हमारे जंगल को काट कर अपने खेत बनाता ही जा रहा है और यह छोटा होता जा रहा है।''

हिरण ने बताया, ''फिर आवश्यकता की जो वस्तुयें मानव यहाँ से ले जाता रहा था जनसंख्या वृद्धि के कारण उनकी माँग भी बढ़ती गयी और मानव यहाँ के संसाधनों का तेजी से दोहन करने लगा।''

हिरण ने बड़े दुःखी स्वर में अपनी बात को आगे बढ़ाया। ''दूसरा पहलू तो बहुत ही कष्टदायी है, बेटा उसके सामने तो हमारे हरियाला वन को घुटने टेकने पड़े।''

''ऐसी क्या बात हुई, पापा, जिससे कि इतने समृद्ध वन को भी घुटने टेकने पड़े?''

हिरण ने पूर्ववत दुःखी स्वर में बतलाया, ''दरअसल मानव की सन्तुलित आवश्यकताओं को तो किसी सीमा तक यह वन पूरा कर सकता था, लेकिन उसके लालच और लिप्सा के सामने इसे घुटने टेकने पड़े।''

''लालच और लिप्सा ?'' शावक ने न समझते हुये कहा।

हिरण ने समझाया, ''हा बेटा, लालच और लिप्सा।'' हुआ यह कि मानव यहाँ के भरपूर प्राकृतिक संसाधनों को देखकर ललचाने लगा। उसने अपनी आवश्यकतायें भी बढ़ायीं और इनकी पूर्ति के लिये उसने हमारे प्यारे हरियाला वन पर चारों दिशाओं से हमला बोल दिया – पेड़ कटने लगे, हरियाली का आवरण जीर्णशीर्ण हो गया, जीव जन्तुओं को मारा जाने लगा, खनन गतिविधियाँ बढ़ीं – कुल मिलाकर सारे प्राकृतिक संसाधनों की लूट – खसोट बढ़ी। परिणामत : हमारे आवास और आहार नष्ट हुये और यह वन आज की स्थिति तक आ पहुँचा। हिरण की आँखें में आँसू आ गये। उसका गला रूंध गया।''

शावक ने दुःखी स्वर में हिरण को ढाढ़स बँधाते हुये कहा, ''पापा, रोइये मत, रोना किसी समस्या का समाधान नहीं है। कृपया मुझे क्रमबद्ध ढंग से इस वन के विनाश की कहानी सुनाइये।''

हिरण ने कहा, ''ठीक है, बेटा। मैं तुम्हें क्रम से सारी बातें सुनाता हूँ। ध्यान से सुनो।.....''

क्रमश :

राज्य शैक्षणिक संयोजक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस,
उत्तर प्रदेश

सफल कुलपति की खोज

हास्य–व्यंग

अशोक दुबे

चंपक वन के नंदन कानन विश्वविद्यालय के कुलपति का कार्यकाल समाप्त हो रहा था। यह बात सच है कि उनके कार्यकाल में शिक्षण के घण्टे बढ़ाए गए, शोध कार्य न करने पर प्रमोशन टाले गए, छात्रों की उपस्थिति पर जोर दिया गया और कार्यालय में भ्रष्टाचार के आरोप कम हुए। मगर ऐसा कार्यकाल भी किस काम का जिसमें न तो शिक्षक खुश थे, न विद्यार्थी और न ही कार्यालय के कर्मचारी। सभी एक–एक कर दिन गुजरने का इंतजार कर रहे थे। यह सोचकर सभी का दिल दहल उठता था कि कहीं कुलपति जी को कार्यकाल में एक्स्टेंशन न मिल जाए। जंगल में सभी जानवर जो सोच रहे थे वही ठीक महाराज की सलाहकार परिषद् भी सोच रही थी। उचित समय पर उचित कारवाई करते हुए नए कुलपति की खोज के लिये एक सर्च कमेटी बनाई गई। सर्च कमेटी ने जंगल के पेड़–पौधों और जंगली लताओं से लेकर आफिस की फाइलों तक सभी का विस्तृत मुआयना किया। जंगल के तमाम जानवरों के इंटरव्यू लिये और सभी समस्याओं से अवगत होने के पश्चात कुलपति पद के लिये अज्जू अजगर का चुनाव किया। अपनी विस्तृत रिपोर्ट में कमेटी ने अज्जू जी के निम्न शारीरिक एवं चारित्रिक गुणों पर प्रकाश डाला।

- अजगर पेड़ के ऊपर भी चढ़ सकता है और नीचे भी उतर सकता है अर्थात् उत्थान और पतन को वह एक भाव से लेता है।
- जंगल के दूसरे जानवरों की तरह उसे रोज–रोज शिकार करने की आदत नहीं हैं। एक लंबा हाथ मारने के पश्चात वह महीनों निर्विकार भाव से पड़ा रह सकता है।
- वह फुफकार मार सकता है, लपेटे में ले सकता है और खाकर हजम भी कर सकता है अर्थात् उचित समय पर वह यथोचित कारवाई कर सकता है।
- वह बछड़ा, भेड़, हिरन, बकरी, खरगोश से लेकर पक्षियों के बच्चे और समय आने पर अपने बच्चों को भी खा सकता है। अतः उसे अपने और पराए में भेद नहीं है।
- उसकी रीढ़ की हड्डी इतनी लचीली है कि वह किसी भी ओर मोड़ी जा सकती है।
- उसके हाथ–पांव नहीं है इसलिये न वह हस्ताक्षर कर सकता है और न ही अंगूठा लगा सकता है। सारा काम मुंह जबानी होने से अपनी कही बात से मुकरना उसके लिये सबसे आसान होगा।
- उसके लिये अलग आवास की व्यवस्था नहीं करनी होगी। जहां माल मिला वहीं खा के पड़ गए। बाकी सभी जानवरों को घर जाने की चिंता रहती है फिर वह कोई सद्गृहस्थ हो या टुन्न शराबी।
- बड़ा और शक्तिशाली होने के कारण वह अपना सर उठा सकता है मगर इसके बावजूद वह जमीन पर रेंगता है। दूसरे जानवर जमीन पर चलते हैं, दौड़ते हैं या हवा में उड़ते हैं।
- अजगर चूंकि अपने शिकार को समूचा निगल लेता है इसलिये जूठन बिखरने से पर्यावरण प्रदूषण का खतरा नहीं है। इसके अलावा एक और फायदा यह भी है कि जंगल की सबसे घाघ आडिट पार्टी भी पता नहीं कर सकती कि इस पेट में क्या–क्या समाया हुआ है और क्या–क्या हजम कर लिया गया है।
- कान नहीं होने से न कोई उसके कान भर सकता है और न वह किसी की शिकायत सुन सकता है। सर्च कमेटी के एक सदस्य ने विकसित मस्तिष्क न होने की बात उठाई मगर बाकी सदस्यों ने इसका पुरजोर विरोध किया। उनका कहना था कि अजगर को दोस्त और दुश्मन की पहचान है जो सबसे महत्वपूर्ण है और इसके अलावा उसे अपनी पाचन क्षमता का अहसास है। अन्यथा बड़े–बडे बुद्धिमान इस पर गच्चा खा जाते हैं कि कहां–कहां खाया जाए और कितना खाया जाए।

पदासीन होने के पश्चात कुछ दिनों तक अज्जू जी ने शिक्षण और शोध की बात की मगर नतीजे में देखते ही देखते उनकी लोकप्रियता आसमान से सीधे जमीन पर आन गिरी। किसी भी तंत्र में चूंकि लोकप्रियता का अपना महत्व है इसलिये हालात की जानकारी मिलने पर वीरू महाराज ने अपनी गुफा में बुलाकर कुलपति महोदय को अच्छी झाड़ लगाई। हालात में उचित सुधार के लिये सल्लू सियार और चालू लोमड़ की एक उच्चस्तरीय कमेटी बनाई गई। कमेटी ने अपनी फायलन रिपोर्ट में साहित्य का भी सहारा लिया।

और भी गम हैं जमाने में मोहब्बत के सिवा
राहतें और भी हैं वस्ल की राहत के सिवा

इसकी तर्ज पर बताया गया कि शोध और शिक्षा के अलावा भी कुलपति की अन्य कई जिम्मेदारियां हैं जिसका निर्वाह उसे करना होता है। तत्काल कारवाई के

लिये एक सूची कुलपति महोदय को प्रदान की गई। इस सूची में प्राथमिकता के आधार पर निम्न कार्यों को करने की सलाह दी गई।

किस विभाग के किस बगीचे में कौन–कौन से फूल के पौधे लगाए जाएं, विभिन्न विभागों के अलग–अलग भवनों पर कौन–सा, या कौन–कौन से रंग किये जाएं, पुस्तकों का बोझ कैसे हल्का किया जाए, कैन्टीन में चाय की क्वालिटी कैसे बढ़ाई जाए, विद्यार्थियों में देशप्रेम की भावना कैसे जागृत की जाए, किन–किन महापुरुषों का जन्मदिन विश्वविद्यालय में मनाया जाए, स्विमिंग पूल के पानी की क्वालिटी कैसे सुधारी जाए, छात्रों और छात्राओं के बीच और अधिक सौहार्द्रपूर्ण संबंधों की आवश्यकता है या नहीं, पाश्यात्य सभ्यता को कैम्पस में आने से किस तरह रोका जाए, विद्यार्थियों के बीच स्थानीय भाषा का प्रचलन किस तरह बढाया जाए, धार्मिक शिक्षा दी जाए या नहीं, केम्पस को प्रदूषण मुक्त कैसे किया जाए, कैन्टीन में टेबल–कुर्सी पर खाना खिलाया जाए या जमीन पर आसन बिछाकर, साप्ताहिक अवकाश रविवार को रखा जाए, शुक्रवार को या सोमवार को।

सभी मुद्दों की महत्ता देखते हुए अलग–अलग कमेटियां बनाई गईं और शिक्षकों और छात्रों को उचित प्रतिनिधित्व दिया गया। इस तरह विश्वविद्यालय के सभी प्रभावशाली जानवर अपने–अपने शौक और अपनी–अपनी मान्यताओं के अनुसार अपने–अपने कार्यों में व्यस्त हो गए। अब न शिक्षण की बात हो रही थी और न शोध की मगर सभी खुश थे कि कुलपति महोदय ने उनकी प्रतिभा का उचित मूल्यांकन किया है। समिति के सदस्यों की मानसिक और शारीरिक क्षमताओं को बढ़ाने के लिये महाराज ने निर्णय लिया कि चम्पक वन में पैदा होने वाला काजू, बादाम, अखरोट और पिस्ते का समस्त स्टॉक समिति के सदस्यों को मुफ्त वितरित किया जाए। दूसरे जानवरों में, जो किसी भी तरह किसी भी कमेटी में नहीं आ पाए थे, किसी तरह का रोष न फैले इसलिये इस निर्णय को कांफिडेंशियल रखा गया। और इस तरह नंदन कानन विश्वविद्यालय अमन, भाईचारे, सद्भावना, सहिष्णुता और प्रगति की राह पर चल पड़ा।

वैज्ञानिक
वाड़िया हिमालय भू–विज्ञान संस्थान
देहरादून

मशरूम खेती के लाभ

वीना मौर्य

मशरूम अर्थात् कुकुरमुत्ता, खुंभ, खुंभी, गुच्छी, सांप की छतरी या भगौडी वास्तव में एक प्रकार की फफूंद है। यह वनस्पति पौष्टिकता से भरपूर होती है। साथ ही इसमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अत्यन्त कम होने के कारण उन लोगों के लिये विशेषरूप से लाभदायक होती है जो अधिक वजन के कारण परेशान होते हैं। निरामिष भोज्य पदार्थ होते हुए भी स्वाद में सामिष के समान होने के कारण तथा अत्यन्त स्वादिष्ट भी होने के कारण यह एक खाद्य पदार्थ के रूप में काफी लोकप्रिय है। विश्व में मशरूम की लगभग 1.25 लाख प्रजातियाँ पाई जाती हैं परन्तु उनसे से मात्र दो हजार प्रजातियाँ ही मनुष्य के खाने के योग्य मानी जाती है। मशरूम महंगा होने के बावजूद इसकी मांग काफी रहती है इसलिये इसकी खेती आर्थिक दृष्टि से एक अत्यन्त लाभदायक व्यवसाय माना जाता है।

मशरूम का पौधा दो भागों में बंटा होता है। निचला भाग डण्डी के समान डोरी जैसा होता है जबकि ऊपरी छतरीनुमा दूसरा भाग छोटी–छोटी कोशिकाओं से बना होता है। हमारे देश में खाने योग्य मशरूम के तीन प्रमुख प्रकार मिलते हैं।

1. बटन मशरूम या एगीरेक्स बाइस्पोरस जो शरद ऋतु में 15° से 25° सेल्सियस तापक्रम तथा 80 से 90 प्रतिशत आर्द्रता वाले स्थान में गेहूँ अथवा धान के भूसे की कंपोस्ट में उगाया जाता है।

2. पराल मशरूम या वाल्वेरियेला वाल्वेसिका जिसे पैडी स्ट्रॉ मशरूम भी कहते हैं ग्रीष्म ऋतु में 30° से 35° सेल्सियस तापक्रप तथा 80 प्रतिशत आर्द्रता में धान के पुआल पर उगाया जाता है।

3. आयस्टर मशरूम या प्लूरोटस सेजर काजू जिसे ढोंगरी भी कहते हैं शरद ऋतु में 20° से 30° सेल्सियस ताप तथा 80 से 90 प्रतिशत आर्द्रता में भूसे अथवा पुआल पर उगाया जाता है।

मशरुम की खेती के लिये अलग से कृषि योग्य भूमि की आवश्यकता न होने के कारण इसकी खेती आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त लाभकारी होती है। इसके लिये बाजार से स्पॉन लिया जाता है जो एक प्रकार का खमीर है और इसीसे मशरुम उगाते हैं। स्पॉन एक तरह से बीज का काम करते हैं। स्पॉन प्राप्त करने के अतिरिक्त किसान का कोई और व्यय नहीं होता क्योंकि न कृषि यन्त्रों की आवश्यकता है न निराई, सिंचाई, गुड़ाई आदि की। हाँ, अन्य फसलों की भांति इन पर कीड़े–मकोड़े या बीमारियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है जिसके लिये सावधानी बरतनी आवश्यक होती है। स्थान की उचित सफाई रखना, प्रत्येक बार मशरुम चुनने के बाद अनावश्यक किस्म की फफूंदी को फेंक देना, सप्ताह में एक बार 0.2 प्रतिशत साइथियान का छिड़काव आदि आवश्यक है। चूंकि मशरुम बहुत कोमल होते हैं अतः इनको सावधानी पूर्वक हल्के हाथों से चुनना, दबाव तथा रगड़ से बचाना, ढेर न बनाना, तोड़ने के पश्चात् शीघ्र बाजार पहुंचाना महत्वपूर्ण हैं।

मशरुम की खेती में लागत कम और आय अधिक होने के कारण स्त्रियाँ, बेरोजगार युवक, भूमिहीन मजदूर इसे एक लाभकारी कुटीर उद्योग के रुप में अपना सकते हैं। आयस्टर मशरुम सुखाकर भी बेचा जा सकता है।

ग्राम, पोस्ट तुनवाला
देहरादून

अपना विज्ञान-ज्ञान बढ़ाइये

राहुल राणा

अफ्रीकी शुतुरमुर्ग

हिमालयन मोनाल

इंडियन बस्टर्ड

पक्षियों से संबंधित विविध जानकारी प्रश्नोत्तरों के रुप में प्रस्तुत है। आपको प्रश्नों के उत्तर पता हैं तो उत्तम, कुछ नहीं पता हैं तो आपके लिये लाभदायक। आशा है उपयोगी होगा।

पक्षी परीक्षण

प्रश्न

1. पक्षियों के अध्ययन को क्या कहा जाता है ?
2. पक्षियों के अण्डों के अध्ययन को क्या कहा जाता है ?
3. पक्षियों के घोसलों के अध्ययन को क्या कहा जाता है ?
4. पक्षी प्रवास के अध्ययन को क्या कहा जाता है ?
5. पक्षी दिवस कब मनाया जाता है?
6. विश्व का सबसे बड़ा और भारी जीवित पक्षी कौन सा है ?
7. विश्व का सबसे छोटा पक्षी कौन सा है ?
8. भारत का राष्ट्रीय पक्षी कौन सा है ?
9. उत्तराखण्ड का राज्य पक्षी कौन सा है ?
10. बर्ड मैन आफ इंडिया किसे कहा जाता है ?
11. भरतपुर स्थित घाना पक्षी विहार अन्तर्राष्ट्रीय बर्ड रिंगिंग केन्द्र की स्थापना किसने की थी ?
12. पक्षियों तथा सरीसृपों के बीच की कड़ी का क्या नाम है ?
13. सबसे भारी उड़ सकने वाला भारतीय पक्षी कौन सा है?
14. वह कौन सा पक्षी है जो पीछे की ओर भी उड़ सकता है?
15. एक मुर्गी प्रतिवर्ष औसतन कितने अण्डे देती है?
16. कीवी पक्षी कहाँ पाया जाता है?
17. किस पक्षी का नासा छिद्र चोंच के अगले छोर पर होता है?
18. कठफोड़वा एक सेकेंड में कितनी बार चोंच मारता है?
19. डोडो क्या है?
20. श्री कृष्ण के मुकुट में किस पक्षी का पंख लगा होता है?
21. कौन सा पक्षी अपने अण्डे कौवो के घोंसलों में देता है?
22. शुतुरमुर्ग के बाद दूसरा सबसे बड़ा पक्षी किसे माना जाता है?
23. बर्ड रिंगिग किसे कहते है?
24. प्रवास के दौरान सबसे लम्बी दूरी तय करने वाला पक्षी किसे माना जाता है?
25. भारत में प्रवासी पक्षियों का स्वर्ग किस स्थान को कहा जाता है?
26. वह कौन सा पक्षी है जो ज़हरीला होता है ?
27. न्यूजीलैंड का राष्ट्रीय पक्षी कौन सा है ?
28. सबसे छोटा अण्डा किस पक्षी का होता है?
29. कार्टून फिल्म पात्र डोनाल्ड बत्तख की प्रेमिका का क्या नाम है?
30. माता लक्ष्मी का वाहन किस पक्षी को माना जाता है?
31. रामायण में जटायु कौन–सा पक्षी था?
32. भगवान गणेश के भाई कार्तिक का वाहन किस पक्षी को माना जाता है?
33. पक्षियों में कौन सा अंतरांग नही होता?
34. पक्षियों में सूंघने तथा देखने की संवेदनाओं में से कौन सी तीव्र होती है?
35. किन पक्षियों के पर संयुक्त राज्य अमेरिका की आधिकारिक मोहर पर बने है?
36. वह एकमात्र पक्षी जो दक्षिणी ध्रुव (अंटार्कटिका) के बर्फीले अपशिष्ट पर रहता है?
37. चीन में कुछ पक्षियों के घोंसलों को सूप बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। उनका नाम क्या है?
38. मो. रफी द्वारा गाया 'चल उड़ जा रे पंछी' नामक गीत किस फिल्म का है?
39. सबसे छोटा तोता कहां पाया जाता है?
40. सबसे भारी तोता कौन सा है?
41. सबसे लम्बे पर किस पक्षी के होते है?
42. सबसे लम्बी चोंच किस पक्षी की होती है?
43. सबसे बड़ी आँखें किस पक्षी की होती है?
44. वह कौन सा पक्षी है जो सबसे अधिक समय तक वायु में रहता है?
45. सबसे बड़ा पंख फैलाव किस पक्षी का होता है?
46. सबसे तीव्र गति से उड़ने वाला पक्षी कौन सा है?
47. सबसे तीव्र गति से पंख फड़फड़ाने वाला पक्षी कौन सा है?
48. सबसे लम्बी छलांग लगाने वाला पक्षी कौन सा है?
49. सबसे बड़ा घोंसला किस पक्षी का होता है?
50. सबसे बड़ा झुण्ड बनाकर कौन सा पक्षी रहता है?

उत्तर

1. आर्निथोलॉजी
2. ऊलॉज़ी
3. नीडोलॉज़ी
4. फीनोलॉज़ी
5. पक्षी दिवस हर वर्ष 5 जनवरी को मनाया जाता है।
6. अफ्रीकी शुतुरमुर्ग जो 2.5 मी ऊँचा तथा वज़न लगभग 150 किलो होता है।

7. दक्षिणी अमेरिका में पाया जाने वाला हमिंग बर्ड नामक पक्षी, जो 5 सेंमी लम्बा तथा वज़न लगभग 3 से 4 ग्राम होता है
8. मोर
9. हिमालयन मोनाल नामक पक्षी, जो 60 से 90 सेमी लम्बा तथा वज़न लगभग 1.5 से 2 किलो होता है। यह पूर्वी अफगानिस्तान से लेकर भूटान तक पाया जाता है
10. डा. सालिम अली
11. डा. सालिम अली
12. आर्कियोप्टेरिक्स
13. भारत तथा पाकिस्तान में पाए जाने वाला महान इंडियन बस्टर्ड नामक पक्षी, जो 90–120 सेमी लम्बा तथा वज़न लगभग 3.5 से 6.5 किलो होता है
14. हमिंग बर्ड
15. 300 अण्डे
16. न्यूज़ीलैंड
17. कीवी
18. 20 बार
19. डोडो एक पक्षी है जो 17वीं शताब्दी में मौरिशस से विलुप्त हो गया था
20. मोर
21. कोयल
22. आस्ट्रेलियाई इमू जो कि लगभग 1.5 मी ऊँचा तथा वज़न लगभग 30 से 60 किलो होता है
23. पक्षियों के प्रवास करने की दिशा और स्थान की जानकारी प्राप्त करने के लिए पक्षियों के पैरों में छल्ला पहनाया जाता है, और इस प्रचलित विधि को बर्ड रिंगिंग कहते है
24. आर्कटिक टर्न नामक उत्तरध्रुवीय पक्षी समुद्री प्रवास के समय लंबी दूरी (17000 किलोमीटर) तय करता है
25. राजस्थान के भरतपुर जिले में स्थित केवलादेव (घाना) राष्ट्रीय उद्यान
26. पैपुआ, न्यू गिनिया (आस्टेलियाई क्षेत्र)में पाया जाने वाला पिटोही डाइक्रस नामक पक्षी। 23 सेमी लंबे इस पक्षी की खाल तथा परों में तंत्रिकाओं को प्रभावित करने वाला ज़हरीला पदार्थ (होमोबौरैको टॉक्सिन) होता है, जिस कारण पक्षी को छू लेने भर से ही अंग सुन्न पड़ जाता है
27. कीवी
28. हमिंग बर्ड, जो 1.5 सेमी यानी कि एक मटर के दाने के बराबर होता है
29. डेज़ी बत्तख
30. उल्लू
31. गिद्ध
32. मोर
33. मूत्राशय (क्योंकि पक्षियों में मल त्याग ' बीट ' के रूप में होता है, जो अनपचे भोजन एवम् मूत्र (यूरिक एसिड) का मिश्रण होता है
34. देखने की
35. गंजा ईगल (बाल्ड ईगल)
36. पेंगुइन, यह 1.2 मीटर लम्बा तथा वज़न लगभग 40 से 45 किलो होता है।
37. गुफाओं में रहने वाला स्फिटलेट नामक पक्षी
38. भाभी 1957
39. माइक्रोसिटा नामक तोता (8 से.मी) पैपुआ नामक टापुओं पर पाया जाता है।
40. न्यूज़ीलैंड में पाए जाने वाले मकाओ नामक, न उड़ने वाले तोतों का भार लगभग 3 किलों का होता है
41. ज़ापान में मनोरंजन की दृष्टि से प्रजन न कर उत्पन्न लाल रंग के जंगली मुर्गों के पर लगभग 12 मीटर लम्बे होते हैं
42. आस्ट्रेलियाई पेलिकन की चोंच 36 से 45 सेमी लम्बी होती है। शरीर की लम्बाई के अनुपात में सबसे लम्बी चोंच एंडिज पर्वतों में पाए जाने वाली हमिंग बर्ड में होती है
43. शुतुरमुर्ग की आँखें 5 सेमी व्यास की होती है
44. सूटी टर्न नामक पक्षी शिशु अव्सथा में अपने घोंसले छोड़ देता है, और 3 से 10 वर्ष तक वायु में रहता है। इस बीच समय–समय पर यह जल की सतह पर विश्राम करता है। धरती पर तो केवल प्रजनन के लिए ही आता है
45. अल्बाट्रॉस नामक समुद्री पक्षी का पंख पसार लगभग 3.6 मी का होता है। (6 से 8 करोड़ वर्ष पूर्व पाए जाने वाले दक्षिणी अमेरिकी टेराटौरौन नामक पक्षी का पंख फैलाव 7 मीटर था
46. पेरेग्राइन फाल्कन की गति 186 से 252 किमी प्रति घंटा तक हो सकती है। उत्तरी अमेरिका में पाए जाने वाले पेरेगाइन फाल्कन 'डक हॉक' की गति 320 कि मी प्रति घंटा
47. दक्षिणी अमेरिका में पाए जाने वाले हमिंग बर्ड नामक पक्षी अपने पंख एक सेकंड में 90 बार ऊपर नीचे करता है
48. अफ्रशुतुरमुर्ग दौड़ते समय लगभग 8 मीटर से भी अधिक की छलांग लगाता है
49. आस्ट्रेलिया में पाई जाने वाली मैली नामक मुर्गियों के घोंसले 10 मी लंबे तथा 4.5 मी चौड़े होते हैं, घोंसले बनाने के स्थान का भार लगभग 330 टन होता है
50. पूर्वी तथा दक्षिणी अफ्रीका में पाए जाने वाले फ्लैमिंगो नामक पक्षियों के झुण्ड में कई लाख पक्षी तक हो सकते हैं

इमू

मोर

कीवी

भूतपूर्व छात्र,
प्राणी विज्ञान विभाग,
डी. बी. एस. (पीजी) कालेज,
देहरादून–248001, उत्तराखण्ड
ई–मेल: rahuldoon786@gmail.com

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान–2

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून को मूलतः पूर्व इम्पीरियल वन अनुसंधान संस्थान के रूप में 1906 में स्थापित किया गया था ताकि देश में वानिकी अनुसंधान क्रियाकलापों को सुगठित एवं संचालित किया जा सके। संस्थान का इतिहास भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण भारतीय उप–महाद्वीप में वैज्ञानिक वानिकी के विस्तार एवं विकास का पर्याय है। संस्थान ने देश में वन अधिकारियों एवं वन रेंजरों के प्रशिक्षण को व्यवस्थित भी किया तथा स्वतंत्रता के बाद इसका वन अनुसंधान संस्थान एवं महाविद्यालय के रूप में उपयुक्त ढंग से पुनर्नामकरण किया गया।

1988 में देश में वानिकी अनुसंधान की संरचना को पुनर्गठित किया गया। वन अनुसंधान संस्थान एवं अन्य अनुसांधन केन्द्रों को पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार के अन्तर्गत हाल में सृजित भारतीय वानिकी अनुसांधन एवं शिक्षा परिषद् के प्रशासनिक नियंत्रण में लाया गया। भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद् की स्थापना देश में वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा को नियंत्रित और संचालित करने के लिए एक स्वायत्त शीर्ष संस्था के रूप में की गई। क्षेत्रीय स्तर पर अब वन अनुसंधान संस्थान उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हरियाणा, पंजाब, चण्डीगढ़ और दिल्ली राज्यों की अनुसांधन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सीधे उत्तरदायी है।

दून घाटी के आरण्य परिवेश में स्थित संस्थान के परिसर का क्षेत्रफल लगभग 500 हैक्टेयर है। मुख्य भवन, जिसका कुर्सी क्षेत्रफल 2.5 हैक्टेयर है, 1929 में पूरा हुआ। बाह्य हिमालय की पृष्ठभूमि में चित्रित–सी यह इमारत यूनानी–रोमन एवं प्राच्य वास्तुकला का एक प्रभावशाली नमूना है।

वानिकी अनुसंधान

वर्तमान अनुसांधन कार्यकलापों का मुख्य जोर निम्न के लिए प्रौद्योगिकियां विकसित करना हैः

- वन उत्पादकता में वृद्धि
- रोपण स्टॉक का सुधार
- बंजर भूमियों का सुधार
- काष्ठ एवं अकाष्ठ वन उत्पादों का सक्षम उपयोग
- पारि अनुकूल उत्पादों का विकास एवं प्रक्रमण

अनुसंधान प्रभाग

- वनस्पति विज्ञान
- कोशाधु एवं कागज
- वन उत्पादों का रसायन
- पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण
- कीट विज्ञान
- विस्तार
- वन उत्पाद
- वन मृदा एवं भूमि सुधार
- वन आनुवांशिकी एवं वृक्ष प्रवर्धन
- अकाष्ठ वन उत्पाद
- वन रोग विज्ञान
- संसाधन सर्वेक्षण एवं प्रबंधन
- वन संवर्धन

वैज्ञानिक सेवाएं

- 1.65 लाख पुस्तकों एवं 300 वर्तमान जरनलों के साथ राष्ट्रीय वन पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र
- फल विज्ञानीय संग्रह सहित 3.3 लाख पादप नमूनों का संग्रहालय
- प्रलेखित 550 प्रजातियों का वन संवर्धन
- 20000 काष्ठ नमूनों का जाइलेरियम
- 23,000 से अधिक कीट प्रजातियों के साथ कीट विज्ञानीय संदर्भ संग्रह
- वन कवक के करीब 1000 पृथक किए गए संवर्ध संग्रहण
- 80 से अधिक वृक्ष प्रजातियों के बीजों के परीक्षण के लिए नियम
- 400 से अधिक प्रकाष्ठ प्रजातियों के गुणों पर आँकड़ा आधार
- 12 बाजारों में 15 से अधिक प्रजातियों का प्रकाष्ठ कीमत सर्वेक्षण
- भारतीय वृक्षों की 76 आयतन सारणियां और 26 उत्पाद सारणियां
- करीब 100 औषधीय और सुरभित पादपों के जनन–द्रव्य संग्रहण

- वृक्ष वाटिका, बाँस वाटिका और वानस्पतिक उद्यान का रखरखाब
- नए कच्चे पदार्थो के उपयोग, प्रक्रमण तकनीकों, काष्ठ प्रक्रमण एवं काष्ठ उपयोग की किफायती पारिअनुकूल विधियों पर उद्योगों को परामर्श और प्रशिक्षण
- फैक्ट्री प्रक्रिया और नैदानिक विश्लेषण की समस्याओं पर स्वस्थाने परामर्श
- प्रकाष्ठ और प्रकाष्ठ उत्पादों के परीक्षण तथा गुणवत्ता नियंत्रण
- काष्ठ पहचान और परीक्षण

विकसित महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियां

- सौर उष्मित प्रकाष्ठ संशोषण आपाक
- अगरबत्ती का जिगत विकल्प
- वेपर फेज अमोनिया उपचार द्वारा काष्ठ प्लास्टिकीकरण एवं बंकन
- यूकेलिप्टस हाईब्रिड की चिराई एवं संशोषण तकनीक
- हाथ औजारों से पेंसिल बनाना
- पॉपलर से दरवाजे और खिड़की शटरों के लिए स्तरित काष्ठ
- यूकेलिप्टस से धूम्रित फर्नीचर, योजक और दस्तकारी
- वृहद प्रचुरोद्भवन द्वारा बाँसों के बहुमात्र प्रवर्धन के लिए नई प्रौद्योगिकी
- खनित भूमियों / अधिभार ढेरों का सुधार एवं पारि पुनरुद्धार
- यूकेलिप्टस दरवाजे एवं खिड़की काटों का ए सी ए उपचार
- वन मूल के चयनित औषधीय पादपों की खेती एवं प्रक्रमण
- पारि अनुकूल परिरक्षण
- हरित काष्ठ के उपचार के लिए त्वरित परिवर्ती प्रक्रिया
- तार बंधे बक्से
- बीज संग्रहण, प्रक्रमण एवं भण्डारण तकनीक
- पौधशालाओं में वृद्धि बढ़ाने के लिए जैव उर्वरक उपयोग
- पौधशाला पद्धतियों के लिए उन्नत औजार
- वन जैवमात्रा से प्राकृतिक रंग
- यूकेलिप्टस और पॉपलर का उपयोग
- बंजर सोडीज मृदाओं को हरित बनाना
- कृषि वानिकी मॉडल
- राल निःस्राव तकनीकें

प्रोसेस पेटेन्टों की सूची

- अगरबत्ती निर्माण के लिए एक आसंजक
- यूंकेरिया गैम्बियर सार से कत्था तैयार करने के लिए प्रक्रिया
- टैट्रामीलीस नूडिफ्लोरा छाल और पत्तियों से ब्रायोनोलिक ऐसिड तैयार करने के लिए एक प्रक्रिया
- ग्रीविया ऑप्टिवा बीजों से रंग तैयार करने की एक प्रक्रिया
- बंकित काष्ठ फर्नीचर तैयार करने के लिए काष्ठ प्लास्टिकीकरण की एक प्रक्रिया

व.अ.सं., देहरादून में अल्पकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम अधिकारियों एवं वैज्ञानिकों के लिए

- पौधशाला और रोपण प्रौद्योगिकी
- हाइ–टैक पौधशाला एवं रोपण प्रबंध
- कृषि वानिकी
- प्लाईकाष्ठ निर्माण
- प्रकाष्ठ का वर्गीकरण एवं श्रेणीकरण
- काष्ठ संशोषण
- शहरी वानिकी एवं भूदृश्य निर्माण
- प्रकाष्ठों के क्षेत्र पहचान के लिए प्रदर्शन
- बंजर भूमियों का पारि पुनरुद्धार
- औषधीय पादपों की खेती और उपयोग
- अकाष्ठ वन उपज का व्यापारिक उपयोग और उपयोगिता परिवर्धन
- वन उत्पादकता बढ़ाने के लिए आनुवंशिक रूप से उन्नत पदार्थ

वन क्षेत्र कर्मचारियों, अन्य सरकारी विभागों, गैर सरकारी संगठनों के प्रायोजित कर्मचारी, किसान एसएचसी सदस्यों, गाँव वन समिति सदस्यों के लिए

- औषधीय पादपों की खेती
- बाँस उपयोग
- पौधशाला एवं रोपण प्रौद्योगिकी
- ग्रामीण विकास प्रौद्योगिकियां

इसके अलावा, पारस्परिक रुचि के विषयों पर विशेष पाठ्क्रमों का आयोजन भी किया जाता है।

वन शिक्षा

वन अनुसांधन संस्थान, देहरादून को, वानिकी एवं पर्यावरण की विभिन्न शाखाओं में शिक्षा देने के उद्देश्य से, 1991 में सम विश्वविद्यालय का दर्जा प्रदान किया गया। सम विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे पाठ्यक्रम इस प्रकार है:

दो वर्षीय डिग्री पाठ्यक्रम

- एम एस सी (अर्थशास्त्र व प्रबंध)
- एम एस सी (काष्ठ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी)
- एम एस सी (पर्यावरण प्रबंध)

एक वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम

- अकाष्ठ वन उपज संसाधन के प्रबंध में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- जैव विविधता संरक्षण में स्नातकोत्तर डिप्लोमा

इन पाठ्यक्रमों में अखिल भारतीय प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर प्रवेश दिये जाते हैं।

डॉक्टरल कार्यक्रम

अपने डॉक्टरल कार्यक्रम के तहत विश्वविद्यालय वानिकी और पर्यावरण से संबंधित विभिन्न विषयों में पीएच.डी. डिग्रियां भी प्रदान करता है।

विश्वविद्यालय वन अनुसांधन संस्थान परिसर में ही अपने सभी विद्यार्थियों के लिए छात्रावास, पुस्तकालय, कम्प्यूटर, प्रयोगशाला, चिकित्सा तथा खेलकूद की सुविधाएं उपलब्ध कराता है।

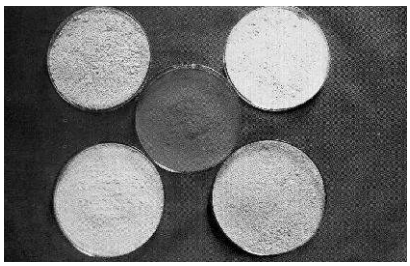

जड़ी बूटी से गुलाल

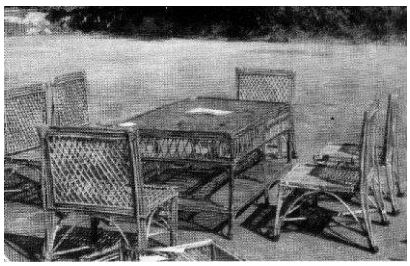

लैन्टाना फर्नीचर–खरपतवारों का उपयोग

वन अनुसंधान संस्थान,
डाकघर न्यू फॉरेस्ट, देहरादून–248006
दूरभाष : 0135–2750606
वेबसाइड :
ीजजचरू//ूूूपबतिमण्वतहए
ीजजचरू//तिपण्पबतिमण्वतह

विज्ञान कविता

शिला सागर संवाद

''व्यर्थ तुम्हारा सारा श्रम है, भ्रम सब हो जायेगा दूर
कितनी भी बलवान लहर हो, कर दूंगा मद सारा चूर
जाने कब से मार रहे हो टक्कर पर टक्कर भारी
मैं अविचल ही हंसता रहता देख तुम्हारी लाचारी''

तुम द्रव हो छितरा जाते हो, मैं घन शाश्वत खड़ा हुआ
तेरी सब आभासी गति है, मैं सुस्थिर हूँ अड़ा हुआ
तेरी व्यर्थ गर्जना है यह सब सुनो वर्जना तुम मेरी
बन्द करो यह छल नर्तन अब नहीं बजेगी रणभेरी''

'अरे दृषद! जड़! देख रहा हूँ नहीं दूर तेरा अब अन्त
कण कण कर के तोड़ रहा हूँ, टूटोगे निश्चय ही हन्त
भभराकर तुम शीघ्र गिरोगे आओगे मेरी ही गोद
समाधि तुमको मैं ही दूंगा, पाऊंगा अंतिम मैं मोद

मैं द्रव हूँ, हो तुम घन यद्यपि, द्रव की पर है शक्ति अपार
तुम स्थिर हो पर मैं हूँ गति में, सह न सकोगे गति की मार
ऊर्जा मेरी गतिज अपरिमित, स्थितिज तुम्हारी सीमित
उद्धत तव शिर नत ही होगा चेतन का अन्तिम स्मित'

शिलाखण्ड का औ सागर का सुनकर के यह परिसंवाद
सिकता का कण सस्मित बोला बंद करो यह व्यर्थ विवाद
जल के बल से शिला टूटती औ उससे मैं बनता
मेरे जैसे कण जुड़–जुड़ कर एक नया प्रस्तर होता

यह क्रम तो चलता रहता है, नाश और नूतन निर्मिति
नहीं जगत में कुछ भी शाश्वत, नहीं सत्य है स्थिति अथवा गति
कभी पूर्व में यह न सिंधु था और नहीं था यह प्रस्तर
आगे भी ये कब तक होंगे बतलाना है दुस्तर

हम सब परवश मात्र पात्र हैं प्रकृति नटी के कर के
तज कर सब निज दंभ, अहंता, प्रसन्न हों जी भर के
ऊर्जा हो या पदार्थ सारे एक तत्त्व के हैं प्रतिरूप
छोड़ें अपने क्षुद्र मान सब, समझें गुनें यथार्थ अनूप

मुकुन्द जोशी

ईश्वर का अस्तित्व हो सकता है या नहीं भी हो सकता परन्तु ईश्वरत्व या देवत्व की हमारी खोज निश्चित रूप से श्रेष्ठ है और साथ ही साथ मानवीय भी। सत्य की गहराइयों की खोज में जुटे मानव ने जितने भी मार्गों का अवलम्बन किया उन सब से यही बात सिद्ध होती है। कुछ लोगों को ध्यान, धारणा और प्रार्थना में शांति मिलती है। कुछ अन्य परोपकार तथा दूसरों की सेवा में ही सुख प्राप्त करते हैं। कई ऐसे भाग्यशाली और प्रतिभाशाली भी होते हैं जो अपनी कलाओं की साधना में ही रमे रहते हैं। जीवन तथा प्रकृति के रहस्यों को जानने और समझने का प्रयास भी ऐसा ही एक कार्य है जिसे हम विज्ञान कहते हैं। इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि हर वैज्ञानिक सत्यशोधक ही होता है; बल्कि अधिकांश नहीं होते। लेकिन विज्ञान की हर शाखा में कुछ तो ऐसे निश्चित रूप से होते ही हैं जो अपने विषय के सत्य को पाने के लिये सदैव प्रयत्नशील और उत्सुक होते हैं। गणितज्ञ संख्याओं का रहस्य जानना चाहता है; जीवविज्ञानी जीवन को समझने का प्रयत्न करता है; भौतिक विज्ञानी दिक्काल के बारे में सोचता और सृष्टि की उत्पत्ति को समझना चाहता है। इन सारे मौलिक प्रश्नों का उत्तर पाना बहुत कठिन है और उत्तर सीधे मिल भी नहीं सकते। कुछ गिने चुने वैज्ञानिकों में ही ऐसी बातों के लिये वक्त और धीरज होता है। यह एक अत्यन्त दुरूह मार्ग है पर उतना ही सन्तोषदायी भी। जब भी किसी को अपने विषय के किसी प्रश्न का मूल आधार प्राप्त हो जाता है तो वह ज्ञान तब तक हमें प्राप्त सारी जानकारी का स्वरूप ही बदल देता है।

ली स्मोलिन 'द ट्रबल विथ फिजिक्स' पुस्तक में (संदर्भ : करेंट साइंस, संपादकीय, ९९(५), १० सिंतबर, २०१०)

विज्ञान व्यंग चित्र

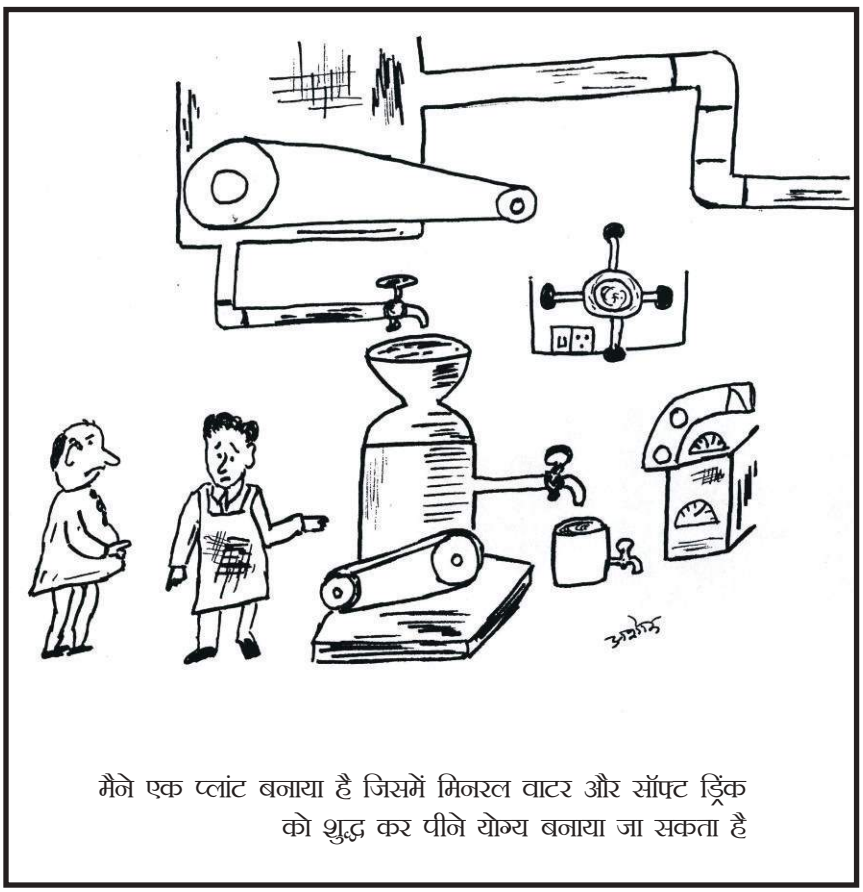

मैने एक प्लांट बनाया है जिसमें मिनरल वाटर और सॉफ्ट ड्रिंक को शुद्ध कर पीने योग्य बनाया जा सकता है

अशोक कुमार दुबे

विज्ञान कविता

पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती

पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती।
सारे जीवों को दुलराती।
जिसकी जैसी पड़े जरूरत,
उसको वह उपलब्ध कराती।।

सबको रुचिकर भोजन मिलते।
ऋतु अनुसार सभी तन ढकते।
निज–निज आवासों में रहते।
सभी जरूरत पूरी करते।
औषधि रेशे और रसायन,
दुर्लभ सामग्री मिल जाती।
पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती।।

ठण्डे बर्फीले क्षेत्रों में।
गहरे सागर की लहरों में।
घाटी औ उन्नत शिखरों में।
गाँवों में या फिर शहरों में।
धरती के कोने कोने में,
जीवन की बगिया हर्षाती।
पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती।

तैर रहे कितने ही जल में।
कितने दौड़ रहे हैं थल में।
कुछ दोनों में जल में थल में।
रंग बिरंगे पक्षी नभ में।
धरती के भीतर कुछ रहते,
वहीं जीविका है मिल जाती।।
पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती।।

गुफा–सुरंगों में कुछ रहते।
कुछ कोटर में रहते–सहते।
तिनकों से नीड़ों को बुनते।
भवनों महलों को कुछ चुनते।
सुख सुविधायें और सुरक्षा,
सबको सभी जगह मिल जाती।
पृथ्वी माँ वात्सल्य लुटाती।।

हैं भरपूर यहाँ संसाधनं
सभी जरूरत होंगी पूरन।
लिप्सा पर नही रहा नियंत्रण।
बिगड़ रहा है आज सन्तुलन।
छीज रहे संसाधन सारे,
लोलुपता है बढ़ती जाती।
पृथ्वी माँ वाल्सल्य लुटाती।

दिनेश चन्द्र शर्मा

विज्ञान वर्ग पहेली - २

1		2		3			4
		5			6		
	7						8
			9				
10		11					
					12	13	
14				15			
				16			

बायें से दांये

1. भारीपन : वह बल जिससे सृष्टि का प्रत्येक कण दूसरे को आकर्षित करता है
4. समकोण त्रिभुज में लंब और कर्ण का अनुपात : चाप के सिरों को मिलाने वाली सीधी रेखा
5. महान् भौतिक विज्ञानी (1871–1937) जिन्होंने बताया कि परमाणु का सारा धनात्मक आवेश उसके केन्द्रक में स्थित होता है।
7. दो सरल रेखाओं के मिलने से बना स्थान
9. अन्तरिक्षयान को पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण से बाहर ले जाने का साधन
10. दो स्थानों के बीच विभवान्तर (पोटेंशियल डिफरेंस) नापने का यन्त्र (अंग्रेजी)
12. खुरदुरा, जो समतल न हो
14. एक चमकीला सफेद धातु तत्व जिसका परमाणु भार 72. 59 तथा परमाणु संख्या 32 होती है।
16. एक प्राचीन भारतीय (समय लगभग ई.पू. 1400) गणितज्ञ जिनके सिद्धान्त वेदांग ज्योतिष के रूप में जाने जाते हैं।

ऊपर से नीचे

1. भारी, सौर मण्डल का सबसे बड़ा ग्रह
2. गति की दर में परिवर्तन जो इकाई समय में होता है।
3. दाब की (सीजीएस) इकाई जो 105 न्यूटन प्रति वर्ग मीटर के बराबर हो
6. फार्मिक अम्ल से बना लवण
7. एक सफेद चमकीली तत्व धातु जिसका परमाणु भार 58.9332 तथा परमाणु संख्या 27 होती है
8. तत्व धातु जिसका परमाणु भार 88.905 तथा परमाणु संख्या 39 होती है।
9. लोहे का वह अत्यन्त शुद्ध व्यावसायिक स्वरूप जो कार्बन मुक्त, कठोर होता है
10. वोल्ट इकाई में बताया जाने वाला विभवान्तर (अंगेजी)
11. बालों के रंग के लिये त्वचा में उपस्थित रंजक पदार्थ
13. वासयुक्त (पौधे अथवा पदार्थ)
15. शरीर का त्याज्य पदार्थ

रीढ़धारियों का विकासीय क्रम

मछली ! जल की रानी है, जीवन उसका पानी है।

उभयचर (एमफीबिया) ! जल – स्थलचर प्राणी है।

सरीसृप (रेपटीलिया) ! ने थल पर रहने की ठानी है।

पक्षी ! वायु जिसकी रवानी है।

स्तनधारी (एमफीबिया) ! उच्चतम कशेरूक प्राणी है,

जिनमें से, मानव ने की मनमानी है।

विज्ञान वर्ग पहेली - १ का उत्तर

1 ही	मो	2 ग्लो	बि	3 न		4 को	5 ब्रा
लि		ब		6 ल	क्स		यो
7 य	म	ल	8 न				फा
म		9 वा	ट		10 नि	हा	इ
		र्मि			षे		टा
11 प	रा	ग	ण		12 च	र्ट	
ट				13 ट	न		14 क्षा
15 ल	ता		16 ब	र्फ		17 च	र

विदेशी मेहमान

1. गोल्डन प्लोवर
2. स्टारलिंग (मैना)
3. जिरेबीज़
4. विलो टारमिगन
5. हिमालयन ग्रिफॉन
6. हिमालयन रूबीथ्रोट
7. हिमालयन मोनाल
8. छोटी कोयल
9. हिमालयन स्नो - कॉक
10. खलिहान उल्लू
11. ब्लू - जे
12. बगुले
13. स्विफ्ट
14. स्वैलो
15. बुलबुल
16. कोयल
17. फील्ड - फेयर
18. स्नो - बंटिंग
19. रेड - विंग
20. स्नाईप
21. सैंडपाइपर
22. रैबलर
23. थ्रशेज़
24. कौऐ
25. रॉबिन
26. बाज़
27. क्रेन
28. लून
29. पेलीकन (हवासील)
30. गीज (कलहंस)
31. नीलकंठ
32. टर्की

विदेशी मेहमान

33. ब्लू - बर्ड

34. तीतर

35. शिकेड

36. आर्कटिक टर्न

37. सफेद सारस

38. हाजी लगलग

39. शिवहंस

40. सुर्खाब

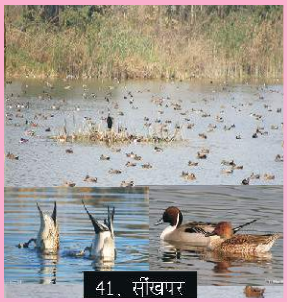
41. सींखपर

42. नीलसिर

43. भूआर

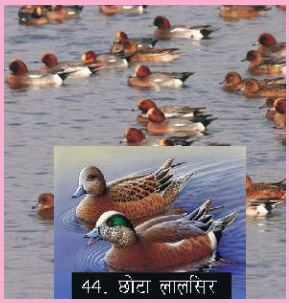
44. छोटा लालसिर

45. टोकरवाला

46. लालसिर , लालचोंच

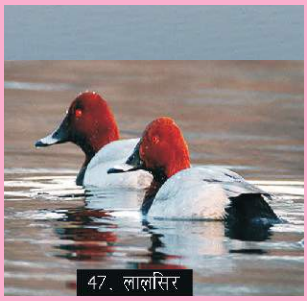
47. लालसिर

48. डुबारू

49. मर्गेन्ज़र

50. डसरी , कोलूर

51. जल कौवा , नीआर

52. पान कौवा

53. छोटा जल कौवा

54. अंजन

55. गुगरैल

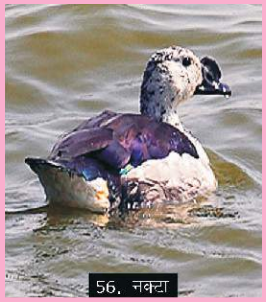
56. नक्टा

57. टिंघुर